गायत्री शक्ति उपासना

हिन्द पुस्तक भण्डार
खारी बावली, दिल्ली - 110006

गायत्री शक्ति उपासना

गायत्री शक्ति

ॐ भूर्भुवः स्वः, तत्सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि, धियो यो नः प्रचोदयात्

★ गायत्री महामंत्र के वेद-शास्त्रों, उपनिषदों और ऋषि नियों द्वारा कथित गूढ़ार्थ व गूढ़ रहस्य,

★ वेद जननी गायत्री की अलौकिक दिव्य-शक्तियों का दिग्दर्शन, गायत्री साधना से प्राप्त होने वाली भौतिक व आध्यात्मिक सिद्धियाँ एवं गायत्री के सम्बन्ध में विविध धार्मिक, साहित्यिक व राजनैतिक महान विभूतियों के गायत्री महात्म्य विषयक उद्‌गार,

★ गायत्री उपासना का सम्पूर्ण व सर्वाङ्गीण शास्त्रीय विधि-विधान, गायत्री मुद्रा, गायत्री सहस्त्रनाम, गायत्री स्तोत्र, पटल व स्तवराज आदि

★ गायत्री पुरश्चरण के लिए शास्त्रीय विधान गायत्री कल्प, न्यास, मार्जन, तर्पण तथा शापोद्धारम् आदि

★ गायत्री महायज्ञ के लिए व्यवस्था व अनुष्ठान विषयक शास्त्रीय विधान, संध्याषटकर्म, पंचवेदी स्थापना, देवपूजन, आहुतियां, पूर्णाहुति व विसर्जन आदि।

वेद जननी गायत्री की दिव्य शक्तियों का दिग्दर्शन

गायत्री शक्ति

गायत्री के सम्बन्ध में वेदों, शास्त्रों, उपनिषदों एवं ऋषियों द्वारा वर्णित सारगर्भित तथा सर्वाङ्गीण ज्ञान

लेखक :
पं० अमोलचन्द्र शुक्ल

हिन्द पुस्तक भण्डार
खारी बावली, दिल्ली - 110006

ॐ भू र्भुवः स्वः
तत्स वितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात्

प्रकाशकीय

हमारे प्राचीन धार्मिक ग्रन्थ वेद, शास्त्र, पुराण, आदि मानव मात्र के कल्याण, सुख, शांति और आध्यात्मिक तथा भौतिक उन्नति के असंदिग्ध अवलम्ब हैं। आज के इस नैतिक पतन के युग में, जब कि विश्व के प्रत्येक कोने में पापाचार बढ़ रहे हैं, देवताओं और ऋषि-मुनियों की तपोभूमि भारत वर्ष भी पापाग्नि की प्रचण्ड ज्वालाओं से झुलस रहा है। वह धरती, जहाँ पवित्र गंगा कीध ारा बहती है, जहाँ जन्म लेने के लिए देवता भी तरसते थे, जो भूलोक का स्वर्ग माना जाता था, और जहाँ झूठ, दम्भ, चोरी हिंसा, अनाचार और अत्याचार का नाम न था, उसी भारत देश के वासी आज कलियुग के प्रभाव से अज्ञानांधकार में भटक कर किस प्रकार पापाचारों में लिप्त हो रहे हैं, कैसी अधोगति को प्राप्त हो रहे हैं, इसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं। क्योंकि—'प्रत्यक्षं किम् प्रमाणम्' ? किन्तु, फिर भी एक बात हम सब अनुभव करते हैं, कि विश्व के अन्य भूभागों के प्राणियों का जितना पतन हो रहा है, उतना अभी भारतवासियों का नहीं हुआ। सम्भवत: इसका एक ही कारण है, कि हमारे रक्त में अभी भी पूर्वजों की सात्विकता, धर्म-परायणता, सदाचारिता और भगवत् भक्ति का प्रभाव चला आ रहा है। अस्तु, पतन के इस गहन अन्धकार में भी आशा की एक क्षीण प्रकाश-किरण दिखाई दे रही है, कि यदि भारतवासियों को उचित मार्ग-दर्शन प्राप्त हो सके, श्रेष्ठ आचार विचार और आध्यात्मिक उन्नति के लिए धर्म की यथोचित शिक्षा प्रदान की जाय पूर्वजों की महान आध्यात्मिक उपलब्धियों और ज्ञान के अक्षुण्य भण्डार के दिग्दर्शन कराए जाएँ, तो वे पतन-मार्ग को छोड़कर शीघ्र ही सुपथगामी बन सकते हैं।

इसी आशापूर्ण उद्देश्य को सम्मुख रखकर मैं अपने प्रिय देश-वासियों के उद्धार, उत्थान और कल्याण के लिए चिरकाल से सतत् प्रयत्नशील हूँ, और प्रस्तुत पुस्तक भी उसी प्रयास की एक कड़ी है। यद्यपि हमने अपनी संस्था द्वारा विज्ञान, टैक्नोलोजी, कृषि आयुर्वेद, चिकित्सा, इण्डस्ट्रियल, संगीत, इत्यादि

—

जीवन की भौतिक उन्नति में सहायक विषयों की भी असंख्य पुस्तकें प्रकाशित की हैं, तथापि धार्मिक ग्रन्थों के प्रकाशन के प्रति भी हम निरन्तर सतर्क और सचेष्ट रहे हैं, क्योंकि मनुष्य भौतिक साधनों की उन्नति चाहे कितनी भी कर ले, आध्यात्मिक उन्नति बिना वह सब व्यर्थ ही है। सुख, शांति और सद्गति (मोक्ष) प्राप्त नहीं हो सकती। भौतिक उन्नति आध्यात्मिक उन्नति के बिना उसके पतन का ही कारण सिद्ध होती है,

हमारे प्राचीन धार्मिक ग्रन्थ आध्यात्मिक ज्ञान के अनन्त और अक्षुण्य भण्डार हैं, जो अकिंचन से अकिंचन व्यक्ति को भी महान ज्ञानी और सदाचारी बना सकते हैं, जीवमात्र के भौतिक संतापों को दूर कर उसे चिर सुख, शांति और मुक्ति प्रदान करने में सक्षम हैं। ऐसा महान, गूढ़, ज्ञान-पूर्ण आध्यात्मिक साहित्य विश्व की अन्य किसी भाषा में प्राप्य नहीं। यही कारण है, कि भौतिक दृष्टि से सर्वाधिक उन्नत, धनी, ऐश्वर्यशाली और शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र अमेरिका के लोग आज मानसिक रूप से इतने दुःखी और संतप्त हैं, सामाजिक रूप से उनका जीवन इतना पतित और घृणित है कि वे उससे मुक्त होने के लिए छटपटा रहे हैं किन्तु उन्हें मुक्ति का कोई मार्ग दिखाई नहीं पड़ता है। अब वे आध्यात्मिक क्षेत्र में शिरोमणि विश्वगुरु भारत की ओर अपने उद्धार के लिए करुणा-दृष्टि से निहार रहे हैं, किन्तु दुर्भाग्य-वश इस समय भारतवासी अपनेप्राचीन धर्म, कर्म, शिक्षा-दीक्षा, और गौरव-गरिमा सब कुछ भूलकर ऐन-कैन प्रकारेण धन अर्जित कर भौतिक ऐश्वर्य को ही सुख मानकर, अपने पूर्वजों के बताए हुए सन्मार्ग को छोड़कर, उसी पतनगर्त की ओर दौड़ रहे हैं, जिसमें पड़े हुए पाश्चात्य राष्ट्र उससे निकलने के लिए आकुल हो रहे हैं। तथापि भारतभूमि कभी भी विद्वानों और महापुरुषों से नितान्त शून्य नहीं हुई है, अतः स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द, रवीन्द्रनाथ टैगौर, महात्मा गान्धी जैसी महान विभूतियाँ आज भी उन देशों में आदर की दृष्टि से देखी जाती हैं, जिन्होंने इस युग में भी न केवल भारत, वरन् समस्त विश्व का, सत्य, अहिंसा सदाचार और सद्ज्ञान का उपदेश देकर तथा स्वयं व्यवहारिक रूप से अपने जीवन में इन्हें अपनाकर, पथ-प्रदर्शन किया है, मानव-मात्र की समानता, और विश्व-बन्धुत्व की भावना का प्रसार कर जातिवाद, राष्ट्रीयता, अमीर गरीब और

ऊँच-नीच का भेद-भाव मिटाने के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया और समस्त विश्व को कल्याण, सुख व शांति का मार्ग दरशाया।

हमारे महान धार्मिक ग्रन्थों और ऋषि-मुनियों व आचार्यों के मतानुसार 'गायत्री' वेदों की जननी हैं, और वेद आध्यात्मिक तथा भौतिक उन्नति के लिए ज्ञान-विज्ञान के अनन्त भण्डार हैं, अस्तु बुद्धि, विद्या सुख समृद्धि, उन्नति, तथा मुक्ति दायिनी अनन्त शक्ति-रूपा जगज्जननी 'गायत्री माता' की उपासना और भक्ति द्विज-मात्र के कल्याण का एक असंदिग्ध साधन है। इसीलिए गायत्री माता की महान शक्ति और सामर्थ्य का लोगों को दिग्दर्शन कराने तथा गायत्री की उपासना व साधना द्वारा अपने जीवन को समुन्नत, सुखी, तथा सत्-पथ गामी बनाने की प्रेरणा प्रदान करने हेतु मेरी चिरकाल से आकांक्षा थी, कि तद्विषयक एक उच्चकोटि की सारगर्भित, ज्ञान पूर्ण और कल्याणकारी पुस्तक प्रकाशित करूँ। माँ की कृपा से आज वह अभिलाषा पूर्ण हुई, और पुस्तक आपके हाथों में है।

इस पुस्तक में श्री शुक्ल जी ने गायत्री विषयक अगणित प्राचीन ग्रन्थों का खोजपूर्ण अध्ययन करके समस्त ग्रन्थों का सार संग्रहीत कर दिया है यानी 'गागर में सागर' भर दिया है। हमें पूर्ण आशा व विश्वास है कि पाठकगण पुस्तक की सराहना किए बिना न रह सकेंगे।

—प्रकाशक

'आवश्यक सूचना'

'गायत्री शक्ति' नामक यह पुस्तक गायत्री विषयक निम्न पाँच लघु पुस्तकों का संग्रह है :—

१. गायत्री मंत्र के गूढ़ अर्थ, २. वेदमाता गायत्री, ३. गायत्री पुरश्चरण विधान, ४. गायत्री पूजन विधि तथा ५. गायत्री यज्ञ विधान।

दो शब्द

गायत्री महत्ता से सम्बन्धित यह पुस्तक जनता जनार्दन की सेवा में प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार आनन्द और सन्तोष की अनुभूति हो रही है। ऐसा प्रतीत हो रहा है, मानो यह शुभ कार्य कर मेरा जीवन यथार्थ रूप से सुफल हो गया। मैं परमप्रभु परमात्मा का तथा जगज्जननी गायत्री माँ का हृदय से कृतज्ञ हूँ, जिसने मुझ अकिंचन को यह सत्कार्य करने का अवसर प्रदान कर अपनी असीम अनुकम्पा का वरद्-हस्त मेरे सिर पर रख दिया। धन्य है तू प्रभु ! और धन्य है तू करुणामयी माँ ! तुम दोनों अखिल विश्व के पालनकर्त्ता हो ! परम स्नेह और दया के सागर हो ! तुम्हारे चरण कमलों में नत-मस्तक हो मैं सहस्त्र बार प्रणाम करता हूं। आचार्यों ने कहा है—

'गायत्री यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः'

अटल सत्य वाक्य है, ध्रुव सत्य है। जिस व्यक्ति ने गायत्री की महाशक्तियों को नहीं जाना, नहीं समझा, उसका जीवन भर का परिश्रम वृथा है। गायत्री माता के प्रति मेरे मन में बाल्यकाल से ही अटूट श्रद्धा रही है, और तद्विषयक अनेक ग्रन्थों का यथा-समय मनन अध्ययन करता रहा हूं। अस्तु मेरी चिर-अभिलाषा थी, कि गायत्री सम्बन्धी एक पुस्तक लिखकर लोगों को जगज्जननी का दिग्दर्शन कराऊँ और उन्हें माँ के चरणों में नत-मस्तक हो अपने जीवन का

कल्याण करने की प्रेरणा प्रदान करूँ। यूं भी ब्राह्मण कुल में जन्म लेने के कारण संस्कारगत भावना थी, कि लोगों को सद्ज्ञान की शिक्षा देकर ब्राह्मण धर्म का पालन कर सकूं, किन्तु परिस्थितियों वश आजीविका के चक्कर में पड़ा रहा। अन्त में अपने कर्त्तव्य पालन का एक मात्र यही मार्ग समझ पड़ा, कि पुस्तकें लिखकर जनता को शिक्षा-दान करूँ, ज्ञान और धर्म का प्रसार करूँ, कुछ विश्व का कल्याण करूँ, सो गत बीस वर्षों से कर रहा हूं और प्रभु कृपा से अब तक सर्वोपयोगी लगभग तीस पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इच्छा तो यही है कि जीवन की अन्तिम श्वास तक इसी प्रकार प्राणिमात्र की सेवा करता रहूं, किन्तु भविष्य ईश्वरेच्छा आधीन है। इस अल्पज्ञ अकिंचन सेवक ने तो जितना कुछ ज्ञान ग्रन्थों से अर्जित किया है, वह आप लोगों की सेवा में समर्पित कर देना ही मेरे जीवन का एक मात्र ध्येय है।

—अमोल चन्द्र शुक्ल

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ

पञ्चम् खण्ड

गायत्री यज्ञ विधान

इस पुस्तक के सम्बन्ध में

दो मान्य विद्वानों की सम्मतियाँ

हिन्दू समाज के जीवन में गायत्री मंत्र का स्थान बहुत ऊँचा, महत्वपूर्ण और पवित्र है। यह मंत्र अपने भीतर अनेक गूढ़ार्थ और जीवन के लिए प्रेरणाएँ संजोये हुए है। इसकी अनेक व्याख्याएँ हुई हैं जीवन में व्याप्त इसकी अनेक उपयोगिताओं की ओर संकेत किये गये हैं। 'गायत्री शक्ति' नामक इस पुस्तक में लेखक श्री अमोल चन्द्र शुक्ल ने गायत्री मंत्र के बहु-आयामी अर्थों की बहुत सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत की है। इसके लिए इन्होंने अनेक विद्वानों और ग्रन्थों का सहारा लिया है। जीवन के विविध मांगलिक और आध्यात्मिक प्रसंगों तथा अनुष्ठानों में गायत्री के महत्व तथा उसकी उपयोग विधि पर भी लेखक ने अच्छा प्रकाश डाला है। निश्चय ही 'गायत्री' मंत्र पर यह एक बहुत अच्छी और स्वागत योग्य पुस्तक है।

—डॉ० रामदरश मिश्र
रीडर, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में गायत्री मन्त्र का महत्त्वपूर्ण स्थान माना जाता रहा है। चौबीस अक्षरों के इस मन्त्र में अचिन्त्य शक्ति है तथा इसमें वेदों, उपनिषदों और पुराणों का ज्ञान-तत्त्व संजोया हुआ है, इस आस्था के साथ भारत के सहस्रों सहस्र श्रद्धालु जन इस मन्त्र का जाप अनेक वर्षों से करते रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक में विद्वान् लेखक ने इस महामन्त्र के विषय में विस्तार से सम्पूर्ण जानकारी दी है। उनकी यह पुस्तक निःसंदेह मानव मन की पवित्रता तथा आस्था की दृढ़ता में सहयोग प्रदान करेगी।

—डॉ० गोकुलचन्द्र जैन
प्राध्यापक, दर्शन विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

★ विषय-प्रवेश

जगज्जननी वेदमाता गायत्री की महिमा से वेद, शास्त्र, पुराण, उपनिषद्, स्मृतियां आदि प्राचीन धार्मिक ग्रन्थ भरे पड़े हैं। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, समस्त देवतागण, ऋषि, मुनि और कोटि-कोटि ब्राह्मण चिरकाल से गायत्री की उपासना करते आए हैं, और जब तक सृष्टि का अस्तित्व रहेगा, आद्याशक्ति गायत्री समस्त देवों में शिरोमणि रूप से पूजित होती रहेंगी। क्योंकि गायत्री को 'ब्रह्म' की शक्ति माना गया है, और आदिकाल से जो भी भक्त इस महा-शक्ति की शरण में आया है, वह निर्भय और सर्वसुख सम्पन्न हो जीवन-यापन करते हुए अन्त में परमपद को प्राप्त हुआ है। गुरु वशिष्ठ को गायत्री-सिद्धि द्वारा ही ब्रह्मदण्ड प्राप्त हुआ था, जिसकी अनन्त ब्रह्मशक्ति द्वारा ही उन्होंने राजा विश्वामित्र की अतुल बलशाली सेना को अपने आश्रम से मार भगाया था, और ब्रह्मर्षि वशिष्ठ की उस अद्भुत दैव-शक्ति को देख कर ही विश्वामित्र के मुख से निकला था—

'धिक बलम् क्षत्रिय बलं ब्रह्म बलं परम बलं'

अर्थात्—क्षत्रिय बल को धिक्कार है, ब्रह्म बल ही श्रेष्ठ बल है और फिर उन्हें ब्रह्मबल प्राप्त करने की ऐसी लगन लगी कि राजपाट सुख वैभव सब त्यागकर उन्होंने साठ हजार वर्ष तक कठोर तप किया और अन्त में ब्रह्मर्षि पद प्राप्त किया। कहने का तात्पर्य यह कि गायत्री की जिसने भी श्रद्धा भक्ति और लगन से उपासना की, उसे ही अनन्त दिव्य शक्तियां प्राप्त हुईं, तथा भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त हुए। द्विज मात्र के लिए तो गायत्री से बढ़कर अन्य कोई देव नहीं।

किन्तु—एक बात मुख्य रूप से ध्यान में रखने की है। गायत्री मन्त्र को ऋषि मुनियों ने मन्त्रराज स्वीकार किया था, इसके प्रत्येक वर्ण में अनन्त

शक्ति निहित है, अस्तु गायत्री मन्त्र का उच्चारण नितान्त शुद्ध रूप में तथा शुद्ध ढंग से किया जाना चाहिए। तभी उसके द्वारा मनुष्य का कल्याण हो सकता है। दूसरे गायत्री की उपासना, जप, यज्ञ आदि भी शास्त्रोक्त विधि-विधान के अन्तर्गत ठीक प्रकार से ही किए जाने चाहिए, अन्यथा उपासना निष्फल हो जाती है। इसी हेतु इस पुस्तक में गायत्री की दैनिक उपासना विधि, गायत्री पुरश्चरण विधि विधान, गायत्री यज्ञ विधान आदि का भाषा टीका सहित सविस्तार वर्णन किया गया है ताकि द्विज मात्र उचित ढंग से गायत्री माता की उपासना कर सके।

गायत्री मन्त्र के अर्थ व्याख्याएँ आदि भी विविध विद्वानों ने अपनी २ बुद्धि अनुसार विविध प्रकार से की हैं, किन्तु एक निष्कर्ष से प्रायः सभी सहमत होते रहे हैं, कि गायत्री की शक्ति, गायत्री का महात्म्य और गायत्री का गौरव सर्वोपरि है। परमात्मा की कण २ में व्याप्त एक मात्र शक्ति गायत्री ही तो है, जो विविध रूपों में इस सृष्टि का, प्रत्युत सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का संचालन कर रही है। इस तथ्य का निरूपण इस पुस्तक में विभिन्न विद्वानों द्वारा तथा विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों के उद्धरणों द्वारा करने का प्रयास किया गया है। साथ ही साथ गायत्री मन्त्र के अनेकानेक गूढ़ार्थ तथा उसके शब्द शब्द में निहित गुप्त शक्तियों का भी रहस्योद्घाटन किया गया है।

आशा है, पाठकगण ध्यानपूर्वक पुस्तक का गहन अध्ययन कर तथा गायत्री उपासना को अपने जीवन का नितांत आवश्यक और अभिन्न अंग मानकर अपने व दूसरों के जीवन का कल्याण करेंगे। मेरी कामना है कि माता गायत्री की सब पर कृपा-दृष्टि सदा बनी रहे।

गायत्री मन्त्र के गूढ़ अर्थ

★ गायत्री मन्त्र की व्याख्या, शब्दार्थ, भावार्थ तथा गूढ़ार्थ सहित

★ गायत्री मन्त्र के गूढ़ रहस्य, गुप्त शक्तियाँ और अनन्त लाभ

★ गायत्री की महिमा, महात्म्य तथा अनेक आचार्यों महात्माओं व विद्वानों की सम्मतियां

गायत्री मन्त्र के गूढ़ अर्थ

गायत्री स्तुति

यन्मंडलं दीप्तिकरं विशालम, रत्नप्रभम तीव्र मनादि रूपम् ।
दारिद्रय दुःखक्षय कारणं चः, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम ।

अर्थात्—जिसका मण्डल प्रकाशकारी विशाल रत्नों की प्रभा वाला तेजस्वी अनादि स्वरूप है, जो दरिद्रता और दुखों का नाश करने वाला है, वह परम पूजनीय सविता मुझे पवित्र करे।

यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितम, विप्रैः स्तुतं मानव मुक्ति कोविदम् ।
तं देव देवं प्रणमामि सूर्यम, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम ।

अर्थात्—जिसके मण्डल की देवतागण भी पूजा करते हैं, विप्रगण स्तुति करते हैं, जो मनुष्य मात्र का मुक्तिदाता है उस देवों के देव सूर्य को मेरा प्रणाम है, वह परम पूजनीय सविता मुझे पवित्र करे।

यन्मण्डलं ज्ञान घनत्व गम्यं, त्रैलोक्य पूज्यं त्रिगुणात्म रूपम् ।
समस्त तेजोमय दिव्य रूपं, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम ।

अर्थात्— जिसका मण्डल ज्ञान के घनत्व का ज्ञाता है, तीनों लोकों में जिसकी पूजा होती है और त्रिगुणात्म रूप है। जिसका दिव्य रूप सम्पूर्ण तेजवान है, वह परम पूजनीय सविता मुझे पवित्र करे।

यन्मण्डलं व्याधि विनाशदक्षम ऋग्ग यजुः साम सुसम्प्रगीतम् ।
प्रकाशित येन च भूर्भुवः स्वः, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम ।

अर्थात्—जिसका मण्डल समस्त व्याधियों को नष्ट करने वाला है, ऋग, यजु और सामवेद जिसका गुणगान करते हैं, जो भूलोक, अन्तरिक्ष तथा स्वर्ग तक प्रकाशित है, वह परम पूजनीय सविता मुझे पवित्र करे।

यन्मण्डलं विश्व सृजां प्रसिद्धम, उत्पत्ति रक्षा प्रलय प्रगल्लभम् ।
यस्मिन् जगत् संहरतेऽखिलं च:, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम ।

अर्थात्—जिसका मण्डल विश्व का सृजन करने वाला है, उत्पत्ति, रक्षा तथा संहार करने में जो पूर्ण समर्थ है। जिसमें यह सम्पूर्ण जगत लीन हो जाता है, वह परम पूजनीय सविता मुझे पवित्र करे।

यन्मण्डलं सर्व गतस्य विष्णो:, आत्मा परमधाम विशुद्ध तत्वम् ।
सूक्ष्मातिगैर्योगपथानुगम्यम, पुनातु मा तत्सवितुर्वरेण्यम ।

अर्थात्—जिसका मण्डल सर्वव्यापक विष्णु स्वरूप, आत्मा का परमधाम और विशुद्ध तत्व रूप है, जो योग पथ के अति सूक्ष्म भेद का भी ज्ञाता है वह परम पूजनीय सविना मुझे पवित्र करे।

यन्मण्डलं ब्रह्म विदो वदन्ति: गायन्ति यच्चारण सिद्ध संघ: ।
यन्मण्डलं वेद वेद: स्मरन्ति:, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम ।

अर्थात्—जिसके मण्डल की ब्रह्मविद् भी वन्दना करते हैं तथा जिसका गुणगान विद्वान तथा सिद्धगण भी करते हैं। जिसके मण्डल का वेदज्ञाता भी सदा ध्यान करते हैं, वह परम पूजनीय सविता मुझे पवित्र करे।

ब्रह्म की आद्याशक्ति स्वयं ब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री को वेदों में सविता कहा गया है। सविता सूर्य को भी कहते हैं। अनेक स्थानों पर गायत्री को सावित्री कहकर भी सम्बोधित किया गया है। भगवान सविता (सूर्य) और सावित्री, ब्रह्म और ईश्वर वस्तुत: सब एक ही हैं। गायत्री की उपासना चाहे भगवान सविता रूप में की जाय, अथवा वेदमाता गायत्री (सावित्री) के रूप में, उसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता और न ही किसी प्रकार के भ्रम में पड़ना चाहिए। ईश्वर न पुरुष है और न स्त्री, वह तो एक महाशक्ति है, अस्तु अपनी २ श्रद्धा और भावना के अनुसार जिसको जैसा रूप

भाया, उसने उसी रूप में इस महाशक्ति की स्तुति और उपासना की। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी रामायण में कहा है :—

जाकी रही भावना जैसी, प्रभुमूरत देखी तिन तैसी।

अस्तु, हे ब्रह्म की महाशक्ति गायत्री ! तुझे मेरा शत्शत् प्रणाम है।

गायत्री मन्त्र की व्याख्या

जैसा कि मैं पहले निवेदन कर चुका हूं, गायत्री मन्त्र वह महामत्र है, जिसमें अनन्त शक्तियाँ छुपी हुई हैं। गायत्री मन्त्र एक ऐसा अथाह महासागर है, जिसके गर्भ में ज्ञान के असंख्य रत्न छुपे हुए हैं। चौबीस अक्षरों का यह महामन्त्र अपने आप में समस्त वेदों पुराणों और उपनिषदों का ज्ञान तत्व संजोए हुए है। इसके एक २ अक्षर में ईश्वरीय ज्ञान के ऐसे गूढ़ रहस्य निहित हैं, कि चिरकाल से वड़े २ विद्वान, आचार्य, ऋषि मुनि, ब्राह्मण और तपस्वी इसकी थाह नहीं पा सके हैं। उन्होंने अपनी २ बुद्धि और योग्यता अनुसार जितना ही इस महामन्त्र का मन्थन किया है अर्थात् चिन्तन और मनन द्वारा इसके अर्थों और रहस्यों को समझने का प्रयास किया है, उतने ही नए २ अर्थ, नई २ व्याख्याएं, नए २ भेद और नए २ भाव प्रकट हुए हैं। अस्तु गायत्री मन्त्र की व्याख्या करना मुझ अकिंचन की बुद्धि के सर्वथा परे है। तथापि आप लोगों की जिज्ञासा-तृप्ति हेतु अनेक मान्य विद्वानों द्वारा की गई कुछ सारगर्भित व्याख्याएं यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूं। ताकि आप लोग गायत्री मंत्र के परम कल्याणकारी, शक्तिदाता, ज्ञान और सुख शान्तिप्रदायक दिव्य ज्ञान-तत्वों का थोड़ा सा आभास पा सकें।

गायत्री मन्त्र का शब्दार्थ तथा भावार्थ

ॐ भूर्भुवः स्वः, तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात् ।

ॐ परब्रह्म अर्थात् परमात्मा या ईश्वर जो समस्त विश्व का
रचयिता और नियन्ता है ।

भूः—पृथ्वी (भूलोक)   भुवः—अन्तरिक्ष (आकाश)

स्वः—स्वर्ग (स्वर्गलोक)   तत्—वह अर्थात् उस

सवितुः—सूर्य (भगवान सूर्य नारायण), जो कि महा तेजवान
प्रकाशवान और

वरेण्यम्—उत्तम, श्रेष्ठ   भर्गः—तेज   देवस्य—देव का

धीमहि—ध्यान करता हूं, अथवा धारण करता हूं ।

धियो—बुद्धि को   यो—जो   नः—हमारी

प्रचोदयात्—प्रेरित करे ।

अर्थात्—हम पृथ्वी अन्तरिक्ष तथा स्वर्ग, तीनों लोकों में प्रकाश फैलाने वाले भगवान सूर्य नारायण के उस श्रेष्ठ तेज का ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धि को प्रेरित करें।

अर्थ भेद—अनेक विद्वानों ने इस मन्त्र का शब्दार्थ इस प्रकार किया है :—

ॐ—ब्रह्म   भूः—प्राणस्वरूप   भुवः—दुःखनाशक

स्वः—सुखस्वरूप   तत्—उस   सवितुः—तेजस्वी, प्रकाशवान

वरेण्यं—श्रेष्ठ   भर्गः—पापनाशक या अज्ञाननाशक

देवस्य—दिव्य स्वरूप, अथवा देने वाले को,

धीमहि—धारण करें   धियो—बुद्धि   यो—जो

नः—हमारी   प्रचोदयात्—प्रेरित करे ।

अर्थात्—हम उस तेजस्वी, प्राणस्वरूप, दुख और पाप नाशक, सुख स्वरूप दिव्य-रूप ब्रह्म को धारण करते हैं, जो हमारी बुद्धि

को प्रेरणा प्रदान करता है।

भावार्थ-- इस प्रकार भिन्न २ विद्वानों द्वारा भिन्न २ अर्थ लगाए गए है, किन्तु शाब्दिक अर्थों के जाल से पृथक रहकर यदि हम इस महामन्त्र के भावार्थ में जाएं, तो प्रतीत होगा कि सब अर्थों का एक ही भाव है। वह यह कि 'हम उस महाशक्ति पुञ्ज का ध्यान (चिन्तन) करते हैं, जिसके शक्ति-प्रकाश से अखिल विश्व का कण २ प्रकाशवान हो रहा है और जो हमारी बुद्धि को सन्मार्ग (ब्रह्म को प्राप्त करने वाला सत्य व श्रेष्ठ मार्ग) की ओर प्रेरित करता है अर्थात् आत्मा को परमात्मा में लीन होने की प्रेरणा देता है। चूंकि कर्मों के फलानुसार प्रत्येक जीव की आत्मा असंख्य योनियों में जन्म लेने और कर्मफल भोगने के लिए ईश्वरीय विधान अनुसार बाध्य होती है, तथा केवल श्रेष्ठ शुभ कर्म करने पर ही वह आवागमन के चक्र से मुक्त होकर परमात्मा में लीन हो पाती है, अतः हमारी बुद्धि को श्रेष्ठ, शुभ धर्म-कर्म करने की प्रेरणा देकर मुक्ति-मार्ग दरशाने वाली उस 'ब्रह्मशक्ति' का चिन्तन करना ही इस मन्त्र की मूल भावना है।

अब प्रश्न उठता है कि उस महाशक्ति का किस स्वरूप में चिन्तन किया गया है। सो अपनी २ भावनानुसार किसी ने सूर्य भगवान के रूप में ध्यान किया है, किसी ने तेज-स्वरूप ब्रह्म के रूप में, किसी ने माता गायत्री के रूप में और किसी ने परमात्मा स्वरूप आत्मा के रूप में। सविता सूर्य को भी कहते हैं, सविता ईश्वर को भी कहते हैं, सविता गायत्री के लिए भी प्रयोग किया जाता रहा है, तथा सविता ब्रह्म की शक्ति के लिए भी धर्म ग्रन्थों में आचार्यों द्वारा प्रयुक्त हुआ है। अस्तु यह अनेकार्थी शब्द भावना के अनुसार अनेक रूपों में और अनेक प्रकार से प्रयुक्त हुआ है, किन्तु गहराई में उतर कर यदि विचार किया जाय, तो सबके मूल में भावना एक ही पाई जाती है, अर्थात् ईश्वर की अनन्त शक्ति। चूंकि ईश्वर का कोई रूप

नहीं है, और ईश्वर प्रत्येक जड़चेतन के रूप में हमें दिखाई देता है, उसकी अनन्त शक्ति विश्व के कण २ में व्याप्त है। ईश्वर को किसी ने देखा नहीं, किन्तु वह अन्धे को भी प्रतिक्षण दिखाई देता है, ऐसी लक्ष्य-अलक्षित महाशक्ति का चिन्तन-आराधन अपनी २ भावना, श्रद्धा और विश्वास के अनुसार प्रत्येक मनुष्य करता है।

'सूर्य' परमात्मा की एक ऐसी शक्ति के रूप में हमें दिखाई दे रहा है, जो संसार के प्रत्येक जड़-चेतन को प्राण देता है, जीवन देता है, सृष्टि का पालन करता है, सबका कल्याण करने वाला है। यदि एक क्षण के लिए भी सूर्य का अस्तित्व समाप्त हो जाय, उसकी शक्ति नष्ट हो जाय, तो सारी सृष्टि का महाविनाश हो जाय। अस्तु परमात्मा की उस दिव्य-शक्ति का, उस विश्व पालक कल्याणकारी स्वरूप का वास्तविक दर्शन हमें 'सूर्य' के रूप में होता है, अस्तु असंख्य जन सूर्य को ही परमात्मा का प्रतीक मानकर वन्दना करते हैं। यद्यपि मनुष्य की बुद्धि आत्मबल को पहिचान चुकी है, और इसी लिए उसकी कल्पना सूर्य से भी ऊपर उस महाशक्ति (परमात्मा) तक भी पहुँच चुकी है, जो ऐसे कई सहस्र ब्रह्माण्डों और सूर्यों का रचयिता, नियामक, निर्देशक तथा पालक है, तथापि वह अजन्मा, अरूपा, अद्रष्टा, अकल्पनीय, अगम्य और अनन्त होने के कारण मनुष्य मात्र की बुद्धि से परे है। इसलिए मनुष्य ने उसकी शक्ति के एक अंश-रूप 'सूर्य' को ही उसका प्रतीक मानकर (जोकि हमें आँखों से प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है) उसकी स्तुति, आराधन और चिन्तन किया है।

जैसे कि रात्रिकाल में आजकल शहरों में बिजली के प्रकाश से घर २ गली २ प्रकाशित होती है, उस बिजली का ध्यान करते हुए प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में बिजली का जगमगाता हुआ बल्ब या ट्यूब (Tube Light) उभर आती है। उस बिजली की शक्ति को उत्पन्न करने वाले जनरेटर अथवा जिस पानी से जनरेटर बिजली पैदा करता है, उस पानी, नदी, जलाशय या बाँध की कल्पना

सामान्यतः कोई नहीं करता। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति ने वह बिजली की शक्ति उत्पन्न करने वाला यन्त्र (जनरेटर) अथवा वह बाँध जलाशय और उद्गम स्थल देखा नहीं होता। उसने तो जलते हुए बल्व या ट्यूब के रूप में ही विजली की शक्ति को देखा है, अस्तु वह विद्युत-शक्ति का प्रतीक उसी को मानता है, और सामान्यतः उसी की कल्पना करता है। यूँ जब वह गहराई में उतरकर विचार करता है, तो सोचता व कल्पना करता है कि इसी विजली की शक्ति से बड़ी २ मशीनें चलती हैं, कल कारखाने चलते हैं, रेलें दौड़ती हैं, रेडियो और टेलीविज़न चलते हैं। इन सब में भी बिजली की ही शक्ति दिखाई देती है, फिर वह यह भी जानता है, कि इस बिजली का उद्गम-स्रोत दूर किसी बाँध या नदी जलाशय आदि पर है, किन्तु उसकी बुद्धि जितनी ही गहराई में उतरती जाती है, नए २ प्रश्न सामने आते जाते हैं, कि उस जलाशय के जल में वह शक्ति कहाँ से आई? जल क्या है? जल में वह शक्ति किस प्रकार छुपी हुई है? जल तो हमें जीवन देता है, उसे हम नित्य पीते हैं, बिना जल हम जीवित नहीं रह सकते, अस्तु जल में व्याप्त यह अद्भुत शक्ति न केवल प्रकाश देने वाली शक्ति है, अथवा न अपनी शक्ति से बड़ी २ मशीनें चलाने वाली ही है, अथवा न केवल दृश्यों व स्वर-लहरियों को नियंत्रित ढंग से वायु मण्डल में से ग्रहणकर हमारे सम्मुख प्रकट करने वाली ही है, वरन् यह तो जीवनी शक्ति देने वाली भी है, साथ ही स्पर्श मात्र से प्राण हरने वाली भी है, तनिक सी चूक हो जाय, तो थोड़ी सी देर में ही शहर के शहर भस्मीभूत कर देने वाली विनाशक शक्ति भी इसमें है, इत्यादि २ गुप्त रहस्य प्रकट होते जाते हैं और अन्त में हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं, कि सूर्य भी परमात्मा की ही शक्ति का एक अंश है, विद्युत भी उसी की अनन्त शक्ति का एक अंश रूप है, जल, अग्नि, आकाश, वायु सब उसी सृष्टिकर्ता परमेश्वर की ही शक्तियाँ हैं, अस्तु हमारे धर्माचार्यों

ने इन सभी को देवता अर्थात् पूजनीय माना है, यानी ये सब उसी महाशक्ति के प्रतीक-रूप हैं, और अपनी २ श्रद्धा भावना अनुरूप हम उसका किसी भी रूप में चिन्तन करें, ध्यान अवश्य करें। चूँकि वे जानते थे कि एक सामान्य मनुष्य के लिए बिना किसी ऐसे सगुण स्वरूप को प्रतीक मानें, जिसे न वह देख सके, न सुन सके, न स्पर्श कर सके और न सूँघ सके, अथवा न हीं चख सके अर्थात् अपनी इन्द्रियों द्वारा जिसका आभास न पा सके, ऐसे प्रतीक बिना निर्गुण रूप ब्रह्म का चिन्तन करना बड़ा दुष्कर है, इसीलिए परमात्मा के प्रतीक स्वरूप अगणित देवताओं का सगुण और साकार रूप में वर्णन किया गया है। उपरान्त किसी ने परमात्मा को पिता रूप में समझा, किसी ने माता रूप में उसके वात्सल्य की अनुभूति की। किसी ने दास बनकर उसे स्वामी के रूप में माना, तो किसी ने सखाभाव से उसे मित्र के रूप में जाना। किसी ने पति के रूप में उसे अपने अन्तस्तल में छुपा हुआ अनुभव किया, तो किसी ने छोटे से बालक के रूप में उसकी कल्पना कर उसे पुत्रवत् स्नेह किया। किन्तु सच्ची भावना से जिसने जिस रूप में उसे माना, वह घट २ वासी अन्तर्यामी 'ब्रह्म' उसे उसी रूप में प्राप्त हुआ।

कहने का तात्पर्य यह, कि गायत्री मन्त्र के भिन्न २ विद्वानों द्वारा भिन्न २ अर्थ किए जाने पर भी उसके मूल में एक ही भाव छुपा हुआ है। ईश्वर का ध्यान करना, उसकी उपासना करना, उसका कृतज्ञ होना, उसका अनुसरण करना, उसके अनुकूल रहना और अन्त में उसे प्राप्त करना अर्थात् उसी में लीन हो जाना और चूँकि वह सच्चिदानन्द स्वरूप है, अर्थात् उसमें लीन होकर ही जीव मात्र की आत्मा को सच्चा सुख और शान्ति प्राप्त होती है, आवागमन के चक्र में भटकने से मुक्ति मिलती है, जन्म-मरण और कर्म-बन्धन मे वह तभी छूट पाती है अन्यथा वह अपने समग्र रूप (परमात्मा) से विलग रहकर भटकती ही रहती है।

वैज्ञानिक अन्वेषण के आधार पर विचार कीजिए—आज हम सब यह जानते हैं कि हमारी यह पृथ्वी करोड़ों वर्ष पूर्व सूर्य का ही एक अंश थी और जब उससे विलग होकर अनन्त अन्तरिक्ष में सूर्य से करोड़ों अरबों मील दूर आ पड़ी, तो धीरे २ उसकी ज्वलन-शक्ति क्षीण होती गई, वायु, जल आदि के संसर्ग से इस पर वनस्पतियों का जन्म हुआ, फिर कालान्तर में इस पर प्राणधारी चैतन्य रूप जीवों का जन्म हुआ, और असंख्य अगणित जीवों में से एक 'बुद्धितत्व' से युक्त श्रेष्ठ जीव मनुष्य उत्पन्न हुआ, जिसकी हम सब संतति हैं, और उस मनुष्य ने बुद्धि बल तथा आत्मबल द्वारा प्रभु की इस रचना के विषय में इतना ज्ञान अर्जित किया। यद्यपि यह ज्ञान भी अत्यल्प, एक विन्दुमात्र और नगण्य ज्ञान-मात्र है, तथापि अन्य जीवों की तुलना में कितना श्रेष्ठ है। पशुओं को, पक्षियों को, जलचरों को भला इतना भी ज्ञान कहाँ प्राप्त हो सका है, जो कि वे अपने सृजन कर्त्ता प्रभु की अद्भुत लीला का आभास भी पा सकें। ऐसे प्राणधारी जीवों और जड़ पदार्थों से युक्त यह पृथ्वी आज करोड़ों वर्ष उपरान्त भी सूर्य के चारों ओर निर्बाध गति से परिक्रमा कर रही है, जैसा कि आज विज्ञान द्वारा सिद्ध हो चुका है, आखिर ऐसा क्यों? फिर विज्ञान ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि चन्द्रमा लाखों करोड़ों वर्ष पूर्व पृथ्वी से टूटकर अन्तरिक्ष में अलग जा पड़ा, इसलिए चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर निरन्तर रूप से चक्कर लगा रहा है। ऐसे ही और भी न जाने कितने छोटे २ नक्षत्र हैं, जो कि बड़े २ नक्षत्रों से टूटकर पृथक हुए और तभी से उन्हीं के चारों ओर चक्कर काट रहे हैं, जिनसे वे टूटकर पृथक हुए हैं। आखिर ऐसा क्यों है?

इस प्रश्न का एक ही समाधानकारक उत्तर है, कि विश्व का या कि ब्रह्माण्ड का प्रत्येक जड़ चेतन पदार्थ जिस पदार्थ का अंश होता है, उसके साथ उसका एक विशेष आकर्षण शक्ति द्वारा सामञ्जस्य

अथवा सम्बन्ध स्थापित रहता है और उस आकर्षण के कारण ही वह उसी की ओर आकर्षित रहता है। सृष्टि की रचना में यह एक प्राकृतिक-नियम के रूप में विद्यमान है। यही नियम चेतन जीवों में भी मूल रूप में दिखाई देता है। बालक जब किसी स्त्री के शरीर से जन्म लेता है, तो बुद्धि विकास होने तक वह केवल अपनी मां को ही स्वाभाविक रूप से पहिचानता और उसी की ओर आकर्षित होता है। इसी प्रकार गाय का बछड़ा अपनी माता गाय के प्रति और शेर का बच्चा अपनी माता सिंहनी के प्रति अर्थात् प्रत्येक जीव अपनी जन्मदायिनी मां के प्रति सहज स्वाभाविक प्रेम और आकर्षण से जन्म से ही युक्त होता है, जिसके शरीर में उसने जन्म लिया है, जिसके शरीर का वह अंश है। अन्यों को तो वह कालान्तर में बुद्धि विकास द्वारा ही जान पाता है। किन्तु अपनी मां के स्पर्श, गन्ध वात्सल्य आदि का बोध उसे नितान्त अज्ञानावस्था में भी होता है। चाहे उसे प्रकट करने की क्षमता उस समय उसमें भले न हो।

इसी प्रकार जीवमात्र की आत्मा, प्राणिमात्र के प्राण, चेतन मात्र की चेतन-शक्ति कुछ भी कह लीजिए, उस परमात्मा, उस महाप्राण उस महाचैतन्य प्रभु के प्रति सृष्टि के उसी नियम के अन्तर्गत एक सहज स्वाभाविक आकर्षण शक्ति द्वारा जन्म-जन्मान्तरों तक, लाखों करोड़ों वर्षों तक भी, सम्बन्धित रहती है। वह निरन्तर उसी के चारों ओर अर्थात् उसी को पाने के लिए, उसके साथ एकाकार होने के लिए, छटपटाती रहती है, व्याकुल रहती है और जब उसके साथ तादात्म्य स्थापित कर लेती है, तभी उसे सच्ची शान्ति, सच्चा सुख और सच्चे आनन्द की अनुभूति होती है।

किन्तु ईश्वर की इस अद्भुत सृष्टि के कुछ और भी नियम हैं, जिनके अनुसार प्रत्येक जीव को अपने २ कर्मों के अनुसार भिन्न २ योनियों में जन्म लेकर कर्मों के फल अवश्य भोगने पड़ते हैं और उसकी आत्मा उन ईश्वरीय नियमों के कठोर बन्धनों से विवश हो

यूँ ही जन्म २ तक भटकती और छटपटाती रहती है। तनिक कल्पना कीजिए आत्मा की उस आकुलता की स्वयं को उसके स्थान पर रख कर। यदि आप अपने घर तथा स्वजनों से दूर परदेश में एक गाँव से दूसरे गाँव भटक रहे हों, आजीविका साधन अथवा किसी अन्य प्रकार की विवशता या दवाव के कारण आप अपने घर न पहुंच सकते हों और आपके मन में हर समय यही इच्छा या लगन रहती हो कि कव मैं अपने घर, अपने माता-पिता, भाई बहिन अथवा पत्नी पुत्रादि के पास पहुंचूँ, तो उस समय उस विवशता की स्थिति में अपनी मनोदशा कैसी होगी ? कितना दुख अपना मन अनुभव करेगा ? किस प्रकार अपना मन छटपटा २ कर रह जायगा ? ठीक उसी प्रकार आत्मा भी परमात्मा के पास पहुंचने के लिए अकुलाती है।

आत्म-ज्ञान ब्रह्मज्ञान अथवा अध्यात्म ज्ञान तो अति सूक्ष्म और अति विशद् ज्ञान है जो कि जीव को परमात्मा के साथ एकाकार होने का मार्ग दर्शाता है किन्तु यहाँ आत्मा और परमात्मा का सम्बन्ध, ईश्वर की सृष्टि की रचना, प्रकृति के नियम और ईश्वरीय शक्तियों के वारे में मोटे तौर पर आपको वोध कराने का प्रयास-मात्र किया गया है, ताकि पुस्तक के मुख्य विषय, गायत्री की शक्ति, उपासना के महत्व और उपलब्धियों आदि के बारे में ठीक प्रकार से तत्व ग्रहण कर सकें।

गायत्री मन्त्र के गूढ़ार्थ

आचार्यों और महर्षियों का मत है कि इस सृष्टि की रचना से पूर्व अखिल ब्रह्माण्ड में केवल एक ही अनहद नाद गुञ्जायमान हो रहा था, वह था---'ॐ'। अस्तु सृष्टि रचना के उपरान्त जब ब्रह्मशक्ति गायत्री ने वेदों की रचना की तो शब्द रूप में परमात्मा की आदि शक्ति 'ॐ' को ही ग्रहण एवम् स्वीकार किया, क्योंकि यही परमात्मा का स्वयंसिद्ध और स्वयं प्रकट नाम है। इसीलिए हमारे पूर्वज ऋषि मुनियों ने इस 'ॐ' को ही सब मन्त्रों का आधार और हेतु माना है। इस ॐकार को ही प्रणव कहा है। इस प्रणव 'ॐ' से सात व्याहृतियाँ उत्पन्न हुई और उन व्याहृतियों से ही वेद उत्पन्न हुए। भूः भुवः, स्वः ये तीन महाव्याहृतियाँ मानी गई हैं। महः, जनः, तपः और सत्यम् ये चार अन्य व्याहृतियाँ हैं।

'ॐ' इस ब्रह्म रूप प्रणव की महिमा धर्म ग्रन्थों में अनेक प्रकार से वर्णन की गई है यथा—

यजुर्वेद में लिखा है—'ॐ स्मर'

अर्थात्—ॐ का स्मरण करो।

ॐ स्मरणात् कीर्तनाद्वापि श्रवणाच्च जपादपि।
ब्रह्म तत्प्राप्यते नित्यं मोमित्ये तत्परायणः।

अर्थात्—ॐ के स्मरण, कीर्तन, श्रवण तथा जप से मनुष्य उस परब्रह्म को प्राप्त होता है, अस्तु नित्य ॐ में परायण रहे।

महर्षि वेदव्यास जी ने कहा है—

'प्रणवं मन्त्राणां सेतुः'

अर्थात्—प्रणव ॐ मन्त्रों को पार करने के लिए अर्थात् सिद्धि के लिए पुल के सदृश है।

आचार्यों और विद्वानों ने इस 'ॐ' प्रणव के १६ अर्थ वर्णन किए हैं, जो इस प्रकार हैं:—

१ संसार सागर से रक्षा करने वाला, (रक्षण)
२ सर्वकाल में समष्टि नियति का ज्ञाता (गति)
३ निखिल विश्व को प्रकाश देने वाला (कान्ति)
४ भक्तों से प्रेम करने वाला आनन्दस्वरूप (प्रीति)
५ भक्तों को तृप्ति देने वाला शान्तस्वरूप (तृप्ति)
६ जीवमात्र के विचारों को सदा सर्वदा जानने वाला (अवगम)
७ सूक्ष्म आत्म-स्वरूप से सब प्राणियों में प्रवेश करने वाला (प्रवेश अवति)
८ सूक्ष्मतम तथा गुप्ततम शब्दों का श्रोता (श्रवण)
९ समस्त चराचर विश्व का शासक तथा स्वामी (स्वाम्यर्थ)
१० समस्त ऐश्वर्यों से युक्त, सबकी याचना का लक्ष्य (याचन)
११ समस्त क्रियाओं का संचालक (इच्छाक्रिया)
१२ स्वयं इच्छा रहित किन्तु सबकी शुभेच्छाओं का प्रकाशक (इच्छति अवति)
१३ ज्ञान और विद्या का तेज स्वरूप अन्धकार नाशक (दीप्ति अवति दीप्यति)
१४ अप्रतीत एवम् इन्द्रियातीत होने पर भी अणु २ में व्याप्त होने के कारण शुद्ध अन्तःकरण में स्वस्वरूप प्रदर्शक (वाप्ति)
१५ सर्व व्यापक और सर्वज्ञ होने वाला (आलिङ्गन)
१६ धर्मावलम्बियों के अज्ञान का नाशक स्वरूप (हिंसा)
१७ सुखदायक पदार्थों को भोग करने की बुद्धि देने वाला (दान)
१८ प्रलय काल में स्थूल जगत को अपने में लीन करने वाला (भोग)

१९ सृष्टि काल में सूक्ष्म प्रकृति को स्थूल पथ पर लाने वाला (वृद्धि)

इस प्रकार उक्त १९ अर्थों से युक्त प्रणव ॐ का जप करने से उक्त १९ ईश्वरीय गुणों का लाभ प्राप्त होता है, अर्थात् मनुष्य की आत्मा ईश्वरीय गुणों से संयुक्त होकर ब्रह्मस्वरूप हो ब्रह्म में ही लीन हो जाती है।

भूः भुवः स्वः—ये तीन महाव्याहृतियाँ हैं, जो अति गूढ़ रहस्यों से परिपूर्ण हैं, विद्वानों तथा मनीषियों ने जितना ही अधिक मनन और चिन्तन किया, उतने ही गूढ़ अर्थ उनके बुद्धि-पटल पर प्रकट हुए'।

यथा—भूः भुवः स्वः—पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्ग (तीन लोक)
—ब्रह्मा, विष्णु और महेश (तीन देव)
—उत्पादक, पोषक व संहारक (तीन शक्तियां)
—सत, रज और तम (तीन गुण)
—सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् (तीन रूप)
—अग्नि वायु, जल (तीन तत्व)
—ब्रह्म, प्रकृति, जीव (तीन स्वरूप)
—भूत, वर्तमान, भविष्य (त्रिकाल)

तथा ऐसी ही न जाने कितनी त्रिकों के साथ गायत्री महामंत्र की इन तीन महाव्याहृतियों का गूढ़ सम्बन्ध है जो हमें परमात्मा के रूपों गुणों और शक्तियों का बोध कराते हुए उसके स्वरूप को जानने और समझने की प्रेरणा देता है। गायत्री महामंत्र में इन तीनों महाव्याहृतियों के समावेश से ही हमें इस ज्ञान का बोध होता है, कि गायत्री ब्रह्म की ही शक्ति अथवा स्वयं 'ब्रह्म' है, तीनों लोकों की अधिष्ठात्री है, उसमें ईश्वर की तीनों शक्तियाँ सन्निहित हैं, त्रिकाल दर्शी दृष्टि रखती है, अग्नि वायु जल तीनों आवश्यक तत्वों को प्रदान करने वाली है, सत्य, कल्याणकारी और सुन्दर रूपिणी है, ब्रह्म, प्रकृति और जीव तीनों रूपों में व्याप्त है, इसीलिए स्वयं

ब्रह्मा विष्णु और महेश भी गायत्री के उपासक हैं।

गायत्री शब्द का अर्थ है—प्राणों की रक्षा करने वाली। प्राण-शक्ति के विना जड़ चेतन सब अस्तित्व हीन हैं, अस्तु सबकी प्राण-शक्ति की रक्षा करने वाली आदि शक्ति गायत्रा की सब उपासना करते हैं।

'तत्'—शब्द का अर्थ उस या वह है, जो कि इस महामंत्र में परमात्मा की ओर संकेत करता है। चूंकि परमात्मा की महिमा, स्वरूप, गुण, शक्ति अवर्णनीय और शब्द शक्ति से परे हैं, इसलिए उसका अपूर्ण वर्णन न करते हुए केवल 'तत्' शब्द द्वारा उसकी ओर संकेत किया गया है। उसके पूर्ण और यथार्थ गुण स्वरूप का दिग्दर्शन तो आत्मा को तभी प्राप्त होता है, जबकि वह परमात्मा में लीन होती है। इन्द्रियों तथा बुद्धि तत्व की शक्ति से सर्वथा परे वह सर्व शक्तिमान परमात्मा जैसा है, आत्मा स्वतः उसके स्वरूप को पहचाने और जाने। ॐ तत् सत् ये परमात्मा के तीन नाम गीता में कहे गए हैं, उसके अनुसार भी 'तत्' ब्रह्म का ही रूप है, उसी का नाम है, और उसी के लिए प्रयुक्त होता है।

सवितुः—सविता का सामान्य अर्थ सूर्य है, किन्तु सूर्य के रूप में तो हमें ईश्वर की अनन्तशक्ति का, उसके अलक्ष्य तेज और प्रकाश का तथा उसकी प्राणदायिनी, कल्याणकारी, और पोषक शक्ति का एक अल्पांश ही दृष्टिगोचर तथा आभासित होता है, किन्तु सूर्य पूर्ण 'सविता' नहीं, वरन् सविता का प्रतीक मात्र है। गायत्री महामंत्र में ईश्वर के सविता रूप का इसीलिए चिन्तन किया गया है कि वह हमें अपना अनन्त तेज और ज्ञानरूपी प्रकाश प्रदान करे। वेदों, उपनिषदों, पुराणों, स्मृतियों आदि में 'भगवान सविता' को साक्षात परब्रह्म माना गया है, और सूर्य को भी परमात्मा का ही आंशिक स्वरूप मानकर उपासना की गई है।

वरेण्यं—का शब्दार्थ श्रेष्ठ अथवा उत्तम है, जो वरण करने

अर्थात् धारण करने योग्य हो। ईश्वर की अद्‌भुत सत्ता में सत् और असत् दोनों प्रकार के तत्व विद्यमान हैं, अस्तु जो श्रेष्ठ तत्व हैं, सत् अर्थात् परमात्मा की ओर, सन्मार्ग की ओर अभिमुख करने वाले हैं और धारण करने योग्य हैं उन्हीं की ओर हमारी अभिरुचि तथा प्रयत्नों को प्रेरित करने के लिए ही वरेण्यं शब्द का प्रयोग इस महामंत्र में किया गया है, ताकि भगवान सविता रूप गायत्री हमारी बुद्धि, विवेक और ज्ञान को ऐसा पवित्र, उत्कृष्ट और श्रेष्ठ बनाएँ, कि हम श्रेष्ठ तत्वों को ही ग्रहण या धारण करें।

भर्गः—'भर्ग' वह ईश्वरीय शक्ति कहलाती है, जो कि हमारे मन के विकारों और पापों का नाश करती है, तथा बुद्धि पर छाए हुए अज्ञानांधकार को दूर करती है। परमात्मा की इस शक्ति की भी हमें उतनी ही आवश्यकता होती है, जितनी कि वरेण्यं की अर्थात् श्रेष्ठ तत्वों को ग्रहण करने के साथ असत् तत्वों बुराइयों और पापों को त्याग करने का विवेक भी हो, तभी हम सन्मार्ग पर चल सकते हैं। यदि बुराइयों का परित्याग न किया जाय, तो वे शीघ्र ही मन को चलायमान करके सत् गुणों को नष्ट कर डालती हैं, अस्तु बुराइयों को समूल नष्ट करना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि अच्छाइयों को धारण करना, और श्रेष्ठ कर्त्तव्यों का पालन करना। गायत्री मंत्र में इन दोनों ही प्रकार की शक्तियों का आह्वान किया गया है।

देवस्य—अर्थात् दिव्य स्वरूप को, अलौकिक को, दैवी गुणों वाले को। चूंकि सामान्य सांसारिक मनुष्य वासनाओं, स्वार्थों और अज्ञानताओं में फंसा रहता है, प्रतिक्षण दूसरों का धन ऐश्वर्य आदि छीनने के प्रयत्न में ही लगा रहता है, किन्तु देवता स्वरूप अलौकिक प्राणी प्रतिक्षण दूसरों को अपना सर्वस्व देकर भी उसका कल्याण करना चाहता है, परोपकार की भावना से ओत-प्रोत रहता है, वे सांसारिक सुख-भोगों को प्राप्त करने की न तो इच्छा ही रखते हैं,

और न ही उनसे तृप्त वा सुखी होते हैं। उनको सच्ची शांति और सुख तो परमार्थ परोपकार और दीन-हीन प्राणियों की सेवा करने ही से प्राप्त होता है। गायत्री मंत्र में परमात्मा से यही प्रार्थना की गई है कि वह हमें अलौकिक और दिव्य भावनाएं तथा गुण प्रदान करे, देवत्व प्रदान करे, उत्कृष्ट बुद्धि प्रदान करे, ताकि वह सांसारिक संकीर्णताओं, पापों, कुविचारों और स्वार्थान्धता से निकलकर महानता प्राप्त कर सके।

धीमहि—धीमहि का अर्थ है धारण करना। अर्थात् मन वचन और कर्म से उसे ग्रहण करना। पूर्व शब्द देवस्य द्वारा जिस देवत्व को प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की गई है, उस 'देवत्व' को मन वचन और कर्म रूप से धारण करने की क्षमता, उसको व्यवहारिक रूप से अपनाने की योग्यता प्रदान करने की याचना की गई है। यदि किसी कंगाल को ईश्वर धन तो अपार दे दे, किन्तु उसके सदुपयोग की बुद्धि न दे, तो वह ईश्वर-प्रदत्त धन उसके लिए कल्याणप्रद न होकर अधः पतन का ही कारण हो जायगा। अस्तु प्रत्येक श्रेष्ठ वस्तु अथवा गुण को प्राप्त करने के साथ-साथ उसका व्यवहारिक सदुपयोग करने का विवेक भी होना आवश्यक होता है। गायत्री मंत्र में 'धीमहि' शब्द द्वारा दैवी गुणों को धारण करने और व्यवहार में सदुपयोग करने की क्षमता प्रदान करने की प्रभु से प्रार्थना की गई है।

'धीमहि' का शाब्दिक अर्थ ध्यान करना भी होता है। अनेक विद्वानों ने यही अर्थ लगाया है, किन्तु उसमें भी भावार्थ वही छुपा हुआ है। जिस वस्तु का निरन्तर ध्यान किया जाता है, वह मन में जम जाती है, मन में जम जाने पर उसकी रुचि, इच्छा और चेष्टाएं उसी को प्राप्त करने में लग जाती हैं, अस्तु मन वचन और कर्म तीनों द्वारा वह उसे ही पाने के लिए सचेष्ट रहता है और इस प्रकार प्राप्त होने पर वह मन वचन और कर्म द्वारा उसका सदुपयोग भी

करता है। तो वस्तुतः ध्यान ही प्रत्येक विचार, भाव, गुण अथवा कर्म का बीज स्वरूप है और उसकी सफलता अथवा प्राप्ति ही फल है। तात्पर्य यह कि जैसा आप ध्यान करेंगे, वैसा ही फल (परिणाम) सम्मुख आएगा। 'देवस्य' का ध्यान करने पर 'देवत्व' ही हमारे मन वचन और कर्म में प्रतिफलित होगा।

धियः—'धी' का अर्थ है बुद्धि। बुद्धि आम बोलचाल में तो दिमाग के तेज़ होने को कहते हैं, किन्तु साहित्य में यह अर्थ का अनर्थ है। मक्कार, चालाक, धूर्त लम्पट, धोखेबाज़, व्यक्ति दिमाग़ के तो बहुत तेज़ हो सकते हैं और उसके द्वारा दूसरों का धन हड़पकर करोड़पति भी बन जाते हैं, किन्तु वे बुद्धिमान नहीं कहे जा सकते। बुद्धि तत्व उस श्रेष्ठ ज्ञान विवेक को कहते हैं, जो कि मनुष्य के मस्तिष्क को उत्तम मार्ग और उत्तम कार्यों की ओर ले जाता है। गायत्री महामंत्र में उसी सद्बुद्धि तत्व की ओर संकेत किया गया है, कुबुद्धि की ओर नहीं। पवित्र, श्रेष्ठ, उत्कृष्ट और परमार्थी सात्विक बुद्धि को ही 'धी' अर्थात् बुद्धि माना गया है।

यो—(यः) इसका अर्थ है 'जो'। यह शब्द ईश्वर के लिए सांकेतिक रूप से प्रयोग किया गया है। गायत्री मंत्र द्वारा दैवी गुणों को प्राप्त करने के लिए उस परब्रह्म परमात्मा से प्रार्थना की गई है। कैसा स्वरूप है उस परमात्मा का?—'जो' भूर्भुवः स्वः है, तत्सवितुर्वरेण्यं है, भर्गः देवस्य है। उसी परमात्मा की ओर संकेत करते हुए यः शब्द का प्रयोग किया गया है।

नः—इस शब्द का अर्थ है—हमारा या हम लोगों का। नः शब्द बहुवचन के रूप में प्रयुक्त होता है। इसका अर्थ है कि गायत्री मंत्र का उच्चारण करने वाला केवल अपने लिए ही नहीं, प्रत्युत मानव मात्र के लिए परमात्मा से प्रार्थना करता है। प्राणीमात्र का कल्याण चाहता है। ईश्वर से जो कुछ स्वयं प्राप्त करना चाहता है, वही अन्य सबके लिए प्राप्त करना चाहता है। सब सन्मार्ग पर चलकर, धर्मा-

चरण करके परम सुख व शांति को प्राप्त करें, परमात्मा को प्राप्त करें। कितनी सुन्दर और कल्याणकारी भावना है!

प्रचोदयात—इसका अर्थ है प्रेरित करना, उत्साहित करना, बढ़ाना। इस शब्द द्वारा हमारे पूर्वज मनीषियों का आत्मगौरव प्रकट होता है, कि वे आत्म-सम्मान की भावना से नितान्त हीन कदापि न थे। ईश्वर से भी वे पतित होकर याचना नहीं करते थे, वरन् परमेश्वर को अपना पथ-प्रदर्शक और संरक्षक समझकर ही केवल यह याचना करते थे, कि वह उनकी वृद्धि को प्रेरित करे, ताकि वे स्वयं उन सत् गुणों और धर्मों को अपना कर देवत्व या ईश्वरत्व प्राप्त कर सकें। वे ऐसी कामना या याचना कभी न करते थे, कि हे प्रभु, हमें ऐसे ही ले जाकर स्वर्ग का राजा बनाकर बिठा दे और संसार के समस्त सुख ऐश्वर्य का ढेर मेरे ही चारों ओर लगा दे।' वे तो सदैव प्रभु को गुरु की भांति मानकर उससे सद्ज्ञान, सद्बुद्धि, सत्प्रेरणा सद्गुणों को प्रदान कर अपने आशीर्वाद द्वारा उसे इस योग्य वनाने की प्रार्थना करते थे, कि वे विश्व के समस्त ऐश्वर्य को तृणवत् तुच्छ समझकर त्याग सकें, और परमात्मा की भक्ति व प्रेम को प्राप्त कर आत्मा का सच्चा सुख व शांति प्राप्त कर सकें।

इसके अतिरिक्त प्राचीन शास्त्रों में आचार्यों ने गायत्री मंत्र के भिन्न-२ गूढ़ार्थ निकाले हैं, जिनको संक्षिप्त रूप में भक्तजनों के ज्ञानार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है।

१. ब्रह्म पुराण में गायत्री मंत्र का अर्थ इस प्रकार किया गया है :-
भूः—से पृथ्वी लोक, भुवः—से अन्तरिक्ष तथा स्वः से स्वर्ग लोक
तत्—से तेजस् और तेजस् से अग्नि देवता समझें।
सवितुः—का अर्थ है सविता, जिसे आदित्य कहते हैं।
वरेण्य—अर्थात् अन्न वरेण्यं, जिसका अर्थ है प्रजापति।
भर्ग—अर्थात् अप और जो अप हैं वही सब देवता हैं।
देवस्य—जो देव है वही पुरुष है, उसी को विष्णु कहते हैं।

धीमहि–ऐश्वर्य को कहते हैं और ऐश्वर्य है वही महेश्वर है।

धी–का अर्थ प्राण है और जो प्राण है वही वायु है।

यः–का अर्थ आध्यात्मिक है,

नः–का अर्थ पृथ्वी है जो कि इसकी योनि का आधार है।

प्रचोदयात्–इस लोक में कामना करना ही प्रचोदयात् है।

२. स्कन्द पुराण की सूक्त संहिता में गायत्री मंत्र का अर्थ इस प्रकार किया गया है :—

हमारी बुद्धि तथा विचारों को अन्तर्यामी स्वरूप से शुभ कर्मों में जो प्रेरित करे, उसी का हम व्रत करते हैं।

समस्त जीवों में प्रत्यक्ष आत्मा रूप में विद्यमान सविता रूप परमेश्वर का वर्णनीय तेज समस्त प्राणियों द्वारा चिन्तनीय है।

अपनी माया शक्ति द्वारा ब्रह्म शिव रुद्रादि भिन्न-२ संज्ञा वाले सूर्य नारायण के प्रेरक परमेश्वर हैं। उस सूर्य रूपी परमेश्वर की हम उपासना करते हैं, यह गायत्री मंत्र का संक्षेप में अर्थ कहा है।

३. आचार्य सायण ने गायत्री मंत्र का भाष्य इस प्रकार किया है:—

सविता सब श्रुतियों में प्रसिद्ध प्रकाशमान देव है जो कि सर्व अन्तर्यामी के रूप में प्रेरणा देने वाला, जगत का सृष्टा, परमेश्वर का आत्मभूत वरेण्य, सब का उपासनीय, जानने तथा भजन करने योग्य है।

अविद्या तथा उसके कार्यों का भर्जन (नाश) करने के कारण उसे भर्ग कहते हैं, वह स्वयं ज्योति और परब्रह्म का तेज है।

जो मैं हूंसो वह और जो वह है सो मैं हूं, ऐसा ध्यान करते हैं। अथवा जो सविता (तेजस्वी) बुद्धि को कर्म के लिए प्रेरणा देता है, उस सब का प्रसव करने वाले सविता देव के प्रकाशमान सूर्य सबको दिखाई देने के कारण सबके द्वारा उपासनीय, भजन करने योग्य भर्ग को, पाप के नष्ट करने वाले तेज मण्डल को ध्येय मानकर, धीमहि

अर्थात् धारण करते हैं।

४. भारद्वाज ऋषि ने गायत्री मंत्र का अर्थ इस प्रकार किया है :—

'**तत्** शब्द द्वितीया का एक वचन होने से सूर्य मण्डल में स्थित उस अनुपम तेज की ओर संकेत करता है जिसे उपनिषदों में संसार की उत्पत्ति, स्थिति और विलय का कारणभूत कहा गया है।

सविता का अर्थ है—सम्पूर्ण प्राणियों को उत्पन्न करने वाला।

वरेण्यं का अर्थ है—वरणीय, प्रार्थनीय। नियमादि के पालन करने से जिनके पाप नष्ट हो गए हों ऐसे निष्पाप पुरुषों द्वारा ध्यान **करने योग्य।**

भर्ग शब्द का अर्थ है—भजन करने से पाप का भर्जन अर्थात् नाश होता है, किन्तु भा का अर्थ दीप्ति भी होता है, उस धातु से यदि भर्ग बनाया जाता है तो उसका अर्थ तेज होता है।

देवस्य—वृष्टिदान आदि गुण-युक्त होने से उस आनन्द रूप को देव कहते हैं।

धीमहि—का अर्थ है चिन्तन करना। निगमनिरुक्त विद्यारूपी नेत्रों से आदित्य में स्थित जो हिरण्यमय पुरुष है वह मैं हूं, ऐसा समझकर चिन्तन करता हूं।

धियः—यह द्वितीया का बहुवचन है। जो सविता देव का भर्ग है उसका हम वरण करते हैं, ध्यान करते हैं।

यः नः प्रचोदयात्—यह तेज हम लोगों की 'धी' अर्थात् बुद्धि को श्रेयष्कर कार्यों की ओर प्रेरित करें।

५. वेदाचार्य उव्वट के मतानुसार गायत्री मंत्र का अर्थ इस प्रकार है :—

जो सविता देव हमारी बुद्धि, क्रिया और वाणी को शुभ धर्म कर्मादि की ओर प्रेरित करता है, उस सविता के वीर्य अर्थात् तेज का ध्यान करते हैं। अथवा-उस सविता देव के वरणीय भर्ग का ध्यान

करते हैं जो भर्ग हमारा बुद्धि को प्रेरणा देता है।

६. याज्ञवल्क्य ऋषि के गायत्रो भाष्य अनुसार : -

तत् शब्द से यत् शब्द का बोध होता है।

'**सविता** सब भूत तथा सब भावों का उत्पादक है, उत्पादन और प्रेरणा करने के कारण ही उसे 'सविता' कहते हैं।

वरेण्यं--अर्थात् संसार के भय से डरे हुए, मोक्ष की इच्छा रखने वालों को, सूर्य मण्डल के अन्तर्गत जो भर्ग नामक तेज है वह वन्दनीय है।

भर्गः—भ्रस्ज का अर्थ है पकाना। सबको पकाने प्रकाशित करने और हरण करने के कारण ही उसे भर्ग कहा गया है। अर्थात् सात अग्नि, सप्त किरण और कालाग्नि रखने वाले तथा प्रकाश देने वाले रूप के कारण भर्ग नाम पड़ा है।

देवस्य—स्वर्ग में प्रकाश करने तथा क्रीड़ा करने के कारण उसका नाम 'देव' पड़ा है जिसकी सब देवता स्तुति करते हैं।

धीमहि—सविता देव में जो तेज है, जिसे भर्ग कहते हैं, ब्रह्मज्ञानी उसे ही वरेण्य कहते हैं उसी का ध्यान करते हैं।

धियो योनः प्रचोदयात—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में बुद्धि को बार-२ प्रेरणा देने के लिए हम भर्ग का चिन्तन करते हैं।

७. जगद्गुरु शङ्कराचार्य द्वारा गायत्री मंत्र का अर्थ इस प्रकार किया गया है :—

भूः का अर्थ सत् है, भुवः—सब का प्रकाशक, इस व्युत्पत्ति से चिद्रूप कहलाता है। स्वः—सुव्रियते (इस व्युत्पत्ति से सबसे प्रथति सुख रूप है)।

शुद्ध गायत्री जीवात्मा और ब्रह्म की एकता की सूचक है। 'धियो योनः प्रचोदयात् 'अर्थात् हमारी बुद्धि को प्रेरणा देती है, तथा जो अन्तःकरण की प्रकाशिका तथा सर्व साक्षी है उसे प्रत्यगात्मा कहा जाता है।' उस 'प्रचोदयात्' शब्द से आत्मा स्वरूप भूत

परब्रह्म का 'तत् सवितुः' आदि पदों से कथन किया गया है।

यहाँ 'ॐ' तत्सत्' इस पद से ब्रह्म के तीन स्वरूपों का वर्णन किया है। तत् शब्द स्वतः सिद्ध सब भूतों में स्थित परब्रह्म के लिए कहा जाता है। सविता, सृष्टि, स्थिति, प्रलय लक्षणों वाले सब प्रपञ्च के, समस्त द्वैत भ्रम के अधिष्ठान हैं।

वरेण्यं—सर्व वरणीयम् निरतिशय एवं आनन्द रूप है।

भर्ग—अविद्या रूपी दोष को नष्ट करने वाला ज्ञान रूप है।

देवस्य—सब का प्रकाशक अखण्ड आत्मा एवम् रस वाला देव है। 'सवितुर्देवस्य' यहाँ षष्ठी है, सम्बन्धकारक है। राहोः शिरोः की भांति औपचारिक है। बुद्धि से सब पदार्थों का साक्षी रूप जो मेरा स्वरूप है वह सबका अधिष्ठान है। उस परमानन्द, सर्व अनर्थ रहित, स्वयं प्रकाश चैतन्य रूप ब्रह्म का ध्यान करते हैं।

समान अधिकरण होने से एक रूपता है। इस प्रकार सब का साक्षी जीवात्मा ब्रह्म के साथ तादात्म्य होने के कारण एकत्व है। अस्तु गायत्री महामंत्र सर्वात्मक ब्रह्म का बोध कराने वाला है।

इस प्रकार विद्वान पाठकों ने गायत्री मंत्र के विविध प्रकार के अर्थ भली प्रकार समझ लिए होंगे। इन अर्थों पर तथा गायत्री मंत्र के एक-२ शब्द पर जितना ही विद्वान लोग चिन्तन करते हैं, उतना ही वे उसकी आध्यात्मिक ज्ञान-गहनता में उतरते चले जाते हैं और भांति-२ के गुण-रत्न उन्हें प्राप्त होते हैं। ऐसा गूढ़ रहस्यों, तत्वों शक्तियों, अर्थों से भरा यह महामंत्र इसीलिए मंत्रराज माना जाता रहा है तथा विद्वानों की इस धारणा की पुष्टि करता है कि यह अद्भुत अलौकिक मंत्र सचमुच ही स्वयं ब्रह्मा जी के श्री मुख से उद्घोषित हुआ है। इस मंत्र के एक-२ शब्द में इतना गूढ़ ज्ञान भरा हुआ है, कि समस्त वेद, पुराण, उपनिषद् और शास्त्रों का सम्पूर्ण ज्ञान तत्व रूप में इस महा मंत्र में सन्निहित है। इसीलिए इस मंत्र की अधिष्ठात्री गायत्री को साक्षात् ज्ञान की जननी कहा गया है। गायत्री और गायत्री मंत्रदोनों की महिमा अवर्णनीय है, दोनों की शक्ति अगम्य है, स्तुत्य है। एक सर्वोत्तम साध्य है, दूसरा सर्वोत्तम साधन है।

गायत्री मन्त्र के गूढ़ रहस्य

वेद अर्थात् ज्ञान की जननी गायत्री अनन्त गूढ़ तत्वों, रहस्यों और शक्तियों का पुञ्ज-स्वरूप है, इसीलिए स्वयं ब्रह्माजी ने अथवा प्राचीन ऋषि मुनियों और विद्वानों ने गायत्री मंत्र' की रचना अपने दीर्घ तप, साधना, ज्ञान और दिव्य दृष्टि के आधार पर बहुत चिन्तन और मनन करने के पश्चात् की है। इसमें इतना महान ज्ञान भरा हुआ है जो मनुष्य एक बार उसके महत्व और ज्ञान गरिमा को साङ्गोपाङ्ग समझ लेता है, वह ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त कर मोक्ष का भागी होता है। गायत्री मंत्र के वे गूढ़ रहस्य वेदों, पुराणों, स्मृतियों गीता, रामायण इत्यादि समस्त धार्मिक ग्रन्थों में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं और उनका गहन अध्ययन करने पर तथा चिन्तन और मनन करने पर ही हाथ लगते हैं। इस लघु-पुस्तिका में अपने अध्ययन, ज्ञान, बुद्धि और विवेक अनुसार वेदमाता गायत्री के कुछेक गुप्त गूढ़ रहस्यों से आपको परिचित कराया जा रहा है। मैं उन विद्वानों, आचार्यों और ग्रन्थ प्रणेताओं के प्रति आभार, श्रद्धा और कृतज्ञता प्रकट करता हूं जिन्होंने मनुष्य मात्र के लिए उन रहस्यों को प्रकट किया, जो कि उन्होंने अपनी दीर्घ साधना से उपलब्ध किए थे।

'गायत्री' शब्द के गूढ़ रहस्य

'गायत्री' शब्द स्वतः असंख्य रहस्यों का भण्डार है। तीन शब्दों से बना यह अद्भुत 'शब्द' प्राणिमात्र को धर्म और आध्यात्मिकता की महान शिक्षा और प्रेरणा देता है। तनिक गहराई से विचार कीजिए कि आर्य धर्म के केन्द्र भारत में जितनी भी पवित्र, कल्याण-कारिणी, मोक्षदायिनी, पापनशिनी और श्रद्धा, भक्ति, ज्ञान और

उपासना की वस्तुएं हैं उनके नाम 'ग' वर्ण से ही प्रारम्भ होते हैं। यथा—'गङ्गा जिसे प्रत्येक भारतवासी माता के रूप में उपासनीय मानता है, नदियों में श्रेष्ठतम नदी है। गंगा का महात्म्य भी समस्त धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित है। यह नदी मोक्षदायिनी और समस्त पापों की नाशिनी मानी गई है, इसीलिए प्रत्येक पर्व पर तथा गंगा के किनारे बसने वाले लाखों प्राणी प्रतिदिन इसमें श्रद्धा और विश्वास के साथ स्नान कर न केवल शारीरिक पवित्रता अपितु मानसिक और आत्मिक पवित्रता को प्राप्त करते हैं। इसका एक ही अलौकिक गुण समस्त विश्व को चमत्कृत कर देता है, कि संसार की सभी नदियों, समुद्रों तथा महासागरों का जल भर कर रखने से उसमें कुछ दिनों उपरान्त कीड़े पड़ जाते हैं, किन्तु गंगा जी का जल वर्षों पर्यन्त रखने पर भी उसमें कभी कीड़े नहीं पड़ते। कितनी स्पष्ट, विलक्षण और दिव्य शक्ति है इसके जल में, जिसका रहस्य बड़े-२ वैज्ञानिक आज तक नहीं पा सके। धार्मिक ग्रन्थों में 'गीता' पवित्रतम ग्रन्थ माना जाता है, क्योंकि इसमें जो महान आध्यात्मिक ज्ञान भरा हुआ है, उसको जान और समझ लेने वाला जीव ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है। इसीलिए हम उसके प्रति श्रद्धा और अटल विश्वास रखते हैं। उस महान पवित्र ग्रन्थ 'गीता' का नाम भी 'ग' वर्ण से ही प्रारम्भ होता है। पशुओं में 'गौ' हमारी माँ तुल्य श्रद्धा और सेवा की अधिकारिणी चिरकाल से रही है। बड़े-२ राजे महाराजे, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और ऋषि मुनि तपस्वी तथा विद्वान आचार्य भी गौ माता की सेवा करते चले आए हैं, सो वह 'गौ' नाम भी 'ग' वर्ण से ही बना है। इसी प्रकार 'गायत्री' जो कि ज्ञान की जननी मानी गई है और स्वयं ब्रह्म स्वरूपिणी है उसका नाम भी 'ग' वर्ण से ही प्रारम्भ होता है। देवताओं में श्रेष्ठ बुद्धि देने वाले और सर्वप्रथम पूजनीय देव 'गणेश' जी का नाम भी 'ग' वर्ण से ही प्रारम्भ होता है। सभी धार्मिक ग्रन्थों में गुरु की महिमा का गुणगान गाया गया है।

बिना गुरु के ज्ञान प्राप्त नहीं होता और ज्ञान बिना जीवन व्यर्थ है। ऐसा ज्ञान देने वाला परम श्रेष्ठ पद 'गुरु' भी 'ग' वर्ण से ही बना है।

प्रश्न उठता है कि क्या यह एक संयोगमात्र है ?— नहीं। ये समस्त नाम बहुत सोच विचारकर रखे गए हैं। 'ग' वर्ण 'ज्ञान' शब्द का उच्चारण करते हुए सर्व प्रथम वाणी से निकलता है, इसलिए इसका विशेष महत्व स्वीकार किया गया है। क्योंकि इस संसार में ज्ञान से बढ़कर श्रेष्ठ तत्व नहीं। भौतिक या आध्यात्मिक उन्नति, उत्कर्ष और उत्थान का आधार 'ज्ञान' ही है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों को ज्ञान द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है, इसलिए 'ग' वर्ण श्रद्धा, भक्ति, ज्ञान और विवेक के प्रतीक स्वरूप अत्यन्त पवित्र माना गया है और सम्भवतः इसीलिए सर्ववन्दनीय, श्रेष्ठ, पवित्र, कल्याणकारिणी और अज्ञान, कुबुद्धि तथा पाप नाशिनी जो ईश्वरीय वस्तुएं हमें प्राप्त हुई हैं, उनके नाम विद्वानों ने 'ग' वर्ण से प्रारम्भ किए हैं।

एक अन्य रहस्य देखिए—हम भारतवासी आर्य लोग 'प्रयाग' को तीर्थ राज मानते है, क्योंकि यह गंगा यमुना और सरस्वती इन तीन नदियों के संगम स्थल पर बसा है। इन तीन पवित्र नदियों को त्रिवेणी कहा गया है। 'गायत्री' शब्द का 'गा' गंगा का बोधक है, 'य' यमुना का और 'त्री' त्रिवेणी का बोध कराता है, अस्तु विद्वानों ने 'गायत्री' को आध्यात्मिक ज्ञान की त्रिवेणी कहा है।

तीन अक्षरों का यह शब्द 'गायत्री' अनेक 'त्रिकों के साथ गूढ़ सम्बन्ध होने का बोध कराता है, यथा—

१. सत्, चित, आनन्द—जो कि स्वयं परमेश्वर का रूप है।
२. ॐ, तत्, सत्—यह भी परमात्मा का ही बोधक है।
३. सत्यं, शिवं, सुन्दरं—परमात्मा के दिव्य स्वरूप, अलौकिक गुणों, ज्ञान और सत्साहित्य आदि के लिए विशेषण है।
४. ब्रह्म, जीव, प्रकृति—सृष्टि में इन तीन रूपों में ही हमें

ईश्वर की अद्भुत माया परिलक्षित होती है।

५. गुण, कर्म स्वभाव—प्रत्येक जीव के ये तीन लक्षण ही मुख्य होते हैं।

६. शैशव, यौवन, बुढ़ापा—आयु का यह त्रिक सभी जानते हैं। इन्हीं तीन अवस्थाओं में जीवन विभक्त है।

७. उत्पत्ति, विकास और विनाश—समस्त चराचर का इन तीनों अवस्थाओं को प्राप्त होना अवश्यम्भावी है।

८. ब्रह्मा, विष्णु, महेश—सृष्टि के उत्पादक, पोषक और संहारक आदि देव माने गए हैं।

९. भूः भुवः स्वः—अर्थात् पृथ्वी, आकाश और स्वर्ग ये तीन लोक माने गए हैं।

१०. आकाश, पाताल, पृथ्वी—अनेक विद्वान इन तीन लोकों को बताते हैं।

११. देवता, मनुष्य और असुर—गुणावगुण के आधार पर मनुष्य मात्र को इन तीन वर्गों में विभाजित किया गया है।

१२. उत्तम, मध्यम, निकृष्ट—प्रत्येक जड़ चेतन का उसके गुण स्वभाव के आधार पर वर्गीकरण किया गया हैं।

१३. सर्दी, गर्मी, वर्षा—ये तीन प्रकृति प्रदत्त ऋतुएं सर्वविदित हैं।

१४. जप, तप, यज्ञ—ये तीन प्रकार की साधनाएं सर्वश्रेष्ठ हैं।

१५. सत्, रज, तम—ये मनुष्य के स्वभाव के मुख्य तीन गुण हैं।

१६. मन, वचन, कर्म—इन तीनों से ही मनुष्य का उत्थान और पतन होता है। जो तीनों पर संयम रखकर धर्म में प्रवृत्त होता है, वह ऊँचा उठ जाता है. इन तीनों पर संयम न रखने वाला अज्ञानी पतन के गर्त में गिर जाता है।

इस प्रकार के और भी अगणित 'त्रिक' ईश्वर का इस सृष्टि में बुद्धि पूर्वक विचार करने पर प्रतीत होते हैं, जोकि 'गायत्री शब्द के त्र्याक्षर के साथ गूढ़ सम्बन्ध का बोध कराते हैं।

गायत्री-स्मृति

गायत्री मंत्र २४ अक्षरों का मंत्र है। इसके प्रत्येक अक्षर से हमें गूढ़ ज्ञान का बोध होता है, जिसे मानसिक और व्यवहारिक रूप से अपनाकर मनुष्य मात्र का कल्याण हो सकता है। समस्त विश्व में प्रेम, सुख, शांति, ऐश्वर्य, समृद्धि और धर्म का साम्राज्य स्थापित हो सकता है। आइए, गायत्री मंत्र के एक-२ अक्षर के गूढ़ ज्ञान, उपदेशों और रहस्यों पर विचार करें और उन्हें समझें, जिसे विद्वानों ने 'गायत्री स्मृति' कहा है।

ॐ भूर्भुवः स्वः—इसका गूढ़ अर्थ इस प्रकार किया गया है कि—

भूर्भुवः स्वस्त्रयो लोका व्याप्तमोम्ब्रह्मतेषु हि।
स एव तथ्यतो ज्ञानी यस्तद्वेत्ति विचक्षणः।

अर्थात्—पृथ्वी, अन्तरिक्ष स्वर्ग इन तीनों लोकों में 'ॐ' अर्थात् ब्रह्म व्याप्त है, जो बुद्धिमान उस ब्रह्म को जानता है, वही श्रेष्ठ ज्ञानी है।

साथ ही भूः अर्थात् शरीर, भुवः संसार और स्वः आत्मा ये तीनों उस महाप्रभु के लीला स्थल हैं। जहाँ उसका अद्‌भुत कौशल और प्रकाश प्रत्यक्ष दिखाई देता है। इसलिए इन तीनों पदार्थों को प्रभु का ही विराट रूप समझना चाहिए। मनुष्य का इन तीनों में अपना कुछ भी नहीं है। न उसका शरीर ही न संसार का कोई पदार्थ और न आत्मा ही उसकी अपनी है, सब प्रभु की ही माया है। इस तत्व ज्ञान को समझने वाला ज्ञानी पुरुष माया मोह, ममता, संकीर्णता, लोभ लालच, दुष्कर्म और दुर्भावनाओं के जाल से बचा रहता है, और अज्ञान से उत्पन्न दुखों से मुक्त रहते हुए प्रतिक्षण आन्तरिक सुख, शांति और सदाशयता से ओत-प्रोत रहता है।

'तत्'—इस शब्द से जिस ज्ञान का बोध होता है, वह इस प्रकार कहा गया है कि—

तत्वज्ञास्तु विद्वांसो ब्राह्मणाः स्व तपो बलैः
अन्धकारम पाकुर्युं लोंकादज्ञान सम्भवम् ।

अर्थात्—तत्व ज्ञान को समझने और जानने वाले विद्वान ब्राह्मण अपने तप से अर्जित आध्यात्मिक शक्ति द्वारा संसार से अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर करने का यथा सम्भव प्रयत्न करें।

वस्तुतः इस संसार में सद्ज्ञान से बढ़कर कोई वस्तु नहीं। बिना सद्ज्ञान के मनुष्य चाहे करोड़ों रुपए का स्वामी हो, वह कदापि सच्चा सुख व शांति प्राप्त नहीं कर सकता। विना सद्ज्ञान के वह धन उसके लिए अत्यधिक दुख, क्लेश, चिन्ता, भय और पतन का ही साधन बन जाता है। इसीलिए आदि काल से 'ब्राह्मण' अर्थात् ब्रह्म को जानने वालों, ब्रह्मज्ञान के ज्ञाता, तत्व ज्ञान को समझने वालों का इस देश में सर्वोच्च स्थान रहा है। बड़े-२ राजे महाराजे भी ब्राह्मणों के चरणों में शीश झुकाते रहे हैं और उनसे आशीर्वाद, सद्ज्ञान और मार्ग-दर्शन प्राप्त करते रहे हैं। ब्राह्मणत्व संसार का सबसे बड़ा पद माना गया है, क्योंकि सच्चा ब्राह्मण संसार की असारता, इसके मायावी रूप को जानकर संसार के प्रत्येक भौतिक पदार्थ, भौतिक सुख साधनों और भौतिक इच्छाओं का त्याग और दमन करके एक मात्र परमात्मा की भक्ति में ही लीन रहता है. कठोर तप, साधना, चिन्तन, मनन और स्वाध्याय द्वारा ज्ञान अर्जित कर जगत में धर्म, ज्ञान, भक्ति, सद्विचार और सद्कर्मों का प्रकाश फैलाता है, सब जीवों का कल्याण चाहता है, अज्ञान के अन्धकार को मिटाता है और भ्रमित जनों को सन्मार्ग दिखाता है। इसीलिए ब्राह्मण का पद श्रेष्ठ समझा जाता रहा है।

गायत्री मंत्र का 'तत्' शब्द ब्राह्मणों को अपने इस पुनीत कर्त्तव्य पालन की शिक्षा देता है और उसे उसके उत्तरदायित्व को निभाने की प्रेरणा देता है अस्तु जो ब्राह्मण नित्य नियम पूर्वक गायत्री मंत्र का ध्यान करता है, वह अपने कर्त्तव्य को पूरा करने में

सक्षम बनने के लिए प्रतिक्षण तत्वज्ञान को प्राप्त करने के लिए सचेष्ट रहता है और उसे प्राप्त करके दूसरों का मार्ग-दर्शन करता है।

'सवितुर्वरेण्यं'—

इस शब्द का 'स' अक्षर सत्ताधारी वीर क्षत्रियों को उनके धर्म और कर्त्तव्य का ज्ञान प्रदान करता है।

सत्तावन्तस्तथा शूराः क्षत्रिया लोक रक्षकाः
अन्याया शक्ति शम्भूतानध्वंसंयेयुर्हि त्वापदः।

अर्थात्—सत्तावान, शूरवीर, संसार के प्राणियों की रक्षा करने वाले क्षत्रिय अन्याय और अशक्ति से उत्पन्न होने वाले उत्पीड़न को नष्ट करें।

गायत्री मंत्र का 'स' अक्षर क्षत्रिय धर्म के गुणों, कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों का बोध कराता है। सच्चे शूरवीर क्षत्रिय का यह पुनीत कर्त्तव्य है कि वह अन्याय का प्रतिरोध करके दुष्टों द्वारा उत्पीड़ित अशक्तों और निर्बलों की रक्षा करे। शक्ति और सत्ता पाकर सच्चे क्षत्रिय को कभी अहंकार, शक्तिमद, अनीति, शोषण, कुव्यसन, भोग विलास और अत्याचार नहीं करना चाहिए। ईश्वर ने उन्हें यह शक्ति और सत्ता धर्म, धर्मात्माओं, निर्बलों और पीड़ितों की अर्धामियों, दुष्टों और दुराचारियों से रक्षा करने के लिए प्रदान की है और जो क्षत्रिय रक्षक न होकर भक्षक बन जाते हैं, सत्ता और शक्ति के मद में पतित, कर्त्तव्यच्युत और अनाचारी हो जाते हैं, उनका शीघ्र ही विनाश हो जाता है।

दूसरा अक्षर 'वि' वित्त अर्थात् धन के विषय में सद्ज्ञान प्रदान करता है कि—

वित्तशक्त्या तु कर्त्तव्या उचिताभावपूर्तयः
न तु शक्त्या तथा कार्यः दर्पौद्धत्य प्रदर्शनम्।

अर्थात्—धन की शक्ति का सदुपयोग उचित अभावों की पूर्ति करना होता है। उस शक्ति द्वारा दर्प (घमण्ड) और उद्दण्डता का प्रदर्शन नहीं करना चाहिए।

'धन' संसार की एक आवश्यक शक्ति है और उसके बिना किसी का काम नहीं चलता। इसीलिए अधिकांश जन इसके लाभ से आवृत होकर 'एन कैन प्रकारेण' धन अर्जित करते हैं, फिर अज्ञान के कारण उसका उचित सदुपयोग न करके दुरुपयोग करने लगते हैं। किन्तु बुद्धिमान जन इस धन शक्ति को प्राप्त करके उसका सत्कार्यों में, आवश्यक अभावों की पूर्ति में सबके कल्याणकारी कार्यों में सदुपयोग करते हैं और अज्ञानी जन छल, कपट, बेईमानी, अत्याचार आदि के द्वारा धन अर्जित करते हैं और दुर्व्यसनों, दुष्कर्मों, दूसरों पर अत्याचार करने आदि कुमार्गों में दुरुपयोग करते हैं। गायत्री मंत्र प्राणिमात्र को यह सद्शिक्षा प्रदान करता है कि धन को अर्जित करने और उसका उपयोग उपभोग करने में हमें सदैव सन्मार्ग का ध्यान रखना चाहिए और धन के लोभ या मद में फंसकर कुपथगामी नहीं हो जाना चाहिए, अन्यथा वह धन सुख और कल्याण का हेतु न होकर पतन और विनाश का कारण बन जाएगा। यदि प्रत्येक मनुष्य गायत्री मंत्र के शब्दों का गूढ़ अर्थ समझकर उसे जीवन में व्यवहारिक रूप में अपना ले तो निश्चय ही यह भूलोक स्वर्ग के सदृश हो जाय।

तीसरा अक्षर 'तु' कठोर श्रम की प्रेरणा देने वाला है। श्रम की महिमा बताते हुए कहा गया है—

तुषाराणां प्रपातेऽपि यत्नो धर्मतु चात्मनः।
महिमा च प्रतिष्ठा च प्रोक्ता पारिश्रमस्य हि।

अर्थात्—तुषारापात में भी प्रयत्न करना जीवमात्र का धर्म है। श्रम की महिमा और प्रतिष्ठा अपार है।

जो मनुष्य कठिन से कठिन विपत्ति पड़ने पर भी अधीर न

होकर निरन्तर कठोर परिश्रम करता रहता है सफलता उसके निश्चय ही चरण चूमती है। कालचक्र की गति से अच्छे और बुरे दिन सभी के जीवन में आते रहते है, और कठिन समय में कठोर श्रम हो उसे अनेकानेक कठिनाइयां से उबार सकता है। इसलिए दिन अच्छे हों या बुरे, प्रत्येक मनुष्य को कठोर श्रम में जुटे रहना चाहिए। सुख-सम्पति पाकर जो श्रम छोड़ आलस्य में फंस जाते हैं, वे बुरे दिन आने पर घोर विपत्तियों में पड़ जाते हैं. किन्तु निरन्तर श्रम करने वाला मनुष्य सदा सुखी रहता है, उसे कठिन से कठिन समय भी विचलित नहीं कर सकता। परिश्रमी व्यक्ति आत्म-विश्वास के सहारे बुरे दिन भी हंसकर पार कर जाता है।

'व' जोकि इस शब्द का चतुर्थ अक्षर है, स्त्रियों को उनके कर्त्तव्य और महत्व का बोध कराता है। लिखा है—

वर नारीं बिना कोऽन्यो निर्माता मनु सन्तते।
महत्वं रचना शक्तेः स्वस्याः नार्याहिज्ञायताम्।

अर्थात्—मनु की सन्तान अर्थात् मनुष्य को जन्म देने वाली और निर्मात्री नारी के अतिरिक्त भला और कौन है ? इसलिए नारी को अपनी रचना शक्ति के महत्व का ज्ञान होना चाहिए।

नारी ही 'नर' को जन्म देने वाली है। बड़े-२ विद्वान, पराक्रमी, ज्ञानी, तपस्वी यहाँ तक कि भूलोक पर जन्म लेने के लिए स्वयं भगवान को भी 'नारी' के गर्भ में ही रहना और जन्म लेना पड़ता है। यदि प्रत्येक नारी अपने इस महत्व को भली प्रकार समझ ले, अपने उत्तरदायित्व के प्रति सजग रहे, उत्तम विचार और उत्तम आचरण अपनाए। शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ, प्रसन्न और पवित्र रहे तो उसके गर्भ से निश्चय ही श्रेष्ठ नर जन्म लेंगे और इसके विपरीत होने पर निकृष्ट कोटि के नर जन्म लेंगे। गायत्री मंत्र का 'व' अक्षर नारी मात्र को उसकी ईश्वरीय रचनाशक्ति का बोध

कराते हुए सद्ज्ञान, सद्बुद्धि और सन्मार्ग अपनाने की प्रेरणा देता है।

इस शब्द का पांचवाँ अक्षर 'रे' पवित्र नारी को साक्षात् लक्ष्मी रूप में पूज्य बताते हुए उसके महत्व का वोध कराता है। लिखा है—

रेवेव निर्मला नारी पूजनीया सता सदा।
यतो हि सर्व लोकेऽस्मिन साक्षात् लक्ष्मी मता।

अर्थात् सज्जन पुरुष पवित्र नारियों को सदैव पूजनीय समझता है, क्योंकि वे इस संसार में साक्षात् लक्ष्मी रूप हैं।

अच्छी सच्चरित्र नारियाँ धार्मिक विचारों वाली, उदार हृदय प्रेम, ममता और करुणा व दया की मूर्ति होती हैं, पुरुष को सुख, आनन्द और प्रेम देती हैं, सृष्टि की रचना में योगदान करती हैं, सेवाव्रती, परिश्रमी, धैर्यवती और निर्भीक होती हैं, कोमलहृदया, वात्सल्य और प्रेम की प्रतिमूर्ति होती हैं, पुरुष मात्र की निर्मात्री और जननी होती हैं उत्तम श्रेष्ठ महापुरुषों को जन्म देती हैं, अतः साक्षात् लक्ष्मी रूपिणी हैं और सदैव स्तुत्य और आदरणीय हैं।

षष्ठम अक्षर 'ण्य' संसार में 'प्रकृति' के महत्व का उद्बोधन कराता है। लिखा है—

न्यसन्ते ये नराः पद्धान् प्रकृत्यज्ञानुसारतः।
स्वस्थाः सन्तस्तुते नूनं रोग मुक्ता भवति हि।

अर्थात्—जो मनुष्य प्रकृति की आज्ञानुसार चलते हैं, यानी आहार, विहार, विचार और कर्म से प्रकृति के अनुकूल रहते हैं, वे मनुष्य सदैव स्वस्थ और राग मुक्त रहते है।

स्वास्थ्य ही जीवन है, स्वास्थ्य ही सुख है, स्वास्थ्य ही बल है, अतः स्वास्थ्य की रक्षा करने के लिए प्रकृति के महत्व को समझना चाहिए। जो मनुष्य जीवन के आहार विहार और दैनिकचर्या में जितना ही प्रकृति के अधिक अनुकूल चलेगा, वह उतना ही अधिक

स्वस्थ, प्रसन्न, बलवान, निरोग और दीर्घ जीवी होगा और प्रकृति के प्रतिकूल आचरण करनें वाला नाना प्रकार के रोगों से ग्रसित होकर अल्पायु और कष्ट भोगी होता है। गायत्री मंत्र का यह अक्षर हमें प्रकृति की अनन्त महिमा का बोध कराता है और उसके अनुकूल आचरण करने की शिक्षा देता है।

'भर्गो देवस्य धीमहि' :—

इस पद का 'भ' अक्षर मनुष्य मात्र को मानसिक संयम की शिक्षा और प्रेरणा देनें वाला है। लिखा है—

भवोद्विग्नमना नैव हृद्वुद्वेगं परित्यज।
कुरुः सर्व व्यवस्थासु शान्तं संतुलितं मनः।

अर्थात्—मन को उद्विग्न न होने दो। मन के उद्वेगों का त्याग करो। प्रत्येक व्यवस्था अर्थात् स्थिति में मन को शान्त और सन्तुलित रखना चाहिए।

मानसिक उत्तेजना, आवेश, उद्वेग, आतुरता, अशांति, उद्विग्नता आदि मन की स्थितियाँ शरीर में रक्तसंचार की गति तीव्र करके, पित्त को भड़काकर शारीरिक अंगों की प्राकृतिक रूप में होने वाली स्वाभाविक क्रियाओं को अस्त-व्यस्त कर देती हैं, जिसके कारण शरीर में नाना प्रकार के दोष-विकार और रोग उत्पन्न हो जाते हैं। विचार, विवेक, ज्ञान, प्रसन्नता और शान्ति विलुप्त हो जाती है, और भय, घबराहट, चिन्ता, क्रोध, शोक, निराशा व विषाद आद्रि का प्रभाव बढ़ जाता है। विपत्ति काल में अभावों और चिन्ताओं व निराशाओं से ग्रसित होकर मनुष्य मानसिक संतुलन खो बैठता है और सुख में धन व शक्ति के मद से ग्रसित होकर, अहंकार, दम्भ, भोग विलास आदि विनाशक उत्तेजनाओं से ग्रसित हो जाता है। ये दोनों ही प्रकार के मानसिक असन्तुलन उसके लिए विनाशकारी सिद्ध होते हैं अस्तु गायत्री मंत्र के 'भ' अक्षर से हमें यह सद्ज्ञान

प्राप्त होता है कि प्रत्येक स्थिति में मनुष्य को समभाव और उत्तेजना रहित रहकर सदैव शान्त, स्थिर और धीर रहना चाहिए।

'गो' अक्षर गोपनीयता अर्थात् दुराव-छिपाव की प्रवृत्ति को त्यागने का आदेश देता है। लिखा है—

गोप्याः स्वीया मनोवृत्तिर्नासहिष्णुर्नरो भवेत्।
स्थिति मन्यस्य च वीक्ष्य तयनुरूपतां चरेत्।

अर्थात्—छुपाव की मनोवृत्ति होने पर मनुष्य में असहिष्णुता बढ़ जाती है, अतः दूसरों की स्थिति देखकर तदनुरूप आचरण करना ही श्रेष्ठ है।

छुपाव करना, छलकपट करना पाप है और निष्कपट भाव से दूसरों के साथ स्पष्ट भाषण और व्यवहार मनुष्य की नैतिकता को ऊंचा उठाता है। मन में कपट रखकर किसी के साथ मीठी २ बातें करना या दिखावटी व्यवहार करना अधमता है। सत्य भाषण और सत्य व्यवहार, चाहे वह उसे अप्रिय ही लगे, करना ही उत्तम है। मनोभावों को छुपाने से मनुष्य में असहिष्णुता बढ़ती है और जब दूसरे भी उससे छिपाव करते हैं, तो वह सन्तुलन खो बैठता है। किन्तु स्पष्टवादी व्यक्ति के साथ दूसरे भी स्पष्ट व्यवहार करते हैं और उसमें सहिष्णुता का आविर्भाव होता है। दूसरे की स्थिति प्रकृति, व्यवहार, आचरण आदि देखकर जो सत्य हो, निष्कपट भाव से वैसा ही व्यक्त करे। यदि सम्मुख उपस्थित व्यक्ति कपटी, धूर्त, चोर, दुराचारी है, तो उसके मुँह पर उसकी प्रशंसात्मक चाटुकारी करना कपट और छिपाव का व्यवहार है, उसकी स्पष्ट रूप से निन्दा करना, प्रताड़ित करना, उसकी बुराइयों के प्रति घृणा प्रदर्शित करना और उसे सन्मार्ग पर आने की प्रेरणा देना ही स्पष्ट और निष्कपट व्यवहार है। इसी प्रकार पुण्यात्मा, आदर्श, सत्पुरुष का आदर करना, प्रशंसा करना, रोगी और अशक्त के प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार करना,

सहयोग और सेवा करना निष्कपट व्यवहार है। गायत्री मन्त्र का 'गो' अक्षर हमें इस प्रकार के व्यवहार की शिक्षा प्रदान करता है।

'दे' अक्षर हमें इन्द्रियों पर नियन्त्रण करने की प्रेरणा देता है। लिखा है—

देयानि स्ववशे पुंसा स्वेन्द्रियाणखिलानि वै।
असंयतानि खादन्तीन्द्रियाण्येतानि स्वामिनम्।

अर्थात्—मनुष्य को अपनी समस्त इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण रखना चाहिए अर्थात् उन्हें वश में रखना चाहिए। क्योंकि असंयत इन्द्रियाँ अपने स्वामी को खा जाती हैं अर्थात् उन्हें नष्ट कर डालती हैं।

मनुष्य के शरीर में इन्द्रियाँ आत्मा को सुख पहुंचाने के लिए प्रदान की गई हैं, शरीर की सूक्ष्म आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बनाई गई हैं। स्वाभाविक इच्छा की तृप्ति हेतु प्रत्येक इन्द्रिय का प्राकृतिक ढंग से सदुपयोग आवश्यक है, किन्तु जब मनुष्य की इन्द्रियाँ अनियंत्रित होकर मनमाने ढंग से काम करने लगती हैं, वे स्वेच्छाचारिणी और चटोरी हो जाती हैं, तो प्राकृतिक नियम विरुद्ध धर्म अधर्म का विचार किए विना, हानि लाभ का विवेक रखे बिना उनकी भोग लिप्सा बढ़ती ही जाती है और फिर उनकी बढ़ी हुई वासना की तृप्ति करना और उन्हें वश में रखना असम्भव हो जाता है।

'व' अक्षर हमें पवित्रता का सन्देश देता है। लिखा है—

वस नित्यं पवित्रः सन् वाह्यभ्यन्तरस्तथा।
यतः पवित्रतायां हि राजतेऽतिप्रसन्नता।

अर्थात्—मनुष्य को बाह्यरूप से (शारीरिक, वास्त्रिक और स्थानिक) और आन्तरिक रूप से (मन, विचार, भाव, बुद्धि से) हर समय पवित्रता का ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि पवित्रता में ही प्रसन्नता अर्थात् सुख और आनन्द है।

गन्दे शरीर, मैले वस्त्र, गन्दगी भरा स्थान, गन्दे विचार, गन्दे

भाव, ये सब कितने घृणित होते हैं, गन्दा भोजन खाने को तो क्या देखने को भी जी नहीं करता। किन्तु स्वच्छ शरीर, स्वच्छ वस्त्र, सुथरा स्थान, शुद्ध सात्विक विचार, उत्तम भावनाएं और सत्कर्म अपनाकर या देखकर ही मन को कैसे आनन्द की अनुभूति होती है, यह प्रत्यक्ष रूप से हम सब हर समय अनुभव करते हैं। भीतरी और बाहरी दोनों प्रकार की यदि जीवन में पवित्रता और निर्मलता हो, तो असंदिग्ध रूप से मनुष्य अलौकिक आनन्द और सुख का अनुभव करता है, अस्तु 'व' अक्षर में पवित्रता का दिव्य संदेश निहित है।

'स्य' यह अक्षर मनुष्य मात्र को परमार्थ का महान आदर्श सिखाता है। कहा है—

स्यन्दनं परमार्थस्य परार्थो हि बुधैर्मतः।
योऽन्यान् सुखयतै विद्वान् तस्य दुःखं विनश्यति।

अर्थात्—दूसरों का प्रयोजन सिद्ध करना ही परमार्थ का रथ है, ऐसा बुद्धिमान लोगों का कथन है। जो विचारवान् मनुष्य दूसरों को सुख पहुंचाते हैं, उनका दुःख स्वतः नष्ट हो जाता है

हमारे कार्यों की पृष्ठभूमि में अर्थ, स्वार्थ, और परमार्थ ये तीन प्रकार के भाव विद्यमान रहते हैं। अपनी आजीविका चलाने के लिए जब ईमानदारी के साथ दूसरों की आवश्यकता पूर्ति के लिए श्रम, पदार्थ ज्ञान आदि देकर अपनी आवश्यकता पूर्ति हेतु धन, द्रव्य, अन्न-वस्त्र आदि प्राप्त किया जाता है, तो उस आदान-प्रदान की पृष्ठि भूमि में 'अर्थ' का भाव होता है। जब हम दूसरों को हानि पहुंचाकर अपने लाभ के लिए कोई कार्य करते हैं, तो उसकी पृष्ठ-भूमि में 'स्वार्थ का भाव होता है, चोरी, लूट बेई मानी, उठाईगीरी, ठगी, अपहरण, शोषण इत्यादि इसी वर्ग के कार्य हैं और जब अपनी हानि करके भी हम दूसरों को लाभ पहुंचाते हैं, दूसरों के कल्याण के लिए स्वयं कष्ट भी झेलने को सहर्ष तत्पर हो जाते हैं, तो उस

कार्य की पृष्ठभूमि में 'परमार्थ' का भाव होता है। दान, सहायता, शिक्षा दान, सेवा, दया इत्यादि इसी वर्ग के श्रेष्ठ कार्य हैं। 'अर्थ' स्वाभाविक भाव है, स्वार्थ दुर्गुण है अस्तु त्याज्य है और परमार्थ सद्गुण है इसलिए ग्रहण करने योग्य है वरणीय है। इस प्रकार गायत्री मन्त्र का 'स्य' शब्द अर्थोपार्जन के साथ २ स्वार्थ को त्याग कर परमार्थ के कल्याणकारी भाव और व्यवहार को अपनाने की शिक्षा देता है।

'धी' अक्षर हमें जीवन में बहुमुखी उन्नति और उत्थान का संदेश देता है। लिखा है--

धीरस्तुष्टो भजेन्नैवह्येकस्यां हि समुन्नतौ।
क्रियतामुन्नतिस्तेन सर्वास्वाशासु जीवने।

अर्थात्--धीर पुरुष को एक ही प्रकार की उन्नति से सन्तोष नहीं होना चाहिए। उसका लक्ष्य तो जीवन में बहुमुखी उन्नति होना चाहिए।

जीवन की अनेक दिशाएं हैं। हमें प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति का सतत् प्रयत्न करना चाहिए। शारीरिक रूप से भी हम पूर्णतया स्वस्थ व निरोग रहें, विद्या अर्जन करके पूर्ण विद्वान बनें, धन अर्जित करके धनवान और समस्त भौतिक सुख साधन सम्पन्न बनें, समाज में अनेक लोग हमारे घनिष्ठ और सच्चे मित्र हों, समाज में मान प्रतिष्ठा बढ़े, बुद्धि का भी पर्याप्त विकास हो, साहस का हममें अभाव न रहे और आत्म-बल भी इतना ऊंचा हो कि हम कैसी ही परिस्थितियों में भी अपना धैर्य और साहस न टूटने दें। इस प्रकार चतुर्दिक उन्नति द्वारा हम अपने भौतिक और आध्यात्मिक जीवन में श्रेष्ठता को प्राप्त करें। हम सर्वाङ्गीण रूप से उन्नति करें. ऐसा प्रेरणात्मक सन्देश हमें गायत्री के 'धी' अक्षर से प्राप्त होता है।

'म' अक्षर हमें ईश्वर भक्ति की प्रेरणा देने वाला है। विद्वानों ने लिखा है—

महेश्वरस्य विज्ञाय नियमान्न्याय संयुतान् ।
तस्य सत्तां च स्वीकुर्वन् कर्मणा तमुपासयेत् ।

अर्थात्—परमेश्वर के न्यायपूर्ण विधान को समझकर तथा उसकी सत्ता को स्वीकार करते हुए हमें उसकी आराधना करनी चाहिए ।

परमात्मा का विधान सत्य और न्याय पर आधारित है । हम सब उसकी सन्तान हैं । वह किसी के साथ न पक्षपात करता है, और न अन्याय । अपने २ कर्म अनुसार हम सब फल भोगते हैं । आलसी निकम्मा. दुराचारी, अज्ञानी अपने कुकर्मों और अकर्मण्यता के कारण ही धन, स्वास्थ्य और बुद्धि विवेक को खो बैठता है और पुरुषार्थी, परिश्रमी, सदाचारी तथा बुद्धिमान व्यक्ति अपने अध्यवसाय से सर्वाङ्गीण उन्नति करता है । परमात्मा की दृष्टि से हमारा कोई विचार कोई कर्म छुपा नहीं रह सकता । क्योंकि वह घट-घट वासी है, सर्वव्यापक है, हम सबके भीतर ही बैठा प्रतिक्षण सब कुछ देखता और जानता रहता है, अस्तु हमारे प्रत्येक कर्म का तदनुकूल फल हमें प्राप्त होता है । दयालु भी वह इतना है कि हमें भीतर से ही प्रतारणा देता हुआ बार २ संभलने के लिए प्रेरित करता है, समय देता है और हम मूर्ख यह समझ लेते हैं कि देखो कुकर्म करके भी हम कितने सुख भोग रहे हैं. कितनी उन्नति कर रहे हैं. किन्तु बार २ चेतावनी देने पर भी जब हम कुमार्ग को नहीं छोड़ते, तो ईश्वर का एक प्रहार ही हमें रातों रात में राजा से भिखारी बना देता है, इसी प्रकार सत्कर्म करने वाले को भिखारी से लखपति बना देता है । इस प्रकार के आकस्मिक परिवर्तन देखकर हम हतबुद्ध रह जाते हैं और तब ईश्वर का न्याय और कर्मों का फल भोगने का नियम हमारी समझ में आता है, उसकी सत्ता को हम तब स्वीकार करते हैं । वह परम शक्तिवान परमात्मा बड़े २ शक्ति सम्पन्न अहंकारी राजाओं का भी घमण्ड पल भर में चूर कर देता है । अकाल, अति-वृष्टि, भूचाल, बाढ़, महामारियाँ, युद्ध-विभीषिका आदि के रूप में

हम पापी और दुराचारी मनुष्य ईश्वरीय दण्ड को भोगते हैं।

अस्तु हे विद्वान जनो ! परमात्मा की सत्ता, उसके न्याय और उसकी अगम्य शक्ति को सदैव स्मरण रखते हुए अच्छे कर्मों में प्रवृत्त रहो, मन वचन और कर्म से धर्म मार्ग पर चलो, इसी में तुम्हारा हमारा और सब का कल्याण है। ऐसा दिव्य सन्देश हमें गायत्री महामन्त्र का 'म' अक्षर प्रदान करता है।

'हि' अक्षर के गूढ़ रहस्य बताते हुए आचार्यों ने लिखा है—

हितं मात्वा ज्ञानकेन्द्रं स्वातंत्र्येण विचारयेत् ।
नान्धानुसरण कुर्यात् कदाचित कोऽपिकस्यचित ।

अर्थात्—हमारे शरीर में जो हितकारी ज्ञान का केन्द्र 'बुद्धि' है, उसके द्वारा हमें स्वतन्त्र रूप से विचार करके प्रत्येक काम करना चाहिए, कभी किसी को किसी का अन्धानुकरण नहीं करना चाहिए।

परमात्मा ने सबको बुद्धि दी है। उस बुद्धि के द्वारा हम दूसरों से ज्ञान तो ग्रहण करें, किन्तु कभी दूसरों का अनुकरण नहीं करना चाहिए। प्रत्येक काम को अपनी बुद्धि और विवेक से उचित-अनुचित का विचार करते हुए करना चाहिए। युग परिवर्तनशील है. किसी देश काल और पात्र के विचार से जो काम आज उचित है, कल वही परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाने के कारण अनुचित हो जाता है। अस्तु हमें प्रथाओं, पद्धतियों, रीतियों और परम्पराओं से बंधा नहीं रहना चाहिए, वरन् अपनी बुद्धि द्वारा स्वतन्त्र रूप से विचार कर और ईश्वरीय नियमों को मूल रूप से ध्यान में रखते हुए उनमें देश काल और परिस्थितियों के अनुकूल संशोधन करने का प्रयत्न करना चाहिए। यह विकास की स्वाभाविक प्रक्रिया और भावना है। इसी के द्वारा जंगली जन्तुओं की भांति पेड़ों पर रहने वाला मानव आज सभ्यता और उन्नति के इस शिखर पर पहुंच सका है। तात्पर्य यह है कि गायत्री मन्त्र का 'हि' शब्द हमें स्वतन्त्र चिन्तन द्वारा विकास के पथ पर अग्रसर होने और समाज के उत्थान

के लिए सतत् प्रयत्नशील रहने का कल्याणकारी सन्देश प्रदान करता है।

धियो यो नः प्रचोदयात्—

'धि' अक्षर जीवन और मृत्यु का विभेद प्रकट करते हुए हमें निरन्तर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते जाने की प्रेरणा देता है। विद्वानों ने कहा है—

धिया मृत्युं स्मरन् मर्म जानी याज्जीवनस्य च।
तदा लक्ष्य समालक्ष्य पादौ सन्तत माक्षिपेत।

अर्थात्—बुद्धि द्वारा मृत्यु का स्मरण रखते हुए और जीवन के यथार्थ मर्म को समझकर हमें अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर गति से बढ़ते रहना चाहिए।

इस नश्वर संसार में जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु भी अवश्यम्भावी है, अतः हमें मृत्यु से डरना नहीं चाहिए। जीवन और मरण तो ईश्वर के अधीन हैं। जीवन, धन, यौवन सब नश्वर हैं, उनके मोह लोभ में डूबे न रहकर हमें जीवन के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग करना चाहिए। हर क्षण नेक कार्यों में, पवित्र विचारों में परमात्मा के ध्यान, चिन्तन और आराधन में लगाना चाहिए। वस्तुतः जीवन का मर्म यह है कि परमात्मा ने हमें संसार में अन्य जीवों का कल्याण करने के उद्देश्य से भेजा है, अपना स्वार्थ साधने, इन्द्रिय सुख भोगने और अनाचारों में लिप्त रहने के लिए नहीं। अस्तु हमें सदैव संसार के अन्य जीवों की भलाई के लिए प्रत्येक कार्य करना चाहिए। मृत्यु को वरण करने के लिए भी हमें प्रतिक्षण तैयार रहना चाहिए। न जाने किस घड़ी मृत्यु सम्मुख आ खड़ी हो। इसलिए किसी शुभ कार्य में टाल मटोल या विलम्ब नहीं करना चाहिए। इस जन्म में हम जितने ही अधिक नेक कर्म कर लेंगे, उतना ही अधिक श्रेष्ठ हमें अगला जीवन मिलेगा। और यदि हम इस जन्म में अज्ञान, मोह, लोभ, अनाचार, दम्भ और बेईमानी के

अन्धकार में भटकते रहे, तो मृत्यु उपरान्त उतना ही अधिक नारकीय कष्टप्रद तथा निकृष्ट जीवन प्राप्त होगा। मृत्यु इस जीवन और आगामी जीवन के मध्य की एक खाई है, इस खाई को पार करके ही हम नए जीवन में प्रवेश करते हैं, अस्तु मृत्यु से हमें कदापि भयभीत नहीं होना चाहिए। इस संसार में मनुष्य मृत्यु से केवल इसलिए डरता है कि वह यहाँ आकर माया मोह में फंस जाता है और धन दौलत परिवार कुटुम्ब आदि को छोड़कर जाना नहीं चाहता। किन्तु जाना तो अवश्य पड़ेगा और फिर यदि नेक कर्म किए हैं, तो और भी श्रेष्ठ जीवन प्राप्त होगा, तो फिर भला नेक कर्म करने वाले मृत्यु से क्यों डरें? तनिक विचार कीजिए कि आज आप क्लर्क हैं। यदि कल आपकी उन्नति हो जाय, आप अफसर बनाकर किसी अन्य स्थान पर भेजे जाएं, तो क्या आप प्रसन्तापूर्वक न जाना चाहेंगे?—आपकी उन्नति जो हो रही है। तो मृत्यु को भी पदोन्नति का निर्देश पत्र ही समझिए। इसमें डरने की क्या बात है, अथवा दुख शोक की क्या बात है? डरें वे, दुखी वे लोग हों, जिन्होंने जीवन दुष्कर्मों और दुराचारों में गंवाया हो। उन्हें उनके कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ेगा और कर्मफल मृत्यु के पश्चात् ही नहीं, इस जीवन में भी भोगना पड़ता है, भयङ्कर रोग और कष्ट, प्रियजनों का विछोह, धन ऐश्वर्य का विनाश आदि रूपों में हमें अपने कर्मों के फल तो यहाँ भी भोगने ही पड़ते हैं, तो फिर मृत्यु से ही क्यों डरें?

इस प्रकार का ज्ञान हमें 'धि' अक्षर से प्राप्त होता है। इसे जान और समझ लेने वाला मनुष्य जीवन और मृत्यु के मर्म को समझ लेता है और फिर न वह जीवन पर हर्ष या दर्प करता है और न मृत्यु से भयभीत या दुखी होता है।

'यो' अक्षर का भेद बताते हुए आचार्यों ने लिखा है:—

यो धर्मो जगदाधारः स्वाचरणे तमानय।
मा विडम्वय्र त सोऽस्ति ह्ये को मार्गे सहायकः।

अर्थात्—'धर्म' जो कि संसार का आधार है, उसे अपने आचरण रूप में ग्रहण करो। धर्म की विडम्बना कदापि न करो, क्योंकि जीवन मार्ग में वही तुम्हारा एक मात्र अद्वितीय सहायक है।

गायत्री मन्त्र का 'यो' अक्षर हमें धर्म का भेद भली प्रकार समझ कर तदनुकूल आचरण करने की शिक्षा देता है। धर्म क्या है? इसे ठीक प्रकार समझ लें। जो लोग मन बुद्धि और चित्त से तो सांसारिक माया मोह में फंसे रहते हैं, सारे दिन बेईमानी, झूठ, पाप, धोखा और दुराचार करते हैं, किन्तु प्रातः सायं पत्थरों की मूर्तियों को नहलाकर चन्दन भोग लगाकर अथवा माला फेरकर समझ लेते हैं, कि उन्होंने धर्म कर लिया, उससे उनके दिन भर के पाप धुल गए, ऐसे लोगों को मैं महामूर्ख कहूँगा। धर्म तो प्रतिपल हमारे साथ रहने वाला हमारा पथ प्रदर्शक है, संरक्षक है, एक क्षण के लिए भी उसे भूलकर या उसकी अवहेलना करने से हम अधर्म में गिर जाते हैं, कुपथगामी हो जाते हैं। प्रतिक्षण अपने को परमात्मा के सम्मुख उपस्थित जानकर उस महाप्रभु के प्रति आदरभाव रखते हुए मन वचन और कर्म से सत् अर्थात् शुभ, कल्याणकारी, परमार्थी और आत्मा के निर्देशन अनुसार विचारों, वचनों और कर्मों को अपनाना, उनमें प्रवृत्त रहना यही यथार्थ धर्म है। पूजा-पाठ और कर्म-काण्ड तो आडम्बर है, बिना ईश्वर का ध्यान रखते हुए सारी पूजा, उपासना, माला आदि व्यर्थ है। मेरा तात्पर्य यह कदापि न समझ लें कि मैं भजन, पूजन, स्मरण, आदि को व्यर्थ बता रहा हूं। इनका धर्म पथ पर अग्रसर होने के लिए विशिष्ट महत्व है, किन्तु ये तो यथार्थ पूजा के साधन मात्र हैं। चूंकि अधिकांशजन अज्ञानता के अन्धकार में फंसे रहते हैं। वे ईश्वर को भूल जाते हैं। अपने मन बुद्धि और चित्त को परमात्मा के ध्यान में स्थिर नहीं करपाते, इसी लिए ये मन्दिर ये मूर्तियाँ, ये पूजन विधियाँ, ये नाना प्रकार के अनुष्ठान आदि केवल ईश्वर में ध्यान को एकाग्र करने, उसे प्रति

क्षण अपने भीतर ही बैठा अनुभव करने के लिए, साधन बताए गए हैं। इन साधनाओं द्वारा मनुष्य चित्त को एकाग्र कर सकता है। किन्तु अधिकांशजन इनका मुख्य उद्देश्य 'ईश्वर का ध्यान' न समझने के कारण बाह्य आडम्बर को ही धर्म पालन समझ लेते हैं, उनका मन तो माया में फंसा रहता है, किन्तु दिखावे के लिए वे आँखें बन्द कर माला फेरते हैं। उनके कान दूसरों की बातों को सुनने में व्यस्त होते हैं, मस्तिष्क में धन संग्रह का चक्र चलता रहता है, मन में तरह तरह की दुर्भावनाएं उठती रहती हैं और उनकी दिखावटी पूजा चलती रहती है। भला कोई उन्हें समझाए कि उस पूजा का रत्ती भर भी लाभ है? केवल समय को व्यर्थ करना, आडम्बर, प्रपञ्च और कोई धोखा मात्र है। ऐसी पूजा धर्म नहीं, अधर्म है। कर्म काण्ड, पूजा-पाठ, मन्दिर गुरुद्वारे, ये सब तभी सार्थक हैं, जब कि हमारा ध्यान हमारा चित्त प्रतिपल ईश्वर में लगा रहे। वह हमें अपनी छाया की भाँति प्रतिक्षण अपने साथ अनुभव हो। हम प्रत्येक विचार, प्रत्येक कार्य इस भाव से करें कि परमात्मा हमारे सम्मुख है, किसी प्रकार की हमसे भूल न हो जाय। इस प्रकार सतर्क और सजग रहकर, हर समय ईश्वर का ध्यान रखते हुए हम सत्कर्म करें, सद्विचार करें, सत् वचन बोलें और अपनी समस्त इन्द्रियों द्वारा दूसरों को सुख व लाभ पहुँचाने वाले कार्यों में व्यस्त रहें। यही सच्चा धर्म है। धर्म की भावना बिना, परमात्मा का ध्यान रखे बिना, सारे धर्म कर्म, सारी पूजा उपासना निष्फल है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

'य:' अक्षर प्राणीमात्र को व्यसनों से दूर रहने की चेतावनी देता है, क्योंकि व्यसन मनुष्य को अधर्म और पतन के गर्त में गिरा देते हैं। मनीषियों ने कहा है —

योजन व्यसनेभ्य: स्यात्तानि पुंसस्तुशत्रुव: ।
मिलित्वैतानि सर्वाणि समये घ्नन्ति मानवम् ।

अर्थात्—मनुष्य को व्यसनों से योजन भर दूर रहना चाहिए,

क्योंकि वे मनुष्य मात्र के शत्रू हैं। ये सब मिलकर समय पाते ही मनुष्य का हनन कर डालते हैं अर्थात् उसका विनाश कर डालते हैं।

व्यसनों में गाँजा, भाँग, अफीम, तमाखू, चरस, शराब, आदि मादक द्रव्य तो प्रधान हैं ही, सिनेमा देखना, नाचरंग, वटेर मुर्ग व तीतर लड़ाना, ताश या जुआ खेलना, आदि भी ऐसे व्यसन हैं, जो कि मनुष्य को आधीन कर लेते हैं और उसके धन स्वास्थ्य समय आदि को नष्ट करते हैं। मन तथा बुद्धि पर भी कुत्सित प्रभाव डालते हैं। कोई भी दुर्व्यसन एक बार लग जाय, तो उससे छुटकारा पाना कठिन हो जाता है। ये सब व्यसन क्षणिक उत्तेजना उत्पन्न करके शरीर की इद्रियों को और शिथिल बना देते हैं। अन्त में मनुष्य का स्वास्थ्य क्षीण होकर अन्त में वह अकाल ही काल के मुख में चला जाता है।

अस्तु गायत्री मन्त्र का 'यः' अक्षर मनुष्य मात्र को व्यसनों से दूर व सावधान रहने का सन्देश देता है, क्योंकि ये व्यसन शरीर, मन तथा बुद्धि को क्षय करके उसे पतन के गर्त में गिराने वाले घोर शत्रु होते हैं।

गायत्री मन्त्र का 'नः' अक्षर मनुष्य को प्रतिक्षण सचेत और सजग रहने का सन्देश देता है। कहा है—

न शण्वेकामिमां वार्ता जमृतस्तव सदा भव।
सप्रमादं नरं नून ह्याक्रामन्ति विपक्षिणः।

अर्थात्—सुनो, सुनो, हमारी एक बात ध्यान से सुनो कि मनुष्य को हर समय सजग रहना चाहिए। प्रमादवश जो मनुष्य सजग नहीं रहते, उन्हीं पर शत्रु आक्रमण कर देते हैं।

गायत्री मन्त्र का 'नः' अक्षर हमें बार २ चेतावनी देता है, कि असावधानी, आलस्य, प्रमाद आदि ऐसे अवगुण हैं, जो मनुष्य का अनजाने रूप से ही विनाश कर डालते हैं। यदि खान, पान, रहन,

सहन, कामकाज और स्वच्छता व नियम संयम में असावधानी हो, तो अनेक रोग धर दबोचते हैं, स्वास्थ्य व शक्ति नष्ट कर डालते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सरादि मानसिक शत्रुओं की ओर से असावधान होते ही वे मन बुद्धि में कुविचार उत्पन्न करके मनुष्य को अधःपतन की ओर घसीट ले जाते हैं। सांसारिक जीवों की ओर से असावधान होते ही चोरों, ठगों, धूर्त चालाकों, हिंसक जीव जन्तुओं इत्यादि के द्वारा शारीरिक, आर्थिक अथवा अन्य प्रकार की हानि हो जाने का प्रतिक्षण भय है। यहाँ तक कि दैनिक कार्यों को करते हुए भी यदि तनिक सी असावधानी हो जाय, तो प्राण-घातक दुर्घटनाएं हो जाती हैं। स्टोव से जल कर मर जाना, बिजली का करेन्ट छू जाना, विषैले जीवों का भोजन में गिर जाने के कारण परिवार के परिवार मृत्यु के मुख में चले जाना, रेल या मोटर दुर्घटना द्वारा अनेक लोगो की मृत्यु हो जाना आदि असावधानी के कुपरिणाम प्रतिदिन हम सबके सामने आते रहते हैं।

गायत्री मन्त्र का 'प्र' अक्षर मनुष्य मात्र को उदारता का महान सद्गुण अपनाने की प्रेरणा देता है।

प्रकृत्या तु भावो दारो नानुदारः कदाचन्।
चिन्तयोदार दृष्ट्यंव तेन चित्तं विशुद्धयति।

अर्थात्--प्रत्येक मनुष्य को स्वभाव से ही उदार होना चाहिए अनुदार कदापि नहीं बनना चाहिए। उदारता के दृष्टिकोण से ही हर चिन्तन करना चाहिए, क्योंकि उससे चित्त शुद्ध होता है।

उदारता मनुष्य के स्वभाव का एक महान गुण है। दूसरों की भूलों, कमियों और अपराधों को क्षमा करते हुए स्वाभाविक रूप से उसका कल्याण चाहना और उसके साथ भलाई का ही व्यवहार करना, दूसरों के विचारों को सहिष्णुता से सुनना और यदि उचित हों, तो उन्हें मानना, ये सब उदारता के लक्षण हैं। अपनी बुद्धि,

विचार, धर्म, रीति मान्यता आदि को ही सर्वश्रेष्ठ व उचित मानकर दूसरों को मूर्ख, बुरा अथवा दोषी समझना अनुदारता है, दुराग्रह, घमण्ड, स्वार्थपरता, संकीर्णता, असहिष्णुता, क्रोधान्धता, अत्याचारिता और अनाचारिता आदि अनुदारता के लक्षण हैं, पाशविकता है। अस्तु इन सब को त्यागकर उदारता का गुण धारण करना हमें इस मन्त्र का 'प्र' अक्षर सिखाता है।

'चो' अक्षर हमें सत्संग करने की प्रेरणा प्रदान करता है। विद्वानों का कथन है—

चोदयत्येव सत्संगो धियमस्तु फलं महत्।
स्वमतो सज्जनै विद्वान् कुर्यात् पर्यावृतं सदा।

अर्थात्—सत्संग ही हमारी बुद्धि को सुप्रेरणा देता है, संसार में सत्संग का फल अत्यधिक महान है। इसलिए विद्वांन मनुष्य वही है, जो अपने को सदैव सज्जन पुरुषों से घिरा हुआ रखे, अर्थात् सत्पुरुषों का सदैव सत्संग करे।

सत्संग की महिमा का वर्णन करना व्यर्थ ही है। सभी धार्मिक ग्रन्थ सत्संग के गुणानुवाद से भरे पड़े हैं। संगति का प्रभाव मनुष्य के मन, बुद्धि और कर्मों पर निश्चित रूप से पड़ता है। जैसे व्यक्तियों की संगति करेगा, वैसे ही उसकी मनोवृत्ति हो जाती है। जुआरी की संगति से मनुष्य जुआरी हो जाता है और शराबी का संग करने से शराबी। व्यभिचारी की संगति उसे व्यभिचार में प्रवृत कर देती है और साधु पुरुषों, विद्वानों, सज्जनों, धार्मिक पुरुषों और महात्माओं का सत्संग करने से मनुष्य की पतित मनोवृत्ति भी बदल कर उसमें धार्मिकता, उदारता, सज्जनता, ईश्वर भक्ति, सत्कर्मों की प्रेरणा आदि उत्तम गुणों, विचारों और कर्मों का प्रादुर्भाव होता है। कुपथगामी, नीच, दुष्ट क्रूर नराधम भी सत्संग के प्रभाव से महात्मा बन जाता है, सन्मार्ग पर आ जाता है, मोक्ष को प्राप्त होता है।

छोटे शिशुओं के कोमल मस्तिष्क पर परिवारजनों और पड़ौसियों के व्यवहार संस्कार का अमिट प्रभाव पड़ता है, इसलिए हमारा कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व है, कि हम घर में स्वयं भी श्रेष्ठ आचरण करें, दूसरों को भी अच्छे आचरण करना सिखाएं, ताकि छोटे शिशु भी स्वभावगत अनुकरण के कारण अच्छे आचरण सीखें। उनमें अच्छे संस्कारों का निर्माण हो। कुछ बड़े होने पर उन्हें बुरे स्वभाव और कुसंस्कारी बच्चों के कुसंग से बचाएं, और अच्छे सुसंस्कारी सज्जन बालकों का साथ करने की प्रेरणा दें।

बड़े पुरुषों को भी सदैब उत्तम सद्ज्ञान प्रदान करने वाली पुस्तकों का अध्ययन करना, उत्तम पुरुषों और गुणी महात्माओं का सत्संग करना, विद्वानों के साथ उठना बैठना और विचार विमर्श करना तथा मेष समय परमात्मा के भजन, और आराधना में लगाना चाहिए। किन्तु कुटिल, धूर्त, लोभी, लालची, मूर्ख, कुसंस्कारी, दुर्व्यसनी और दुराचारी व्यक्तियों का एक पल के लिए भी साथ नहीं करना चाहिए।

'द' अक्षर हमें आत्मदर्शन के महत्व का बोध कराता है। विद्वानों ने कहा है —

> दर्शनं ह्यात्मनः कृत्वा जानीयादात्म - गौरवम्।
> ज्ञात्वा नु तत्तदात्मानं पूर्णोन्नति पथं न येत्।

अर्थात्--आत्म दर्शन करके आत्मा के गौरव को पहिचानो और उसे पहिचान कर ही आत्मा को पूर्ण उन्नति के मार्ग पर ले चलो।

मनुष्य के शरीर में आत्मा का जो अस्तित्व है, वही परमात्मा है। आत्मा परमात्मा का ही रूप है, उसी की शक्ति है, उसीका अंश है, प्रत्युत आत्मा स्वयं परमात्मा है। परमात्मा का रूप होने के कारण आत्मा सत् है, अनश्वर है, महान है। इस आत्मा के अस्तित्व के कारण ही प्रत्येक मनुष्य चाहे वह नीच से नीच, पतित से

पतित और दुराचारी से दुराचारी हो, भगवान का ही रूप है। उनकी बुद्धि, इन्द्रियों और मन को अवश्य बुराइयों ने, असत् ने घेर लिया है, किन्तु आत्मा उसकी भी उसी प्रकार निर्मल और पवित्र है, जिस प्रकार किसी महात्मा की, देवता की, या स्वयं परमात्मा की। इस प्रकार ब्रह्म रूप सत् आत्मा सदैव उत्तम पवित्र विचारों, सत् वचनों और सत्कर्मों की ओर ही मनुष्य को प्रेरित करती है और उन्हीं में आनन्द की अनुभूति प्राप्त करती है। किन्तु ईश्वर की माया ऐसी बलवान है, कि अज्ञान का अन्धकार होते ही मनुष्य आत्मा के निर्देश और प्रेरणा की अवहेलना करके काम क्रोध लोभ मोह आदि के वशीभूत हो अधर्माचरण करने में प्रवृत्त हो जाता है। उसके मनबुद्धि आदि सब पर अन्धकार छा जाता है, किन्तु आत्मा सदैव निर्मल और पवित्र रहती है। ईश्वर भक्ति, प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, सत्संग, सद्ज्ञान अथवा सद्गुरु की कृपा से जैसे ही उसका अज्ञानांधकार दूर होता है, उसके मन बुद्धि इन्द्रियों आदि सब में आत्मा का धवल प्रकाश फैल जाता है और वह कुमार्ग को त्याग कर धर्म मार्ग पर चलने लगता है। इस अपनी आत्मा के बल से हम ईश्वर को प्राप्त कर सकते हैं, आत्मज्ञान ही ब्रह्म ज्ञान है, अस्तु जो ईश्वर को जानना है तो सबसे पहले हमें अपनी ही आत्मा को पहिचानना, समझना उसकी प्रेरणा और आदेशानुसार आचरण व्यवहार करना चाहिए। अच्छे काम करने से आत्मा सुखी होती है, मनुष्य में आत्म गौरव, आत्म सम्मान, आत्म-विश्वास और आत्म-विकास की भावना उत्पन्न होती है और यह भावना ही हमें ऊँचा उठाती है। बुरे कर्म करने से आत्म ग्लानि, आत्म क्लेश और आत्म हनन की भावना उत्पन्न हाती है जो कि अधर्म और पतन के गर्त में ले जाती है।

अस्तु गायत्री मंत्र के इस 'द' अक्षर से प्राप्त आत्मज्ञान के बोध और सन्देश को हमें भली प्रकार हृदयंगम कर लेना चाहिए, क्योंकि

यही ज्ञान हमारी आध्यात्मिक उन्नति का समग्र और सर्वश्रेष्ठ सम्बल है।

गायत्री मंत्र का 'या' अक्षर मनुष्य मात्र को पिता के गुरुतर उत्तरदायित्व का बोध कराता है। लिखा है—

यायात्स्वोत्तरदायित्वं निर्वहन जीवने पिता।
कुपितापि तथा पापः कुपुत्रोऽविर यथा मतः।

अर्थात्—पिता का कर्त्तव्य है कि वह जीवन में अपने महान उत्तरदायित्वों का पालन करे, क्योंकि कुपिता भी उसी प्रकार पाप भागी होता है, जिस प्रकार कि कुपुत्र।

पिता घर का स्वामी, शासक, संरक्षक और पोषक होता है। भरण-पोषण और सुख साधन जुटाना मात्र ही पिता का कर्त्तव्य नही, अपितु परिवार में अनुशासन, परस्पर आदर और स्नेह, मधुर व्यवहार, मृदुभाषण, अच्छे संस्कार, अच्छी शिक्षा प्राप्त करने की व्यवस्था, परस्पर प्रेम, त्याग, बलिदान, और एकता, दुष्टों से संरक्षण प्रदान करना, बुरे लोगों की संगसि से बचाना, जीवन में उन्हें सर्वाङ्गीण उन्नति करने की सुविधाएं और अवसर जुटाना, सद्‌गुण और सद आचरण अपनाने की प्रेरणा देना इत्यादि-२ अनेक गुरुतर उत्तरदायित्व पिता के ही कंधों पर होते हैं और वह सुपिता कहलाने का तभी अधिकारी है जब कि समस्त उत्तरदायित्वों को पूरा करे। यदि वह आलस्य, शिथिलता, धनोपार्जन के लालचवश, दुर्व्यसनों के वशीभूत हो, कुसंगति में पड़कर अथवा अन्य किसी भी कारण से अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह नही करता, तो उसे कुपिता ही कहा जायगा और ऐसा अनुत्तरदायी कुपिता भी उतना ही पापभागी और निन्दनीय होता है, जितना कि उद्दण्ड, दुराचारी, दुर्व्यसनी, दम्भी, धूर्त और पापी कुपुत्र होता है।

पिता के उत्तरदायित्व ठीक प्रकार से पालन न करने के कारण

ही उसकी सन्तान पतित और कुपथगामिनी हो जाती है और सामाजिक जीवन में बुराइयों को फैलाकर अपने साथ-२ समाज का, दूसरों का भी अहित करती है। प्रायः सन्तान अपने पिता के कुविचारों, कुसंस्कारों और कुव्यसनों के प्रभाव और अन्धानुकरण से भी कुपथगामी हो जाती है और फिर ऐसा कुपुत्र बड़ा होकर अपने माता-पिता के साथ भी वैसा ही आचरण करता है, जैसा कि दूसरों के साथ। तब वे मूढ़मति माता-पिता पुत्र को तो कुपुत्र कहकर निन्दा करते हैं, सिर पीटते हैं, रोते हैं और अपने भाग्य को कोसते हैं, किन्तु यदि प्रारम्भ से ही वे अपना उत्तरदायित्व निभाते हुए, पुत्र को अनुशासन में रखते, उसमें अच्छे गुण और संस्कार उपजाते, तो उन्हें बुढ़ापे में ये दुर्दिन क्यों देखने पड़ते। प्रायः अज्ञानी पिता मोह के वशीभूत हो बाल्यावस्था में बच्चे के प्रत्येक हठ को पूरा करते हैं, उनमें उपजती हुई बुराइयों पर वे हंस-२ कर आनन्द लेते हैं, उनकी ओर ध्यान नहीं देते और जब वे बुराइयाँ पनपकर बढ़ जाती है, बच्चा बड़ा होकर सशक्त और आत्मनिर्भर हो जाता है, तब वे ही बचपन की बुराइयाँ वह हठधार्मियाँ उनके लिए शूल बन जाती हैं।

अस्तु गायत्री महामंत्र का 'या' अक्षर पिता के महान उत्तरदायित्व को पूरा करने के प्रति मनुष्य मात्र को सजग रहने का सन्देश देता है। क्योंकि इसमें थोड़ी सी भी शिथिलता होने से स्वयं उसका, परिवार का, सन्तान और भावी सन्तानों का तथा समस्त मानव समाज का घोर अहित और विनाश होता है। यदि प्रत्येक पिता सुपिता हो जाय, तो निश्चय ही भूलोक से बुराइयों का अन्त होकर यह धरा स्वर्ग बन जाय। यहाँ दुख और कष्ट का नाम भी न रहे। आवश्यक नहीं कि पिता प्रकाण्ड विद्वान ही हो। किन्तु उसमें इतनी समझ अवश्य हो, कि वह भले और बुरे में भेद कर सके। स्वयं घर में अच्छे आचरण करे, सबको अच्छे मार्ग पर चलाए और

सन्तान में सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा और मति उत्पन्न कर दे। जब उसके संस्कार अच्छे होंगे, स्वभाव और रुचि पवित्र होगी, तो ज्ञान तो वह स्वयं प्राप्त कर लेगा। और सन्मार्ग पर चलते हुए भौतिक व आध्यात्मिक उन्नति करेगा।

गायत्री मंत्र के अन्तिम अक्षर 'त' में निहित गूढ़ भाव बताते हुए आचार्यों ने लिखा है—

तथा चरेत्सदान्येभ्यो वाञ्छन्त्यैर्यथा नरः।
नम्रः शिष्टः कृतज्ञश्चः सत्य साहाय्यवान् भवेत।

अर्थात्—मनुष्य दूसरों द्वारा अपने प्रति जैसे व्यवहार की इच्छा रखता है, उसे स्वयं दूसरों के प्रति वैसा ही व्यवहार करना चाहिए। उसे सबके प्रति विनम्र, शिष्ट, कृतज्ञ, और सच्चाई के साथ सहयोग की भावना वाला होना चाहिए।

संसार में मनुष्य को परस्पर व्यवहार करने की कितनी सुन्दर शिक्षा मिलती है। 'व्यवहार' का इससे उत्तम अन्य कोई रूप हो ह नहीं सकता। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति दूसरों से यही अपेक्षा रखता है कि वे उसका आदर मान करें, शिष्टता पूर्ण व्यवहार करें, प्रेम करें, विपत्तिकाल में पूर्ण सहयोग प्रदान करें, उससे अनजाने में कोई भूल हो जाय, तो क्षमा करदें, लेन देन में सच्चाई और ईमानदारी का व्यवहार करें, उसकी बहू बेटियों को अपनी बहू बेटी के रूप में देखें, उनपर कुदृष्टि न डालें, इत्यादि-२। किन्तु यदि प्रत्येक मनुष्य जो अपेक्षाएं दूसरों से रखता है यदि स्वयं भी दूसरों के प्रति ठीक वैसा ही व्यवहार करे, तो प्रत्येक मनुष्य देवता हो जाय और यह पृथ्वी प्रेम, सुख, शाँति और सद्गुणों की खान बन जाय। परन्तु—होता इसके विपरीत है। मूर्ख लोग, दूसरों से तो अच्छे व्यवहार की अपेक्षा करते हैं, किन्तु स्वयं लोभ लालच, मद, अभिमान, क्रोध, काम आदि के वशीभूत हो मनमाने ढंग से दुर्व्यवहार करते हैं और प्रतिकार में

जब उन्हें दूसरों से वैसा ही व्यवहार मिलता है, तो बौखला जाते हैं, तब दुखी होते है, क्रोध से पागल हो उठते हैं। उनसे पूछो—अरे भाई ! यदि तुम स्वयं दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार करो, तो तुम्हारे साथ कोई दुर्व्यवहार क्यों कर करे ?

अस्तु हमें सदैव गायत्री मंत्र की 'पारस्परिक व्यवहार' के प्रति अनूठी और कल्याणकारी शिक्षा को ध्यान में रखकर उसे अपने आचरण और व्यवहार में अपनाना चाहिए। इसी में हमारा भी सुख व कल्याण है और दूसरों का भी। दूसरों के दोष निकालने से पूर्व हमें अपने दोषों पर भी दृष्टिपात कर लेना चाहिए।

गायत्री महात्म्य चिन्तवन

वेदों, शास्त्रों स्मृतियों, पुराणों गीता, उपनिषद्ों आदि में महाशक्ति जगदम्बा गायत्री का महात्म्य जिन शब्दों में वर्णन किया गया गया है, उसकी एक झलक शङ्कालुजनों की शङ्का निवारणार्थ तथा भक्तजनों की श्रद्धा और विश्वास को दृढ़ करने हेतु यहाँ प्रस्तुत की जा रही है, कृपया अवलोकन करें और आदि-शक्ति गायत्री के स्वरूप को समझें।

१—शिव पुराण में वर्णन है—भगवान शङ्कर पार्वती जी को अपना अत्यन्त गुप्त और गूढ़ रहस्य प्रकट करते हुए कहते हैं——

गायत्री वेदमातास्ति साद्या शक्तिर्मता भुवि
जगतां जननी चैव तामुपासेऽहमेव हिः।

अर्थात्— 'गायत्री चारों वेदों की माता (जननी) है, भू लोक पर वह आद्या-शक्ति है। वह ही इस समस्त जगत की माता है, मैं उसी की उपासना करता हूं। और—

गायत्र्येव तपो योगः साधनं ध्यान मुच्यते।
सिद्धिनां सा माता नातः किंचिद् वृहत्तरम।

अर्थात्—गायत्री ही तप है, गायत्री ही योग और साधन है, गायत्री ही ध्यान है और वही समस्त सिद्धियों की माता है। गायत्री से बढ़कर कोई अन्य देवता नहीं।

साथ ही भगवान शङ्कर कहते हैं—

गायत्री साधना लोके नमस्यापि कदापि हि।
याति निष्फलता मेतत् ध्रुवं सत्यं हि भूतले।

अर्थात्—संसार में कभी भी किसी की गायत्री साधना कदापि निष्फल नहीं होती, यह पृथ्वी लोक पर ध्रुव सत्य है।

२—शंख-स्मृति में गायत्री की महिमा का गुणगान इन शब्दों में मिलता है :—

गायत्री वेदजननी च गायत्री पापनाशिनी।
गायत्र्यास्तु परं नास्ति दिवि चेह च पावनम।

अर्थात्—गायत्री वेदमाता है, गायत्री समस्त पापों को नष्ट करने वाली है, इहि लोक और परलोक दोनों में गायत्री से उत्तम पवित्र करने वाला और कोई नहीं।

३—अथर्व वेद में गायत्री की स्तुति करते हुए लिखा है—

'स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणः प्रजां पशु कीर्ति द्रविणं ब्रह्मवर्चसं।

अर्थात्—मैं वेदमाता गायत्री की स्तुति करता हूं, जो वरदान देने वाली हैं, द्विजों को पवित्र करने वाली तथा प्रेरणा देने वाली हैं। आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति धन और ब्रह्मतेज प्रदान कर गायत्री माता ब्रह्मलोक को प्राप्त करावे।

४—गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं :—

'गायत्री छन्दसामहम'

अर्थात्—छन्दों में मैं गायत्री हूं।

५—मनुस्मृति में गायत्री का महत्व दरशाते हुए लिखा है :—

'एकाक्षरं परं ब्रह्म प्राणायामः परन्तपाः
सावित्र्यास्तु परन्नास्ति पावनं पर स्मृतम।

अर्थात्—एकाक्षर ॐ परब्रह्म है, प्राणायाम परम तप है और गायत्री मन्त्र से बढ़कर पवित्र करने वाला कोई मन्त्र नहीं।

और— जप्येनैव तु संसिद्धयेत् ब्राह्मणो नात्र संशयः।
कुर्यादन्यन्न वा कुर्यान्नैत्रो ब्राह्मण उच्यते।

अर्थात्—ब्राह्मण अन्य कोई जप तप करे या न करे, किन्तु वह केवल गायत्री उपासना से ही सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

अस्तु हे विद्वजन !

उपरोक्त उदाहरणों से आप भली प्रकार समझ सकते हैं कि गायत्री की शक्ति, महात्म्य और कल्याणकारी उपयोगिता अपार है, अद्वितीय है, विश्व में प्राणिमात्र के लिए गायत्री माता की उपासना भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की उन्नति के लिए सर्वश्रेष्ठ अवलम्बन है। वह द्विज द्विज नहीं, वह ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं, जो गायत्री की नियमित रूप से पूर्ण श्रद्धा और विश्वास सहित उपासना नहीं करता। उसका जीवन निष्फल है, चाहे वह चारों वेदों का ज्ञाता हो। गायत्री की महिमा अनन्त है, जैसा कि आप पुस्तक में वर्णित गायत्री जी के महात्म्य और शक्ति के विषय में जानेंगे, किन्तु यह ध्रुव सत्य है कि—

गायत्र्यास्तु परं नास्ति दिवि चेह न पावनम।
हस्तत्राणप्रदां देवी पततां नरकार्णवे।

—नरक सागर में डूबते हुए को हाथ पकड़कर बचाने वाली गायत्री के समान पवित्रकारिणी शक्ति न तो पृथ्वी पर दूसरी है और न ही स्वर्ग लोक में।

वेदमाता गायत्री

★ गायत्री मन्त्र की अनन्त गुप्त शक्तियाँ तथा गायत्री साधना के प्रत्यक्ष लाभ

★ तन्त्रोक्त गायत्री-सिद्धि साधना और उसके फलितार्थ

★ गायत्री के आध्यात्मिक रहस्य ऋषि मुनियों व वेद पुराणों, द्वारा गायत्री महात्म्य का वर्णन

गायत्री मंत्र की अनन्त गुप्त शक्तियाँ

गायत्री मंत्र के गर्भ में अनन्त शक्तियाँ छुपी हुई हैं, जिसका आज तक कोई पार नहीं पा सका है। अगणित ब्राह्मण, ऋषि, महात्मा, विद्वान, धर्माचार्य और भक्तजन आदि काल से गायत्री की साधना करते आए हैं और उससे उन्हें नाना प्रकार की दिव्य और अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त होती रही हैं। जब माता गायत्री स्वयं ब्रह्मरूपिणी है, तो ऐसी कोई दिव्यशक्ति नहीं, ऐसा कोई दिव्य ज्ञान नहीं, जो गायत्री साधना से प्राप्त न हो सके। वस्तुतः कुछ काल तक पूर्ण निष्ठा, विश्वास, भक्ति और तन्मयता के साथ गायत्री मंत्र की साधना करने से मनुष्य की आत्मा पर पड़ा हुआ माया मोह का मैला पर्दा दूर हो जाता है, उसकी बुद्धि आत्मा के तेज से चमक उठती है और इसी प्रकार निरन्तर साधना से जब उसकी आत्मा नितान्त निर्मल होकर अपने पूर्ण ओज और तेज को फैलाती है, तो उसे अपने अन्तःकरण में साक्षात् ब्रह्म का दर्शन या आभास होने लगता है। यहाँ गायत्री मंत्र साधना से प्राप्त कुछ शक्तियों-गुणों का बोध कराया जा रहा है।

गायत्री मंत्र साधना के कुछ प्रत्यक्ष लाभ

(१) गायत्री मंत्र की साधना करने वाले व्यक्ति के ललाट और मुखमण्डल पर एक विशेष प्रकार का तेज और आकर्षण उत्पन्न हो जाता है, नेत्रों में एक दिव्य ज्योति उत्पन्न होती है, वाणी में प्रभाव, गम्भीरता और सत्यता प्रगट होती है, उनके सम्पर्क में आने वाला कोई व्यक्ति प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

(२) गायत्री मंत्र की साधना करने वाला व्यक्ति कुछ काल उपरान्त ही अपने भीतर एक दिव्य शक्ति, तेज और प्रकाश का अनुभव करने लगता है। उसके अंग-२ में एक दैवी शक्ति का प्रादुर्भाव हो जाता है, जिसके द्वारा वह असम्भव प्रतीत होने वाले कार्य करके लोगों को चमत्कृत कर देता है।

(३) उसकी, मनोवृत्ति स्वतः निर्मल होकर बुराइयों की ओर से विमुख होने लगती है और शुभ कार्यों को और प्रेरित होने लगती है। यदि भूल से कोई बुराई हो भी जाय, तो मन में भारी पश्चात्ताप होता है।

(४) वह जिस स्थान पर रहता है, उसके आस पास का भी स्थान एक अद्भुत शांति, पवित्रता, स्निग्धता, सौम्य तथा सात्विकता से ओत-प्रोत हो जाता है। वहाँ आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा अनुभव होता है, मानों वह किसी देवस्थान अथवा किसी तपस्वी के आश्रम में आ गया हो।

(५) गायत्री साधक कुछ कालोपरान्त उस अवस्था में पहुँच जाता है, कि सांसारिक माया-मोह की लिप्तता क्षीण या समाप्त प्राय हो जाती है। उसे न सुख वैभव में हर्ष होता है, और न विपत्ति या कठिनाई में दुख का अनुभव होता है। वह हर समय धीर, स्थिर, शांत और प्रसन्नचित्त दिखाई देता है।

(६) वह अपने सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति के मन के गुप्त से गुप्त भाव को भी तत्काल जान लेता है। उसके अच्छे बुरे विचार, गुण, दोष, आचरण आदि को अपनी सूक्ष्म दृष्टि द्वारा इस प्रकार देखने और जानने लगता है, मानों वह उस व्यक्ति के मन के भीतर ही बैठा हुआ सब कुछ जान रहा है।

(७) इसी प्रकार गायत्री साधक अपने विचारों और भावों को दूसरों के मन में बिना बताए अथवा बिना किसी अन्य साधन के प्रवेश करा सकता है।

(८) उसकी वाणी में इतनी सत्यता और शक्ति उत्पन्न हो जाती है कि उसके मुख से निकलने वाले वचन कभी झूठ नहीं होते। वह क्रोधित या दुखी होकर जिसे शाप दे देता है, उसका अनिष्ट अवश्यम्भावी है और प्रसन्न होकर जिसे आशीर्वाद दे दें, उसका मंगल निश्चित रूप से होता है।

(९) गायत्री साधक की दिव्य सूक्ष्म दृष्टि भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों में होने वाली घटनाओं को कभी भी बैठे-२ देख सकती है। प्रारम्भ में उसे भावी घटनाओं का अस्पष्ट सा आभास होता है और फिर शनैः शनैः उसे सब कुछ स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

(१०) गायत्री साधक अपने तप, आयु या शक्ति का एक अंश किसी अन्य व्यक्ति को दे सकता है और इस प्रकार दूसरे दुर्बलों, रोगियों, मरणासन्न व्यक्तियों आदि का हित कर सकता है।

(११) उसे ध्यानावस्था, स्वप्नावस्था अथवा जागृत अवस्था में नाना प्रकार के दिव्य प्रकाश पुंज, दिव्य ध्वनियाँ तथा वाणियाँ आदि सुनाई पड़ती हैं, जिनके द्वारा उसे ब्रह्माण्ड के अनेक अद्‌भुत अलौकिक अनुभव तथा ज्ञान प्राप्त होते हैं।

(१२) गायत्री मंत्र की तान्त्रिक पद्धति से साधना करने वालों को किसी भी व्यक्ति को मारने, जीवित कर देने, वशीभूत करने आधीन करने, गुप्त करने या प्रकट करने आदि की अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त होती है, ऐसा प्राचीन ग्रन्थों में वर्णन मिलता है, किन्तु साथ ही यह चेतावनी भी दी गई है, कि इस प्रकार प्राप्त हुई दैवी शक्ति का साँसारिक लाभों के लिए प्रयोग सर्वथा वर्जित हैं। किसी को दुर्भावना वश हानि पहुँचाने वाला ऐसा साधक अपनी शक्ति गंवा कर अन्त में घोर यातनाओं को प्राप्त होता है।

उक्त १२ प्रकार के लाभ अथवा सिद्धि लक्षण तो स्पष्ट रूप से गायत्री साधक में परिलक्षित होते हैं, किन्तु इनके अतिरिक्त और भी

अनेक आध्यात्मिक शक्तियाँ उसमें प्रस्फुटित हो जाती हैं, जो कि उसकी बुद्धि, अन्तः करण और शरीर में चमत्कारी सिद्धियाँ उत्पन्न कर देते हैं। वह नारद जी के समान उस दिव्य शक्ति द्वारा तीनों लोकों में सूक्ष्म रूप में विचरण कर सकता है, देवताओं और साक्षात् भगवान का साक्षात्कार कर सकता है। किन्तु ऐसी उत्कृष्ट शक्ति तभी प्राप्त हो सकती है, जबकि अन्तःकरण सांसारिक माया-मोह से नितान्त रहित, परम पवित्र, आध्यात्मिक ज्ञान बल से परिपूर्ण और ईश्वर व धर्म में पूर्णतया लीन हो जाता है। क्योंकि वह तो सिद्धि की पराकाष्ठा है। उसे प्राप्त करना बच्चों का खेल नहीं। जन्म-जन्मातरों के तप और साधना के उपरान्त ऐसी शक्ति व सिद्धि प्राप्त होती है। किन्तु यह असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि यह कोई असम्भव बात नहीं है। गायत्री मंत्र और गायत्री माता में वह शक्ति है, जिसकी साधना द्वारा यह सब कुछ प्राप्त हो सकता है।

सांसारिक प्रयोजनों के लिए गायत्री साधना

गायत्री मंत्र सर्वोपरि मंत्र है और इसमें अनन्त शक्ति भरी हुई है, अस्तु सांसारिक जीवन में भी गायत्री मंत्र साधना द्वारा अनेक प्रकार के लाभ और प्रयोजन सिद्ध होते हैं, यदि वे उपयुक्त विधि विधान द्वारा किए जांय। यहाँ कुछेक साधकों द्वारा अनुभव-सिद्ध तथा प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित विविध प्रयोजनों की सिद्धि के लिए किए जाने वाले उपयुक्त विधि विधान लिखे जा रहे हैं, जिनसे निष्ठावान साधक पर्याप्त लाभान्वित होंगे। किन्तु यहाँ एक बार हम पुनः सावाधन कर देना चाहते हैं, कि अपवित्र शरीर, मन और अपवित्र भावना से, उचित अधिकारी न होने पर, किसी का भी अहित करने का विचार लेकर, किसी भी प्रकार का आर्थिक लोभ लालच मन में रखकर उस साधना को करने वाला साधक अपना

ही भारी अनिष्ट कर लेगा । ये दैवी शक्तियाँ तो साधु भाव से दूसरों का कल्याण करने की इच्छा से स्वयं अपने लिए किसी भी प्रकार का लोभ लालच अथवा इच्छा न रखकर पवित्र शरीर व अन्तः करण से उचित अधिकारी द्वारा किए जाने पर सिद्ध होती है और तभी उनसे लाभ पहुँचता है।

गायत्री साधन के लिए उपयुक्त और अधिकारी साधक कौन है, जिसे गायत्री की शक्ति एक लघु सीमा तक सिद्ध हो सकती है, यह भली प्रकार समझ लीजिए :—

(१) यज्ञोपवीनधारी तथा उसके नियम धर्म का पालन पवित्रता के साथ करने वाला द्विज हो ।

(२) कम से कम गायत्री मंत्र की एक माला जिसने बारह वर्ष तक निरन्तर रूप मे नियम पूर्वक जपी हो ।

(३) साथ ही जिसने कम से कम ६ वर्ष तक गायत्री की ब्रह्म-संध्या को नियय पूर्वक किया हो ।

(४) कम से कम पांच वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए जिसने प्रति दिन एक हजार बार मंत्र का जप किया हो ।

(५) अथवा २८ लाख गायत्री जप का अनुष्ठान जिसने विधिविधान और नियमपूर्वक पुरा कर लिया हो ।

उक्त प्रकार के व्यक्ति ही गायत्री सिद्धि के उपयुक्त अधिकारी हो सकते हैं। गायत्री मंत्र सिद्धि हो जाने के पश्चात् उनसे निम्न विधान द्वारा अनेक सांसारिक शुभ प्रयोजन सिद्ध किए जा सकते हैं।

असाध्य रोग निवारण करने के लिए :—

किसी अन्य रोगी को रोग मुक्त करना हो, तो हरे वस्त्र धारण करने वाली बैल पर सवार गायत्री के रूप का ध्यान करते हुए मन ही मन गायत्री मंत्र का जप करें और रोगी के पीड़ित अंग पर हाथ फेरते हुए, ध्यान जमाकर तथा जल अभिमंत्रित करके छिड़कें,

तथा इसी विधि से तुलसी दल और काली मिर्च गंगाजल में पीसकर अभिमंत्रित करके रोगी को पिलाएं। मंत्र जाप के मध्य एक बार मंत्र पूर्ण होने पर बीच में 'बीज मंत्र' का सम्पुट देकर तब दुबारा मंत्र आरम्भ करें। कफ़ प्रधान रोगों में 'एं' बीज मंत्र का सम्पुट दें। पित्तजनित रोगों में 'ऐं' तथा वात जनित और विषजनित रोगों में 'हूं' बीजमंत्र का प्रयोग करें।

यदि स्वयं रोग-ग्रस्त हो, तो शैया पर पड़े-२ ही मन ही मन गायत्री मंत्र का पूर्वोक्त विधि से जप करते रहें। इस प्रकार गायत्री मंत्र की शक्ति असंदिग्ध रूप से चमत्कारी लाभ प्रकट रूप से दिखाती है। अनेक ऐसे असाध्य रोगी, जिन्हें बड़े-२ डाक्टर जवाब दे चुके थे, इस महामंत्र की शक्ति द्वारा पूर्णतया नीरोग हो चुके हैं।

भूत प्रेतादि की छाया दूर करने के लिए—

यद्यपि आजकल के अंग्रेजी पढ़े नवयुवक भूत-प्रेतादि को नहीं मानते, किन्तु जब प्रत्यक्ष रूप से ऐसे उदाहरण सामने आते हैं, तो मानना ही पड़ता है। भूत-प्रेतादि की छाया का प्रभाव होने पर भला चंगा मनुष्य सहसा उन्मादियों जैसी विलक्षण चेष्टाएं और क्रियाएं करने लगता है। स्पष्ट प्रतीत होता है कि उस पर किसी अन्य अदृश्य आत्मा (जीव) ने अधिकार जमा लिया है।

इस प्रकार से किसी भी स्त्री-पुरुष, बालक या पशु पर भूत-प्रेत की छाया हो जाने पर गायत्री का पवित्रता के साथ हवन करना सर्वश्रेष्ठ उपाय है। उस समय सतोगुणी हवन सामग्री द्वारा विधि पूर्वक यज्ञ करें और छाया से ग्रसित रोगी को हवन कुण्ड के पास ही बिठालें। हवन की अग्नि में तपाया हुआ पानी रोगी के मुख में डालें। यज्ञ की भस्म (राख) उसके हृदय, ग्रीवा, मुख, नेत्र, नासिका मस्तक आदि पर लगाने से भी भूत-प्रेत की छाया हट जाती है और रोगी स्वस्थ चित्त व सामान्य अवस्था में आ जाता है।

दरिद्रता निवारण के लिए :—

घर में घोर दरिद्रता छा गई हो, आय के साधन छिन्न-भिन्न हो गए हों, बच्चों का पालना भी दूभर हो रहा हो, कोई काम या व्यापार करे, तो लाभ प्राप्त होने के बजाय हानि हो जाती हो, ऋण, बेकारी, आदि के चंगुल में फंस गया हो, उस दशा में गायत्री मंत्र की साधना बड़ा चमत्कारी प्रभाव प्रकट करती है, कुछ दिनों में ही आय के नए-२ साधन जुट जाते हैं, आर्थिक कष्टों, अभावों और दरिद्रता का नाश होकर घर में सुख, सम्पत्ति और शाँति का प्रादुर्भाव होने लगता है।

इसके लिए गायत्री की 'श्री' शक्ति की उपासना करनी चाहिए और प्रत्येक मंत्र जाप के पश्चात् तीन वार 'श्री' का सम्पुट लगाना चाहिए। यथा सम्भव साधना के समय पीले वस्त्र, पीला यज्ञोपवीत, पीला तिलक, चन्दन, व आसन, पीले पुष्प आदि का ही प्रयोग करना चाहिए। सम्पूर्ण शरीर पर हल्दी मिले हुए तेल की मालिश करनी चाहिए और रविवार के दिन उपवास रखकर पीले ही रंग का फलाहार ग्रहण करना चाहिए। उस साधना में पीताम्बर धारिणी गजवाहिनी गायत्री के स्वरूप का ध्यान व चिन्तन करना चाहिए। पीतवर्ण लक्ष्मी का प्रतीक माना गया है, अस्तु इस प्रकार पवित्रता व निष्ठा के साथ विधिविधान पूर्वक गायत्री मंत्र का जप साधन करने से मनुष्य की कठिनाइयां दूर होती हैं, दरिद्रता का नाश होकर धन-धान्य और सुख सम्पत्ति की वृद्धि होती है। उस साधना में सन्तोष जनक फल प्राप्त करने के लिए साधक के मन में अगाध श्रद्धा और अखण्ड विश्वास होना परम आवश्यक है क्योंकि 'विश्वासं फल दायकम्' होता है।

सन्तान प्राप्ति के लिए :—

यदि किसी माता-पिता के सन्तान न होती हो, अथवा सन्तान

होकर मर जाती हो, अथवा लड़कियाँ ही लड़कियाँ होती हों और वे पुत्र का मुख देखने के लिए तरस रहे हों, तो माता भगवती गायत्री की उपासना से उनका दुख दूर होकर सन्तान लाभ या पुत्र लाभ प्राप्त हो सकता है।

इस प्रयोजन सिद्धि के लिए माता-पिता दोनों को ही पूर्ण निष्ठा भाव से माता पर अनन्य श्रद्धा और अडिग विश्वास रखते हुए उपासना करनी चाहिए और उनसे दया कृपा की भिक्षा मांगनी चाहिए। साधना की विधि इस प्रकार है :–

नित्य प्रातः काल शौचादि से निवृत्त हो स्नान कर तथा धुले हुए स्वच्छ पवित्र वस्त्र धारण कर पूर्व दिशा में मुख करके आसन पर बैठें और आँखें बन्द करके अपने चित्त व ध्यान को श्वेत वस्त्र धारिणी किशोर आयुवाली, कमल का पुष्प हाथ में धारण किए हुए भगवती गायत्री के रूप में एकाग्र करें, तथा चन्दन की माला हाथ में लेकर गायत्री मंत्र का जप करें। प्रत्येक बार मंत्र की समाप्ति पर 'ऐं' बीज के तीन सम्पुट लगाते जाएं।

नासिका द्वारा दीर्घ श्वास खींचकर पेड़ू तक ले जाएं और पेड़ू को जितना वायु से भरा जा सके भरें। फिर श्वास रोककर 'यँ' बीज मंत्र का सम्पुट सहित कम से कम एक और अधिक से अधिक तीन बार जप करें। उपरान्त धीरे-२ श्वास को बाहर निकालें। इस प्रकार पेड़ू में गायत्री की शक्ति का आकर्षण और धारण कराने वाला यह प्राणायाम दस बार करें। अन्त में अपने वीर्य कोष तथा स्त्रियाँ गर्भाशय में शुभ्रवर्ण ज्योति का ध्यान करें। तथा साधना काल में प्रत्येक रविवार को दूध, चावल, दही आदि श्वेत वस्तुओं का भोजन करें।

इस विधि-विधान सहित माता गायत्री की उपासना निरन्तर रूप से करते रहने पर सन्तानहीन माता पिता को भी सुन्दर, स्वस्थ, तेजस्वी, बुद्धिमान और गुणवान पुत्र या पुत्री प्राप्त होती है, तथा

जिसकी सन्तान उत्पन्न होकर अकाल मृत्यु के मुख में चली जाती हो, उनकी सन्तान मां की कृपा से सुरक्षित रहकर दीर्घ जीवन प्राप्त करती है। विश्वास रखिए, संसार में ऐसा कोई दुख नहीं जो माँ भगवती गायत्री की कृपा से न मिट सके।

राज-काज में सफलता प्राप्त करने के लिए :—

न्यायालय में चल रहे मुकदमे में जीत के लिए, सरकारी नौकरी प्राप्त करने के लिए, अफसरों से साक्षात्कार में सफल होने के लिए, सरकारी अधिकारियों से अपने मनोनुकूल कार्य सिद्धि तथा लाइसेन्स, परमिट, कोटा आदि प्राप्त करने के लिए, तात्पर्य यह कि सरकारी कार्यालयों या अधिकारियों से वांछित निर्णय प्राप्त करने के लिए गायत्री साधना सर्वाधिक सहायक सिद्ध होती है। रिश्वत, सिफारिश भाग दौड़, भ्रष्टाचार आदि का सहारा न लेकर यदि निर्मल अन्तः करण से माँ गायत्री की शरण गहे, तो निश्चय ही सफलता प्राप्त होती है।

इस प्रयोजन सिद्धि के लिए साधक को यह देखना चाहिए कि उसका कौन सा स्वर चल रहा है। यदि दाहिना स्वर चल रहा हो, तो पीतवर्ण ज्योति का ध्यान करें और यदि बायाँ स्वर चल रहा हो, तो हरे रंग की ज्योति (प्रकाश) अर्थात् 'ॐ भूर्भुवः स्वः तपः जनः महः सत्यम्' लगाते हुए मन ही मन बारह बार जप करे। जप करते समय साधक की दृष्टि उस हाथ के अंगूठे पर जमी होनी चाहिए, जो कि स्वर चल रहा हो। इस प्रकार नित्य नियम पूर्वक साधना करने के पश्चात् जब कार्य-सिद्धि के हेतु किसी अधिकारी या कार्यालय में जाए अथवा प्रार्थना पत्र आदि लिखे तो प्रविष्ट होने से पूर्व पहले माँ गायत्री के स्वरूप का चिन्तन करते हुए उससे कार्य सिद्ध करने के लिए प्रार्थना करे। माँ भगवती ने चाहा, तो उसकी कृपा से मनोनुकूल सफलता प्राप्त होगी।

शत्रुता मिटाने और मित्रता बढ़ाने के लिए :—

संसार में मोह माया, लोभलालच और धनलोलुपता आदि मनुष्य के इतने प्रवल शत्रु हैं कि भाई भाई में बैर करवा देते हैं, पड़ोसी को पड़ोसी का शत्रु बना देते हैं और बाप बेटों को परस्पर लड़वा देते हैं। धन सम्पत्ति के लालच में वे मारपीट, मुकद्दमेबाजी, मनमुटाव और घृणा बैमनस्य आदि के जंजालों में फंस कर सदैव के लिए एक दूसरे से पृथक हो जाते हैं। उस दशा में यदि आप बुद्धि विवेक से काम लेकर पारस्परिक शत्रुता आदि आए दिन का झगड़ा क्लेश और घृणा का वातारण समाप्त करना चाहते हैं और आप के अन्य सब प्रयास निष्फल हो चुके हैं, तो माँ भगवती की शरण में आइए। नियम विधान पूर्वक गायत्री मंत्र का जप करिए। सद्बुद्धि दात्री गायत्री माता आपके घोरतम शत्रुओं को भी सद्बुद्धि और सत्प्रेरणा देकर हृदय परिवर्तन कर देंगीं और वे शत्रुता का भाव त्यागकर प्रेम, आदर और सहिष्णुता का व्यवहार करने लगेंगे। यहाँ तक कि माता गायत्री की उपासना, यज्ञ, हवन और जप यज्ञ आदि करने से पड़ौसी शत्रु-राष्ट्र भी मित्र-राष्ट्र बन सकते हैं। आपकी साधना उत्कृष्ट होनी चाहिए।

उसकी विंधि यह है कि पश्चिम दिशा में मुख करके नित्य प्रातः पवित्र मन, पवित्र शरीर, पवित्र वस्त्र और पवित्र निष्ठा के साथ आसन पर बैठ लाल चन्दन की माला हाथ में लेकर गायत्री मंत्र का जप करें और प्रत्येक मंत्र के अन्त में चार बार 'क्लीं' बीज मंत्र का सम्पुट देते जायं। यदि ऊन का आसन विछा कर तथा माथे पर गायत्री यज्ञ की भस्म का तिलक धारण करके जप करें तो अत्युत्तम है। जप के समय चित्त को लाल वस्त्र धारिणी, सिंहवाहिनी, खड्गहस्ता मां दुर्गा के स्वरूप में स्थिर करना चाहिए और उसी रूप का चिन्तन व ध्यान करना चाहिए।

अब जिस व्यक्ति का हृदय-परिवर्तन करना हो, जिसके मन का

शत्रु-भाव मिटाकर मित्र भाव जगाना हो, उसका नाम पीपल के पत्ते पर लाल चन्दन से अनार की लकड़ी की कलम द्वारा लिखें। इस पत्ते को उल्टा रखकर प्रत्येक मंत्र की समाप्ति पर जलपात्र में से एक चमची भर जल लेकर उस पत्ते पर छिड़कते जांय। इसी विधि से १०८ बार जाप करें। कुछ दिनों तक निरन्तर और सत्य भाव से जप करने से आप देखेंगे कि आपका शत्रु द्वेषभाव छोड़कर आपकी ओर प्रेम पूर्ण हृदय से आकृष्ट होने लगेगा।

आत्मबल व बुद्धिबल प्राप्त करने के लिए :—

गायत्री मंत्र के शक्ति प्रभाव से जड़ बुद्धि और आत्मबल हीन मनुष्य बुद्धिबल और आत्मबल से युक्त होकर भौतिक तथा आध्यांतिमक दोनों प्रकार की उन्नति करते हैं और सुखमय जीवन यापन करने लगते हैं क्योंकि गायत्री ज्ञान और बुद्धि तथा आत्मबल की अधिष्ठात्री, वेदों की माता और साक्षात् परमात्मा की शक्ति-स्वरूपा है।

मन्द बुद्धि विद्यार्थी, क्षीण स्मरण-शक्ति वाले व्यक्ति, विद्या और ज्ञान अर्जित करने की इच्छा रखने वाले श्रद्धालुजन इस मंत्र द्वारा विशिष्ट रूप से लाभान्वित हो सकते हैं।

उपासना विधि इस प्रकार है कि सूर्योदय के समय की प्रथम किरणों को स्नानोपरान्त भीगे हुए मस्तक पर पड़ने दें और पूर्व दिशा में मुख करके अधखुले नेत्रों से भगवान भास्कर के दर्शन करते हुए आरम्भ में तीन बार ॐ का उच्चारण करें और फिर गायत्री मंत्र का जप करें। कम से कम १०८ बार अर्थात् एक माला अवश्य जपें। उपरान्त हथेलियों को सूर्य की ओर करके बारह बार पुनः गायत्री मंत्र का जप करें और फिर दोनों हथेलियों का परस्पर रगड़ कर जब उन में उष्णता उत्पन्न हो जाय तो, मुख, नेत्र, नासिका, ग्रीवा, कर्ण, मस्तक आदि सम्पूर्ण मुख मण्डल पर फेरें।

इसी विधि से प्रतिदिन सूर्योदय के समय सूर्य दर्शन कर गायत्री जप करें तो निश्चय ही बुद्धि प्रखर, शुद्ध और समुन्नत होगी, आत्म-बल, आत्म विश्वास और आत्मज्ञान की वृद्धि होगी और चतुर्दिक उन्नति करते हुए सम्मान व गौरव प्राप्त करेंगे ।

वशीकरण करने के लिए—

विरोधियों को भी अनुकूल बनाने के लिए, घृणा और उपेक्षा करने वाले के हृदय में अपने लिए विशेष प्रेम उत्पन्न करने के लिए, किसी भी व्यक्ति को अपने वशीभूत करने के लिए तथा अपना अनुगामी बनाने के लिए इस योग साधना द्वारा गायत्री मन्त्र की सिद्धि करके सफलता प्राप्त की जा सकती है, किन्तु ध्यान रहे कि अपनी निष्कृट भावनाओं से भरी वावना तृप्ति या स्वार्थ पूर्ति करने के लिए इस दैवी शक्ति का प्रयोग करने वाले अधर्माचारी साधकों को मां दुर्गा के कोप का भाजन बनना पड़ेगा । किन्तु निश्छल और निष्कपट हृदय से सच्चे प्रेम और कल्याण की भावना से सांसारिक दुष्टों द्वारा उत्पन्न रोड़े और रुकावटें दूर करने के लिए यदि मां की कृपा का सहारा लिया जायगा, तो अवश्य ही मां सब विघ्नबाधाएं दूर करके दो प्रेम से ओत-प्रोत आत्माओं के परस्पर-मिलन का मार्ग प्रशस्त कर देगी ।

इस प्रयोजन सिद्धि के लिए तीन प्रणव लगाकर गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिए और अपने ध्यान को भृकुटी अर्थात् मस्तक के मध्य भाग पर केन्द्रित कर यह कल्पना करनी चाहिए, कि एक नीले रंग की तीव्र प्रकाश किरण उस स्थान से निकलकर उस व्यक्ति के अन्तस्तल से जाकर टकरा रही है, जिसे आप आकर्षित या वशीभूत करना चाहते हैं अथवा वह प्रकाश-धारा उसके चारों ओर कई लपेटे मारकर उसे जकड़ रही है । और फिर वह व्यक्ति (स्त्री या पुरुष) अर्द्ध चेतन अवस्था में धीरे २ आपकी ओर खिचता चला

आ रहा है। उसके मुख पर प्रेम और प्रसन्नता का भाव है। आकर्षण के लिए यह ध्यान पूर्ण एकाग्रता के साथ करना अत्यन्त आवश्यक है।

यदि किसी के मन में भरे हुए अनुचित या प्रतिकूल विचार निकालकर उचित और अनुकूल विचारों का समावेश करना हो, तो स्वयं अपने शरीर को नीले वस्त्र से ढककर शिथिल कर दें और एकाग्र चित्त से ध्यान करें कि वह व्यक्ति अनन्त नीलाकाश में अकेला पड़ा सो रहा है और फिर कल्पना या ध्यान करें कि उसके मन के विपरीत विचार निकल २ कर उड़ते जा रहे हैं और आपके द्वारा प्रेषित अनुकूल विचार उसके रिक्त मन में भरते जा रहे हैं। इस प्रकार ध्यान साधना से उसका हृदय परिवर्तित होकर आपके अनुकूल हो जायगा।

विषैले जीव-जन्तुओं का विष दूर करने के लिए—

गायत्री मन्त्र में वह अद्भुत शक्ति है कि सर्प, बिच्छू, ततैया, मधुमक्खी आदि विषैले जीव जन्तुओं के काट लेने पर उनके विष-प्रभाव को क्षण मात्र में दूर कर देता है, किन्तु इसकी सफलता के लिए गायत्री मन्त्र का साधक उत्कृष्ट कोटि का होना चाहिए, जिसने यथार्थ रूप से गायत्री मन्त्र को सिद्ध कर लिया हो।

इसकी विधि इस प्रकार है कि पीपल के वृक्ष की समिधाओं से विधिपूर्वक हवन करके उसकी भस्म को सुरक्षित रख लें। प्रयोग के समय अपना जो स्वर चल रहा हो, उसी हाथ की हथेली पर थोड़ी सी भस्म रखकर दूसरे हाथ से उसे अभिमंत्रित करता जाय। मन्त्र जपते समय प्रत्येक बार मन्त्र की समाप्ति पर 'हूं' बीज मन्त्र का सम्पुट देता जाय और साथ ही जप के समय रक्तवर्ण अश्वारूढ़ा गायत्री के स्वरूप का ध्यान करे। उपरान्त विषैले जीव द्वारा काटे हुए स्थान पर उस अभिमंत्रित भस्म को दो चार मिनट तक मसले।

थोड़ी देर में ही रोगी की पीड़ा इस प्रकार उड़ जायगी, मानों हवा के साथ उड़ गई हो।

विषैले सर्प के काटे हुए स्थान पर लाल चन्दन से किए गए हवन की भस्मी प्रयोग करनी चाहिए। तथा साथ ही गौ का शुद्ध घृत गायत्री मन्त्र से अभिमंत्रित करके खूब पिलाना चाहिए। पीली सरसों को अभिमंत्रित कर तथा पीस कर दशों इन्द्रियों के द्वार पर थोड़ा २ लगा दें। इस प्रकार मंत्रोपचार करने से कैसे ही विषेले सर्प ने क्यों न काटा हो, विष-प्रभाव दूर होकर रोगी की प्राण-रक्षा हो सकती है।

अपशकुन प्रभाव नाश करने के लिए—

यदा कदा किसी शुभ कार्य के लिए जाते समय, परदेश गमन के समय या किसी कार्य को प्रारम्भ करने के समय दैवी संकेत के रूप अपशकुन होकर हमें अनिष्ट होने की पूर्व सूचना देते हैं। इन अपशकुनों को देखकर मनुष्य के पैर आगे बढ़ने में ठिठक जाते हैं, उसके तथा स्वजनों के मन भी शंका से भर जाते हैं। ऐसे समय गायत्री मन्त्र का जप आगे आने वाले अनिष्टों, विघ्नबाधाओं, असफलताओं आदि का निवारण करने के हेतु अमोघ अस्त्र है। विवाहादि मंगल कार्यो में यदि लड़के लड़की की जन्मकुण्डली न मिली हो अथवा मुहूर्त में सूर्य, बृहस्पति या चन्द्रमा की बाधा हो, तो चौबीस हजार गायत्री जप का नौ दिन वाला अनुष्ठान करके निर्भीक भाव से विवाह कर दें। मां की कृपा से किसी प्रकार की बाधा या अनिष्ट पास भी नहीं फटक सकता। इसी प्रकार किसी शुभकार्य को प्रारम्भ करते समय यदि मन में किसी प्रकार की आशङ्का उत्पन्न हो जाय, कोई अपशकुन हो जाय, तो तत्काल पूर्णनिष्ठा भाव से गायत्री मंत्र का जप करते हुए मां के चरणों की शरण गह लेना चाहिए, तो भगवती कृपा से सफलता प्राप्त होने में किसी प्रकार का सन्देह न होगा।

इसी प्रकार कभी २ स्वप्नावस्था में नाना प्रकार के अनिष्टकारी दुःस्वप्न दिखाई देते हैं, जो कि मनुष्य के मन को आशंकाओं से भर देते हैं। ऐसे स्वप्नवस्तुतः किसी भावी अनिष्ट का पूर्व संकेत होते हैं, अस्तु उनके फलीभूत न होने देने के लिए एक सप्ताह पर्यन्त प्रतिदिन गायत्री मन्त्र की दस मालाएं पवित्रतापूर्वक जपनी चाहिए। गायत्री पूजन, हवन, गायत्री सहस्रनाम या गायत्री चालीसा का पाठ करने से भी दुःस्वप्नों का प्रभाव नष्ट हो जाता है।

कुंवारी कन्याओं को उत्तम वर और घर प्राप्त करने के लिए—

प्रत्येक माता-पिता यही चाहता है कि उसकी कन्याओं को योग्य, सुन्दर, स्वस्थ, अच्छे स्वभाव वाला और सम्पन्न वर प्राप्त हो, अच्छे स्वभाव के लोगों का परिवार मिले, ऐश्वर्य और सुख साधन सम्पन्न घर मिले, किन्तु सबको ऐसा वर घर मिल नहीं पाता। दुर्भाग्य-वश अनेक कन्याएं तो जीवन भर नाना प्रकार के कष्ट झेलती हैं, पति और परिवारजनों के दुर्व्यवहार से संतप्त रहती हैं। अस्तु जो कन्याएं निष्ठा, श्रद्धा और विश्वास के साथ मां भगवती की उपासना करती हैं, उन्हें अच्छा घर-वर प्राप्त होकर विवाहित जीवन में सर्व सुख प्राप्त होते हैं। नारद जी के कहने पर पार्वती जी ने मनचाहा वर प्राप्त करने के लिए तप किया था और अन्त में भगवान शङ्कर को पति रूप में प्राप्त करने में सफल हुई थीं। सीता जी ने भी श्री रामचन्द्र जी को पति रूप में प्राप्त करने के लिए पार्वती जी की उपासना की थी। नवदुर्गाओं में आस्तिक घरानों की कन्याएं भगवती दुर्गा की आराधना करती हैं। मां गायत्री की उपासना उनके लिए सब प्रकार से मंगलकारिणी और मनोवांछित फल देने वाली है, अस्तु उन्हें श्रद्धा और विश्वास के साथ गायत्री उपासना करनी चाहिए। उन्हें गायत्री की प्रतिमा, मूर्ति अथवा चित्र को सम्मुख रखकर पवित्रता और एकाग्रता के साथ उसका ध्यान करना चाहिए, चन्दन धूप, दीप, अक्षत, पुष्प, जल, नैवेद्य तथा भोगादि से मां की पूजा

करके आरती करें और फिर मां के चरणों में ध्यान लगाकर २४ बार गायत्री मन्त्र का जप करें। इससे उनकी अभीष्ट मनोकामनाएं निश्चिय ही पूरी होंगीं।

पति के कल्याण व उन्नति के लिए—

विवाहित स्त्रियों को अपने पति के कल्याण, सुख और उन्नति के लिए तथा विचार, व्यवहार और स्वभाव से श्रेष्ठ होकर अपने धर्म-कर्त्तव्यों का उचित रीति से पालन करने वाला बनाने के लिए गायत्री मन्त्र का जप और गायत्री उपासना बड़ी फलप्रद होनी है। इससे उनकी आर्थिक कठिनाइयाँ, पारिवारिक क्लेश, दरिद्रता, रोग, आदि का निवारण होकर घर में प्रेम, सुख, शांति, समृद्धि तथा श्री सम्पन्नता आती है।

इस प्रयोजन-सिद्धि के लिए स्त्रियों को प्रातःकाल नहा धोकर निराहार मुख नितान्त पवित्रता के साथ पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठना चाहिए। केशर डालकर अपने हाथ से चन्दन घिसे, मस्तक, हृदय व कण्ठ पर लगावे। गायत्री की मूर्ति अथवा चित्र की स्थापना कर विधिवत् पूजन करे। पूजा में पीले रंग के पुष्प, भोग में पीले चावल या बेसन के लड्डू आदि पीले पदार्थ प्रयोग करे और नेत्र बन्द कर पीतवर्ण आकाश में पीले रंग के सिंह पर सवार पीले वस्त्र धारण किए माता गायत्री का ध्यान करे। उपासिका उपासना के समय स्वयं भी सब या कम से कम एक पीला वस्त्र अवश्य धारण करे। इस प्रकार पीतवर्ण गायत्री का ध्यान करते हुए कम से कम २४ बार गायत्री मन्त्र का जप अवश्य करे। प्रत्येक पूर्णमासी को व्रत करे। इस प्रकार पीतवर्ण गायत्री साधना से उसका दाम्पत्य जीवन सुखी होता है, उसका पति उन्नति करता है। घर में सुख समृद्धि की वृद्धि होती है और चतुर्दिक मंगल होता है।

इस प्रकार गायत्री मन्त्र में निहित अगणित गुप्त शक्तियां उपासक और साधक को नाना प्रकार के कल्याणकारी फल को देने वाली हैं।

गायत्री मंत्र की गुप्त तांत्रिक शक्तियां

गायत्री मन्त्र में अगणित तांत्रिक शक्तियाँ भरी हुई हैं, जिनके सदुपयोग से विश्व का कल्याण हो सकता है और दुरुपयोग द्वारा अपना और दूसरों का घोर विनाश भी हो सकता है। किसी कुपात्र के हाथों में इन गुप्त शक्तियों को प्राप्त करने का भेद न चला जाय, इसलिए प्राचीन तान्त्रिकों ने तथा आचार्यों ने इसके रहस्यों और विधियों को यथा सम्भव प्रकट नही होने दिया, विशेषकर विनाशकारी अनुष्ठानों को, फिर भी इस ज्ञान का सर्वथा लोप न हो जाय, इस कारण उन्होंने संकेत रूप में उनका प्राचीन ग्रथों में वर्णन कर दिया है। यहाँ हम भी पूर्वजों की उस श्रेष्ठ कल्याणकारी भावना को ध्यान में रखकर केवल पाठकों को सांकेतिक ढंग से ही उनका परिचय कराए देते हैं। विनाशक और अनिष्टकारी शक्ति प्राप्त करने के विधि विधानों को प्रकट करना उपयुक्त नहीं है। इन गोपनीय तांत्रिक साधनाओं के पीछे एक भारी कर्मकाण्ड और विधि विधान रहता है जिसके द्वारा ही सिद्धि प्राप्त की जा सकती है और वह विद्या उपयुक्त पात्र को किसी ज्ञाता और अनुभवी तांत्रिक से ही प्राप्त हो सकती है यदि वह परीक्षा करके अपना शिष्य बनाने के उपयुक्त समझे। तन्त्र सिद्धि के पश्चात् गायत्री मन्त्र की अलौकिक और महाशक्ति द्वारा धन, सन्तान, भूमिगत दबा धन, स्त्री, स्वास्थ्य पद, रोग निवारण, शत्रु विनाश, वशीकरण, अपनी इच्छानुकूल कार्य करा लेना आदि अनेक लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं।

तंत्रोक्त गायत्री—सिद्धि साधना

एक बार महर्षि नारद ने भगवान से पूछा—हे भगवन्! आप

हमें गायत्री के शान्ति आदि के प्रयोगों के विषय में कृपाकर बताइए। यह सुनकर भगवान् बोले—

अति गुह्यमिदं पृष्ठं त्वया ब्रह्मतनूभव।
वक्तव्यं न कस्मैचिद् दुष्टाय वा पिशुनाय च।

हे नारद ! आपने बहुत गुप्त बात को पूछा है, किन्तु इस बात को किसी दुष्ट अथवा कपटी मनुष्य को न बताना। उपरान्त भगवान ने नारद को गायत्री के वे गुप्त भेद इस प्रकार बताए—

भूत प्रेतादि को वश में करने के निमित्त—

अथ शान्त्यर्थं मुक्ताभिः समिदिभर्जुहुयाद् द्विजः।
सर्वे समिद्भिः शाम्यन्ति भूत रोग ग्रहादयः।

अर्थात्—द्विजों को शान्ति के लिए हवन करना आवश्यक है तथा शमी की समिधाओं से हवन करने पर भूत प्रेतादि बाधाओं और दुष्ट ग्रहों की शान्ति होती है।

कण्ठदघ्ने जले जप्त्वा मुच्येत प्राणान्त काद्भयात्।
सर्वेभ्यः शान्ति कर्मेभ्यो निमज्याप्सु जपः स्मृतः।

अर्थात्—कण्ठ पर्यन्त जल में खड़े हो कर जप करने से प्राणों के नाश होने का भय नहीं रहता, अस्तु सब प्रकार के भय नष्ट करने के लिए जल में प्रविष्ट होकर ही जप करना श्रेष्ठ है।

सौवर्णे राजतं वापि पात्रे ताम्रमयेऽपिवा।
क्षीर घृक्षमये वापि निश्छिद्रे मृन्मयेऽपिवा।
सहस्रं पंचगव्येन हुत्वा सुज्वलितेऽनले।
क्षीर वृक्ष मयैः काष्ठैः शेषं सम्पादयेच्छनैः।

अर्थात्—सुवर्ण, चांदी, ताँबा तथा दूध वाले वृक्ष की लकड़ी से अथवा छेद रहित मृत्तिका पात्र में पंचगव्य रखकर दुधारू वृक्ष का हरी लकड़ियों से प्रज्वलित अग्नि में हवन करना चाहिए।

प्रत्याहुतिं स्पृशञ्जप्त्वा तद्गव्यं पात्र संस्थितम्।
तेन तेनैव प्रोक्षयेद्देशं कुशैर्मन्त्र मनुस्मरन्।

अर्थात्—प्रत्येक आहुति में पंचगव्य का स्पर्श कर तथा मन्त्रों का उच्चारण करते हुए कुशाओं द्वारा पंचगव्य ही से सम्पूर्ण स्थान का मार्जन करना चाहिए।

बलि प्रदाय प्रयतो, ध्यायेत् परदेवताम्।
अभिचार समुत्पन्ना कृत्या पापं च नश्यति।

अर्थात्—बलि देकर देवताओं का ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार ध्यान करने से अभिचारोत्पन्न कृत्यों और पापों की शान्ति होती है।

देव भूत पिशाचादीन् यद्द्वेव कुरुते वशे।
गृह ग्रामं पुरं राष्ट्रं सर्वतेभ्यो विमुच्यते।

अर्थात्—देवता, भूत, पिशाच आदि को वश में करने के लिए पूर्वोक्त विधि अपनानी चाहिए। इस विधि क्रिया से देवता भूत पिशाचादि घर ग्राम, नगर और राज्य छोड़कर वशीभूत हो जाते हैं।

सिद्धि प्राप्त करने के लिए—

चतुष्कोणे हि गन्धेन मध्यतो रचिते न च।
मण्डले शूल मालिख्यं पूर्वोक्ते च क्रमेण वा।
अभिमंत्र्य सहस्रं तन्निखनेत्सर्व सिद्धये।

अर्थात्—चतुष्कोण मण्डल में गन्ध से शूल लिखकर और पूर्वोक्त विधि से विधानपूर्वक सहस्र गायत्री का जप करके गाड़ देने पर सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है।

भूत प्रेतादि की छाया दूर करने के लिए—

सौवर्ण राजतं वापि कुम्भं ताम्रमयं च वा।
मृन्मयं वा नवं दिव्यं सूत्रवेष्ठितम व्रणम।

मण्डले सैकते स्थाप्यं पूरयेन्मंत्रितैर्जलैः ।
दिग्भ्य आहृत्य तीर्थानि चतसृभ्यौ द्विजोत्तमैं ।

अर्थात्—स्वर्ण, रजत, ताम्र अथवा छेद रहित मृत्तिका के कुम्भ को लेकर सूत्र से परिवेष्ठित कर बालुका युक्त स्थान में स्थापित करे और श्रेष्ठ ब्राह्मणों द्वारा चारों दिशाओं से लाए हुए जल से भरे ।

एला, चन्दन, कर्पूरं, जाती, पाटल मल्लिका: ।
विल्वपत्रं तथा कान्तां, देवी व्रीहि यवांस्तिलान् ।
सर्षपान् क्षीर वृक्षाणां प्रवालानि च निक्षपेत् ।

अर्थात्—इलायची, चन्दन, कपूर, जाती, पाटल, बेला, विल्व पत्र, विष्णुकान्ता, सहदेई, जौ, तिल, सरसों और दूध निकालने वाले वृक्षों के पत्ते लेकर उसमें छोड़ें ।

सर्व मेवं विनिक्षिप्य कुश कूर्चं समन्वितम् ।
स्नातः समाहितो विप्रः सहस्रं मन्त्रयेद् बुधः ।

अर्थात्—इस प्रकार सब सामग्री को छोड़कर कुश की कूँची बनाकर उसे भी उस पात्र में डालकर उस जल से स्नान करे, और एक हजार बार गायत्री मन्त्र का जप करे ।

दिक्षु सौरानधीयीरन् मन्त्रान् विप्रास्त्रयीविदः ।
प्रोक्षयेत्पायेदेनं नीरं तेनाभिषिचयेत् ।

अर्थात्—विद्वान ब्राह्मण द्वारा मन्त्रों से अभिमंत्रित इस जल का भूत प्रेतादि बाधा से पीड़ित स्त्री पुरुष के ऊपर छिड़काव करे तथा मुख से पिलावे तथा गायत्री मन्त्र द्वारा इसी जल से मार्जन व अभिषिचन करे ।

भूत रोगाभि चारेभ्यः स निर्मुक्तः सुखी भवेत् ।
अभिषेकेण मुच्येत मृत्योरास्यगतो नरः ।

अर्थात्—इस प्रकार अभिषिचन करने से मरणासन्न मनुष्य भी प्रेतादि बाधाओं से मुक्त होकर सुखी हो जाता है ।

ज्वर शान्ति के लिए—

द्विजो मृत्युञ्जयो होमः सर्व व्याधिविनाशनः।
आम्रस्य जुहुयात्पत्रैः पयसाज्वरशान्तये।

अर्थात्—ब्राह्मणों को ज्वर की शान्ति के लिए दूध में आम के पत्ते डालकर उनसे हवन करना चाहिए। यह मृत्यु को जीतने वाला हवन है।

राजयक्ष्मारोग नाश के लिए—

बचाभि पयः सिक्ताभिः क्षयं हुत्वा विनाशयेत्।
मधुत्रियते होमेन् राजयक्ष्मा विनश्यिति।

अर्थात्—दूध में वच को भिगोकर उससे हवन करने से क्षयरोग का नाश होता है। दूध घी और दही इन तीनों का हवन करने से राजयक्ष्या रोग का विनाश होता है।

निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकम्।
राजयक्ष्माभिभूतं च पाययेञ्छान्ति माप्नुयात्।

अर्थात्—दूध की खीर बनाकर सूर्य के अर्पण करे तथा हवन शेष खीर को राजयक्ष्या के रोगी को खिलावे, तो रोग का निवारण होता है।

अपस्मार रोग निवारण के लिए—

कुसुमैः शंखवृक्षस्य हुत्वा कुष्ठं विनाशयेत्।
अपस्मार विनाशः स्याद्षामार्गस्य तण्डुलैः।

अर्थात्—शंख वृक्ष के फूलों से हवन करने पर कुष्ट रोग का निवारण होता है तथा अपामार्ग के वीजों से हवन करने पर अपस्मार रोग का निवारण हो जाता है।

नोट—यहाँ हवन से तात्पर्य गायत्री हवन समझना चाहिए।

प्रमेह रोग निवारण के लिए—

क्षीर वृक्ष समिद्धोमादुन्मादोऽपि विनश्यति।
औदुम्वरं समिद्धोमा दतिमेहः क्षयं व्रजेत्।

अर्थात्—क्षीर वृक्ष की समिधाओं से हवन करे तो उन्माद रोग का नाश हो और गूलर की समिधाओं से हवन करने पर महा-प्रमेह रोग दूर होता है।

धन, श्री व सौन्दर्य प्राप्त करने के लिए—

अथ पुष्टिं श्रियं लक्ष्मीं पुष्पैर्हुत्वाप्नुयाद् द्विजः।
श्रीं कामोजुहुयात् पद्मैः रक्तैं श्रियमवाप्नुयात्।

अर्थात्—लक्ष्मी, श्री और सौन्दर्य की कामना रखने वाले पुरुष को रक्त कमल के फूलों से गायत्री हवन करने पर धन, ऐश्वर्य और सौन्दर्य की प्राप्ति होती है।

श्रियमाप्नोति परेमां मूलस्य शकलैरपि।
समिद्भिर्विल्व वृक्षस्य पायसेन च सर्पिषा।

अर्थात्—विल्व वृक्ष की जड़ की समिधाओं, खीर तथा घत आदि से हवन करने पर लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। जड़के स्थान पर विल्व की लकड़ी, पत्ते, पुष्प, फल आदि को सुखा कर तथा कूटकर सामग्री बनाले। उससे भी हवन किया जा सकता है।

सुन्दर कन्या प्राप्ति के लिए—

शतं शतं च सप्ताहं हुत्वा श्रियमवाप्नुयात्।
लाजैस्तु मधुरोपेतै होमे कन्याम वाप्नुयात्।

अर्थात्—दूध दही घृत ये मधुत्रय मिलाकर लाजा से सात दिन तक सौ २ आहुतियाँ देकर गायत्री हवन करने पर सुन्दर कन्या की प्राप्ति होती है।

सुवर्ण प्राप्ति के लिए—

अनेन विधिना कन्या वरमाप्नोति वाञ्छितम् ।
हुत्वा रक्तोत्पलै हेमं सप्ताहं प्राप्नुयात्खलु ।

अर्थात्—इस विधि से होम करने पर कन्या को अभीष्ठ सुन्दर वर की प्राप्ति होती है । सात दिन तक रक्त कमल के फूलों से हवन करने पर सुवर्ण की प्राप्ति होती है ।

अन्न प्राप्त करने के लिए—

सूर्य विम्बे जलं हुत्वा जलस्थ हेममाप्नुयात् ।
अन्नं हुत्वाप्नुयादन्नं ब्रीही ब्रीहिपति र्भवेत् ।

अर्थात्—सौर मण्डल में जल अर्पित करने से जल में स्थित सुवर्ण की प्राप्ति होती है तथा अन्न का हवन करने से अन्न की प्राप्ति होती है ।

तेजस्वी पुत्र प्राप्ति के लिए—

निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकम् ।
भोजयेत्तदृतुस्नातां पुत्र रत्नम वाप्नुयात् ।

अर्थात्—भगवान् भास्कर (सूर्य) को हवनपूर्वक पायस अन्न अर्पण करके ऋतु-स्नानोपरान्त स्त्री को खिलाने से तेजस्वी पुत्र की प्राप्ति होती है ।

दीर्घायु प्राप्त करने के लिए—

स प्ररोहाभिरार्द्राभिर्हुत्वा आयुष्माप्नुयात् ।
समिद्भि: क्षीर वृक्षस्य हुत्वाऽऽयुष्मवाप्नुयात् ।

अर्थात्—पलास की समिधा से हवन करने पर आयु की वृद्धि होती है और क्षीर वृक्षों की समिधा से हवन करना भी आयु-वृद्धि कारक होता है ।

अकाल मृत्यु भय निवारणार्थ—

शतं शतं च सप्ताहमपमृत्युं व्यपोहति।
न्यग्रोध समिधो हुत्वा पायसं होमयेत्ततः।

अर्थात्—वट वृक्ष की समिधाओं से सौ सौ बार आहुति देकर गायत्री हवन करने से अपमृत्यु का भय नहीं रहता।

राजपद प्राप्ति के लिए—

जपेद् विल्व समाश्रित्य मासं राज्यमवाप्नुयात्।
बिल्वं हुत्वाप्नुयाद् द्रव्यं समूलं फल पल्लवम्।

अर्थात्—एक मास तक विल्व वृक्ष के नीचे आसन लगाकर गायत्री मन्त्र का जप करने से तथा विल्व वृक्ष की जड़ पत्ते, फल, फूल आदि समिधाओं से गायत्री हवन करे, तो राज्य (अथवा सम्पत्ति व राजकीय पद) प्राप्त होता है।

विजय प्राप्त करने के लिए—

अच्श्रस्थ समिधो हुत्वा युद्धादौजयमाप्नुयात्।
अर्कस्य समिधो हुत्वां सर्वत्र विजयी भवेत्।

अर्थात्—पीपल की समिधाओं से हवन करने पर युद्ध में विजय प्राप्त होती है, तथा आक की समिधाओं से हवन करने पर सर्वत्र विजयी होता है।

वर्षा के लिए—

संयुक्तैः पयता पत्रैः पुष्पैर्ववितसस्य च।
पायसेन शतं हुत्वा सप्ताहं वृष्टिमाप्नुयात्।

अर्थात्—वेत वृक्ष के फूलों से अथवा पत्र मिलाकर खीर से हवन करने पर सप्ताह में वृष्टि होती है।

अतिवृष्टि निरोध के लिए—

नाभिदघ्ने जले जप्त्वा सप्ताहं वृष्टिमाप्नुयात्
जले भस्म शतं हुत्वा मसावृष्टिं निवारयेत्।

अर्थात्—नाभि तक जल के बीच खड़े होकर एक सप्ताह पर्यन्त गायत्री जप करने से वर्षा हो जाती है और जल में सौ बार हवन करने से अतिवृष्टि का निवारण होता है। इस प्रकार गायत्री मन्त्र की शक्ति से वर्षा कराई भी जा सकती है और उसे रोका भी जा सकता है।

ब्रह्मतेज प्राप्त करने के निमित्त—

पलाशैः समवाप्नोति समिदिभर्ब्रह्मवर्चसम्।
पलाश कुसुमैर्हुत्वा सर्वमिष्टवाप्नुयात्।

अर्थात्—पलाश की समिधाओं से हवन करने पर ब्रह्मतेज की अभिवृद्धि होती है तथा पलाश के फूलों से हवन करने पर सभी इष्टों की प्राप्ति होती हैं।

बुद्धि बल प्राप्त करने के निमित्त—

पयो हुत्वाप्नुयान्मेधामाज्यं बुद्धि वाप्नुयात्।
पीताभि मन्त्र्यसुरसं ब्राह्मया मेधाम् वाप्नुयात्।

अर्थात्—दूध का हवन करने से तथा घृत की आहुतियाँ देने से बुद्धि बल की वृद्धि होती है। गायत्री मंत्र का उच्चारण करते हुए ब्राह्मी के रस का पान करने से चिरग्राहिणी बुद्धि प्राप्त होती है।

इष्ट को वश में करने के निमित्त—

न येदिष्टं वशं हुत्वं लक्ष्मी पुष्पैमंधुप्लुतैः।
नित्य मञ्जलिनात्मानमभिषिंचन जलेस्थितः।

अर्थात्—लक्ष्मी के पुष्पों से युक्त शहद का हवन करने पर इष्ट वश में हो जाता है। पानी में खड़े होकर अंजुलि में पानी भरकर अपने ऊपर छिड़कने तथा अभिषेक करने से भी इष्ट वश में हो जाता है।

दीर्घायु तथा बल प्राप्त करने के लिए—

सुचारु विधिनां मासं सहस्रं प्रत्यहं जपेत्।
आयुष्कामः शुचौदेशे प्राप्नुयादायुरुत्तमम्।

अर्थात्—सुचारु विधि पूर्वक एक मास तक एक सहस्र जप करने से दीर्घायु तथा बल प्राप्त होता है।

सर्व सुख प्राप्त करने के लिए—

आयुः श्रोपुत्रदाराद्यैक्ष्चतुर्भिः सुयशोजपात्।
पुत्रदारायुरारोग्य श्रियं विद्यां च पंचभिः।

अर्थात्—चार मास तक जप करने से दीर्घायु, लक्ष्मी तथा स्त्री और यश की प्राप्ति होती है तथा पुत्र कलत्र आयु आरोग्य लक्ष्मी और विद्या आदि सर्वसुख प्राप्त करने के लिए पांच मास तक जप करना चाहिए।

पापमुक्त होने के लिए—

मुक्ताः स्युरघव्यूहाच्च महापातकिनो द्विजाः।
त्रिसहस्रं जपेन्मासं प्राणानायाम्य वाग्यतः।

अर्थात्—शुभ मन व शरीर से प्राणायाम करके ३००० मंत्र एक मास पर्यन्त जपने से द्विज बड़े से बड़े पातक (पाप) से मुक्त हो हो जाता है।

इतिमे सम्यगाख्याता, शान्ति शुद्धयादि कल्पना।
रहस्यातिरुहस्याश्च, गोपनीयास्त्वया सदा।

हे नारद जी! यह जो शान्ति, शुद्धि तथा लाभादि के लिए हमने आपको रहस्य बताया है, वह अति गुप्त रहस्य है और आपको भी इसे सदैव गुप्त रखने योग्य है।

गायत्री मन्त्र को दैवी शक्तियाँ

जैसा कि पहले भी बतलाया जा चुका है, गायत्री मंत्र के समस्त २४ अक्षर दैवी शक्तियों के २४ बीज हैं। जैसा कि तांत्रिक ग्रन्थों में वर्णन है, गायत्री मंत्र के प्रत्येक अक्षर का १-१ देवता है और उस अक्षर में उस देवता की शक्ति भरी हुई है, इस प्रकार गायत्री मंत्र चौबीस देवताओं की दैवी शक्तियों का पुञ्ज है। इतनी विशाल शक्ति अन्य किसी मंत्र में नहीं पाई गई है। इसीलिए गायत्री मन्त्र का ध्यान करने वाले उपासक को उन २४ दैवी शक्तियों का लाभ प्राप्त होता है। यहाँ उन चौबीसों देवताओं के नाम तथा वे किन २ शक्तियों के अधिष्ठाता हैं तथा क्या २ फल देने वाले हैं, इस गूढ़ रहस्य का वर्णन किया जाता है, जिसे जानकर पाठकगण यह भली प्रकार समझ सकेंगे, कि संसार में ऐसी शक्ति अथवा ऐसी कोई वस्तु नहीं, जो गायत्री मन्त्र की साधना द्वारा हमें प्राप्त न हो सके। किन्तु जिस प्रकार दूध में अनेक पोषक तत्व समाए हुए होते हैं और दूध का सेवन करने से वे सभी तत्व हमें प्राप्त होते हैं, फिर भी यदि किसी एक तत्व विशेष की ही हमें आवश्यकता होती है, तो हम उसी तत्व प्रधान अंश का विशेष रूप से सेवन करते हैं यथा चिकनाई की आवश्यकता होने पर घृत का, पेट सम्बन्धी विकारों में चिकनाई रहित छाछ का, पाचन-क्रिया अति दुर्बल होने पर फाड़े हुए दूध के पानी का इत्यादि। उसी प्रकार गायत्री मन्त्र की भी किसी शक्ति विशेष को प्राप्त करने के लिए साधक उसी शक्ति पर, उसी शक्ति के अधिष्ठाता देवता के स्वरूप का चिन्तन करते हुए ध्यान केन्द्रित करता है। इसीलिए उन भिन्न २ शक्तियों के साथ विशेष रूप से सान्निध्य और सम्पर्क स्थापित करने के लिए २४ अलग २ मन्त्र आचार्यों ने लिखे हैं जिन्हें चौबीस गायत्री कहा जाता है।

गायत्री मन्त्र की २४ दैवी शक्तियाँ

गायत्री मन्त्र के २४ अक्षर—

(१) तत् (२) स (३) वि (४) तु: (५) व (६) रे (७) ण्यं (८) भ (९) गं (१०) दे (११) व (१२) स्य (१३) धी (१४) म (१५) हि (१६) धि (१७) यो (१८) य: (१९) न: (२०) प्र (२१) चो (२२) द (२३) या (२४) त्।

गायत्री मन्त्र के २४ देवता—

(१) गणेश (२) नृसिंह (३) विष्णु (४) शिव (५) कृष्ण (६) राधा (७) लक्ष्मी (८) अग्नि (९) इन्द्र (१०) सरस्वती (११) दुर्गा (१२) हनुमान (१३) पृथ्वी (१४) सूर्य (१५) राम (१६) सीता (१७) चन्द्रमा (१८) यम (१९) ब्रह्मा (२०) वरुण (२१) नारायण (२२) हयग्रीव (२३) हंस (२४) तुलसी

उक्त २४ देवताओं की चैतन्य शक्तियाँ—

१ **गणेश**—यह सफलता शक्ति के अधिष्ठाता देव हैं, इसीलिए प्रत्येक शुभकार्य का आरम्भ गणेश पूजन से ही प्रारम्भ किया जाता है, ताकि वह कार्य सफल हो। यह विघ्न विनाशक, सफलता प्रदायक और बुद्धि व श्रेष्ठ ज्ञान देने वाले हैं।

२ **नृसिंह**—यह पराक्रम शक्ति के अधिकारी देव हैं ये पुरुषार्थ पराक्रम, वीरता, धीरता और विजय प्रदान करते हैं कायरता व आतङ्क दूर कर हार तथा शत्रु के आक्रमण से रक्षा करते है और शत्रु का संहार करते हैं।

३ **विष्णु**—पालन शक्ति के अधिकारी हैं, समस्त प्राणियों का पालन-पोषण करने वाले, जीवन रक्षक तथा सब प्रकार का संरक्षण और आजीविका प्रदान करते हैं।

४ **शिव**—यह कल्याण शक्ति के अधिकारी देव हैं। जीवों को आत्मपरायणता, सब प्रकार से कल्याणकारी शक्ति प्रदान कर अनिष्ट और पतन से रक्षा करते हैं।

५ **कृष्ण**—ये योग-शक्ति के अधिष्ठाता हैं, प्राणियों को कर्मयोग, आत्मनिष्ठा, अनासक्ति, वैराग्य, सद्ज्ञान सौन्दर्य और सरसता प्रदान करने वाले हैं।

६ **राधा**—प्रेम-शक्ति की अधिष्ठात्री देवी है, भक्तों को सच्चा प्रेम करने की शक्ति देकर द्वेषभाव घृणा आदि को दूर करती है।

७ **लक्ष्मी**—धन वैभव शक्ति की अधिष्ठात्री देवी है उपासकों को धन, वैभव, ऐश्वर्य, सम्पत्ति, पद, यश तथा सब प्रकार के भौतिक सुख साधन प्रदान करने वाली है।

८ **अग्नि**—यह तेज शक्ति के अधिष्ठाता देव हैं और उष्णता, तेज, प्रकाश, शक्ति तथा सामर्थ्य प्रदान करने वाले हैं।

९ **इन्द्र**—यह रक्षाशक्ति के अधिकारी हैं, रोग, अनिष्ट, आक्रमण हिंसक, चोर, शत्रु तथा भूत-प्रेतादि से रक्षा करने वाले हैं।

१० **सरस्वती**—ज्ञानशक्ति की अधिष्ठात्री देवी है, ज्ञान, विवेक, दूरदर्शिता, बुद्धिमत्ता तथा विचारशीलता प्रदान करने वाली हैं।

११ **दुर्गा**—यह दमन-शक्ति की अधिष्ठात्री देवी है, समस्त विघ्न बाधाओं पर विजय दिलाने वाली, दुष्टों व शत्रुओं का दमन करने वाली, अहंकार को चूर करने वाली तथा भक्तों को सब प्रकार की शक्ति सामर्थ्य देने वाली है।

१२ **हनुमान**—निष्ठा-शक्ति के अधिकारी हैं, अपने उपासकों को भक्ति, निष्ठा कर्त्तव्यपरायणता, विश्वास, निर्भयता तथा ब्रह्मचर्य पालन की शक्ति प्रदान करते हैं।

१३ **पृथ्वी**—यह धारणशक्ति की देवी हैं, प्राणियों को गम्भीरता,

क्षमाशीलता, धैर्य, दृढ़ता, सहिष्णुता, भारवाहकता और निरन्तरता प्रदान करने वाली है।

१४ **सूर्य**—प्राणशक्ति के अधिष्ठाता देव हैं। यह उपासकों को आरोग्य, दीर्घजीवन, प्राणशक्ति, विकास, तेज, उष्णता आदि प्रदान करने वाले हैं।

१५ **राम**—ये मर्यादा शक्ति के अधिकारी देव है तथा धर्म, मर्यादा शील, सौम्य, संयम, मैत्री व प्रेम भाव, धीरता, तितिक्षा आदि गुण व शक्तियाँ प्रदान करने वाले हैं।

१६ **सीता**—तप शक्ति की अधिष्ठात्री देवी है, निर्विकार और पवित्र भाव से, सात्विक वृत्ति से, अनन्य भाव से तपोनिष्ठ बनाती हैं, आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर प्रेरित करती हैं।

१७ **चन्द्रमा**—यह शान्ति शक्ति का अधिकारी देव है, चिन्ता, शोक, क्रोध, प्रतिहिंसा, उद्विग्नता, निराशा, क्षोभ, मोह, लोभ, तृष्णा आदि मानसिक विकारों को शान्त करके आशा और शान्ति प्रदान करने वाला है।

१८ **यम**—कालशक्ति का अधिकारी देव है। समय का सदुपयोग-मृत्यु से निर्भयता, स्फूर्ति, चेतना, जागरूकता आदि शक्तियों को प्रदान करने वाला है।

१९ **ब्रह्मा**—उत्पादक शक्ति या सृजन-शक्ति के अधिष्ठाता देव हैं, सृष्टि रचना, प्रत्येक जड़ व चेतन पदार्थ का उत्पादन करने तथा वृद्धि करने की शक्ति के दाता हैं।

२० **वरुण**—रस शक्ति के अधिकारी वरुण देव हैं, ये भावुकता, कोमलता, सरसता, दयालुता, प्रसन्नता, मधुरता, कला प्रियता आदि सरस भावों का हृदय में प्रादुर्भाव व प्रवाह कर आनन्द की अनुभूति कराने वाले हैं।

२१ **नारायण**—आदर्श शक्ति के अधिष्ठाता हैं, श्रेष्ठता महत्वाकांक्षा, उत्कृष्टता, दिव्य गुण, धर्म, स्वभाव, निर्मल सच्चरित्रता तथा शुभकर्म शीलता प्रदान करने वाले हैं।

२२ **हयग्रीव**—साहसशक्ति के अधिष्ठाता हैं, उत्साह निर्भीकता, साहस, वीरता, शौर्य, धैर्य, पुरुषार्थ तथा संघर्षशक्ति प्रदान करते हैं।

२३ **हंस**—विवेकशक्ति का अधिष्ठाता है, हंस का क्षीर-नीर विवेक जगविख्यात है। यह सत्-असत् का विवेक, दूरदर्शिता, उत्तम संगति, उत्कृष्ट आहार विहार, उज्ज्वल यश कीर्ति तथा सन्तोष आदि गुण प्रदान करने वाली है।

२४ **तुलसी**—सेवाशक्ति की अधिष्ठात्री देवी है सत् कार्यो में प्रेरणा, प्राणीमात्र की सेवा में प्रवृत्ति, आत्मशांति, पर-दुख निवारण पवित्रता, निष्ठा आदि फल देने वाली हैं।

इस प्रकार गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों के पृथक-पृथक २४ देवता हैं और इस प्रकार इस महामन्त्र में विविध दैवी शक्तियाँ अन्तर्निहित हैं और साधकों को उन शक्तियों की उपलब्धि होती है। यदि किसी एक शक्ति-विशेष की मुख्य रूप से आवश्यकता प्रतीत होती है, तो उस शक्ति का आह्वान करने के लिए गायत्री मन्त्र की दस मालाओं के साथ एक माला उस शक्ति के देवता की देव गायत्री की भी जपनी चाहिए। किन्तु इस बात का ध्यान रखें, कि केवल देव-गायत्री मात्र जपने से विशेष फल प्राप्त नहीं होगा। मूल मन्त्र के साथ इन देव गायत्री मन्त्रों का जप करना चाहिए।

० तंत्रोक्त २४ देव-गायत्री मन्त्र ०

गणेश गायत्री—ॐ एक दंष्ट्राय विद्महे, वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो बुद्धिः प्रचोदयात्।

नृसिंह गायत्री—ॐ उग्रनृसिंहाय विद्महे, वज्र नखाय धीमहि। तन्नो नृसिंह प्रचोदयात्।

विष्णु गायत्री—ॐ नारायणाय विद्महे, महादेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।

शिव गायत्री—ॐ पञ्चवक्त्राय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।

कृष्ण गायत्री—ॐ देवकी नन्दनाय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि । तन्नो कृष्णः प्रचोदयात् ।

राधा गायत्री—ॐ वृषभानुजाय विद्महे, कृष्ण प्रियायै धीमहि । तन्नो राधा प्रचोदयात् ।

लक्ष्मी गायत्री—ॐ महालक्ष्मयै विद्महे' विष्णु प्रियायै धीमहि । तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात् ।

अग्नि गायत्री—ॐ महाज्वालाय विद्महे, अग्नि देवाय धीमहि । तन्नो अग्नि प्रचोदयात् ।

इन्द्र गायत्री—ॐ सहस्र नेत्राय विद्महे, वज्रहस्ताय धीमहि । तन्नो इन्द्रः प्रचोदयात् ।

सरस्वती गायत्री—ॐ सरस्वत्यै विद्महे, ब्रह्मपुत्र्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

दुर्गा गायत्री—ॐ गिरिजायै विद्महे' शिव प्रियायै धीमहि । तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ।

हनुमान गायत्री—ॐ अञ्जनी सुताय विद्महे, वायु पुत्राय धीमहि । तन्नो मारुतिः प्रचोदयात् ।

पृथ्वी गायत्री—ॐ पृथ्वी देव्यै विद्महे, सहस्र नूर्त्यै धीमहि । तन्नो पृथ्वी प्रचोदयात् ।

सूर्य गायत्री—ॐ भास्कराय विद्महे, दिवाकराय धीमहि । तन्नो सूर्यः प्रचोदयात् ।

राम गायत्री—ॐ दाशरथाय विद्महे, सीता बल्लभाय धीमहि । तन्नो रामः प्रचोदयात् ।

सीता गायत्री—ॐ जनक नन्दिन्यै विद्महे, भूमिजायै धीमहि। तन्नो सीता प्रचोदयात्।

चन्द्र गायत्री—ॐ क्षीर पुत्राय विद्महे, अमृत तत्त्वाय धीमहि। तन्नो चन्द्रः प्रचोदयात्।

यम गायत्री—ॐ सूर्य पुत्राय विद्महे, महाकालाय धीमहि। तन्नो यमः प्रचोदयात्।

ब्रह्म गायत्री—ॐ चतुर्मुखाय विद्महे, हंसारूढ़ाय धीमहि। तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्।

वरुण गायत्री—ॐ जल बिम्बाय विद्महे, नीलपुरुषाय धीमहि। तन्नो वरुणः प्रचोदयात्।

नारायण गायत्री—ॐ नारायणाय विदमहे, वासुदेवाय धीमहि। तन्नो नारायणः प्रचोदयात्।

हयग्रीव गायत्री—ॐ वाणीश्वराय विद्महे, हयग्रीवाय धीमहि। तन्नो हयग्रीवः प्रचोदयात्।

हंस गायत्री—ॐ परमहंसाय विद्महे, महाहंसाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात्।

तुलसी गायत्री—ॐ श्री तुलस्यै विद्महे, विष्णु प्रियायै धीमहि। तन्नो वृन्दा प्रचोदयात्।

नोट—चूंकि ये २४ देव गायत्रियाँ वेदोक्त नहीं हैं इनका वर्णन प्राचीन तन्त्र शास्त्रों में किया गया है, अस्तु इनके साथ व्याहृतियाँ (भूः भुवः स्वः) नहीं लगानी चाहिए।

गायत्री मंत्र की वेदोक्त दैवी-शक्तियाँ

'गायत्री' उस छन्द का नाम है, जिसमें गायत्री मन्त्र की रचना की गई है, इसीलिए इस महामन्त्र का नाम गायत्री मन्त्र है। किन्तु साथ ही गायत्री उस ब्रह्म शक्ति का भी नाम है, जो कि इस निखिल ब्रह्माण्ड के कण २ में व्याप्त है और ब्रह्माण्ड का संचालन कर रही

है। वेदशास्त्रादि के अनुसार गायंत्री मंत्र में जो दिव्य शक्तियाँ एकत्रित की गई हैं वे परमपिता परमात्मा की अनन्त शक्तियों में से ही अनेक हैं, जो कि प्राणीमात्र के कल्याण के लिए सन्मार्ग दिखाने वाली हैं। परमात्मा की समस्त अनन्त शक्तियों का वर्णन अथवा उनकी प्राप्ति तो मनुष्य क्या देवताओं के लिए भी सर्वथा शक्ति-सामर्थ्य से परे है, तथापि उन शक्तियों का दिग्दर्शन, अनुभूति तथा आंशिक उपलब्धि के लिए 'गायत्री मन्त्र' एक पथ प्रदर्शक अथवा प्रकाश-स्तम्भ की भाँति उपयोगी है। क्योंकि इस मन्त्र में मूल रूप से परमात्मा के दिव्य तेज का ध्यान करने के लिए मनुष्य मात्र की बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करने की प्रार्थना की गई है। इस पर मनन करने से यह गूढ़ निष्कर्ष निकलता है कि मनुष्य की बुद्धि यदि सत्पथ पर अग्रसर हो, सत् चिन्तन सत् वचन और सत्कर्म में प्रवृत्त हो तथा सत्ज्ञान और सत् गुण को ग्रहण करे, तब ही मनुष्य परमात्मा के असीम अनन्त तेज, ज्ञान, प्रकाश, कल्याण और परम आनन्द का अंश मात्र प्राप्त या अनुभव कर सकता है।

प्राचीन ग्रंथों में आचार्यों, ऋषि मुनियों आदि ने गायत्री मन्त्र की दिव्य शक्तियों का अन्वेषण करके जो रहस्य प्रकट किए हैं, उनके अनुसार गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों में से प्रत्येक अक्षर का १-१ ऋषि है, प्रत्येक अक्षर का एक २ छन्द है और प्रत्येक अक्षर का १-१ देवता है जिसकी शक्ति से उस अक्षर के माध्यम से अन्तःकरण का सम्बन्ध स्थापित होता है। पीछे जो गायत्री मन्त्र के २४ देवता बताए गए हैं, वे तन्त्र शास्त्रों में वर्णित हैं। किन्तु निम्न ऋषि, छन्द व देवता वेदोक्त हैं।

गायत्री के ऋषि

गायत्री के २४ ऋषि इस प्रकार हैं—

(१) वामदेव (२) अत्रि (३) वशिष्ठ (४) शुक्र (५) कण्व (६) पाराशर (७) विश्वामित्र (८) कपिल (९) शौनक

(१०) याज्ञवल्क्य (११) भारद्वाज (१२) जमदग्नि (१३) गौतम (१४) मुद्गल (१५) वेदव्यास (१६) लोमश (१७) अगस्त्य (१८) कौशिक (१९) वत्स (२०) पुलस्त्य (२१) (२१) माण्डूक (२२) दुर्वासा (२३) नारद (२४) कश्यप।

इस प्रकार २४ अक्षरों के क्रमशः उक्त २४ ऋषि बताए गए हैं। ऋषि या महर्षि वही महान आत्मा पुरुष बनता है जो कि समस्त साँसारिक सुखों का त्यागकर माया मोहादि बन्धनों से मुक्त होकर कठोर जप, तप, भक्ति, ज्ञान आदि साधनों द्वारा दिव्य शक्तियों को प्राप्त करता है। अस्तु आचार्यो के मतानुसार गायत्री मन्त्र के प्रत्येक अक्षर में क्रमशः उक्त २४ ऋषियों की तप-साधना, ज्ञान और भक्ति की शक्ति एकत्रित की गई है। अर्थात इन ऋषियों की तप शक्ति एकत्रित करके इस महामन्त्र की रचना की गई है। अस्तु गायत्री मन्त्र की साधना उपासना और ध्यान करने वाले श्रद्धालु तथा विश्वासी साधक की अन्तश्चेतना का उपरोक्त ऋषियों की तप शक्ति के साथ सम्पर्क स्थापित हो जाता है और उसके अन्तःकरण में उन ऋषियों की महानशक्ति का प्रादुर्भाव होता है चाहे वह आंशिक रूप में ही हो।

गायत्री के छन्द

गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों में से प्रत्येक अक्षर का एक पृथक छन्द है, जोकि इस प्रकार है :—

(१) गायत्री (२) उष्णिक (३) अनुष्टुप (४) बृहती (५) पंक्ति (६) त्रिष्टुप (७) जगती (८) अतिजगती (९) शक्वरी (१०) अतिशक्वरी (११) धृति (१२) अतिधृति (१३) विराट् (१४) प्रस्तारपंक्ति (१५) कृति (१६) प्रकृति (१७) आकृति (१८) विकृति (१९) संस्कृति (२०) अक्षर

पंक्ति (२१) भूः (२२) भुवः (२३) स्वः (२४) ज्योतिष्मती ये २४ छन्द क्रमानुसार बताए गए हैं। इससे विदित होता है कि हमारे मनीषियों ने कितना गहन शोध किया है और इस प्रकार गायत्री मन्त्र के विविध गूढ़ रहस्यों व शक्तियों का पता लगाया है।

गायत्री मन्त्र के २४ देवतागण

वेदज्ञाता विद्वानों के मतानुसार गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों के २४ पृथक २ देवता हैं, जिनके द्वारा उन देवताओं की शक्तियों का आह्वान किया जाता है और उन शक्तियों को प्राप्त किया जाता है। वे २४ देवता इस प्रकार बताए गए हैं :—

(१) अग्नि (२) प्रजापति (३) सोम (४) ईशान (५) सविता (६) आदित्य (७) वृहस्पति (८) मैत्रावरुण (९) भग (१०) अर्यमा (११) गणेश (१२) त्वष्ट्रा (१३) पूषा (१४) इन्द्राग्नि (१५) वायु (१६) वामदेव (१७) वरुण (१८) विश्वेदेवा (१९) मातृका (४०) विष्णु (२१) वसु (२२) रुद्र (२३) कुबेर (२४) अश्विनी कुमार।

उक्त देवतागण उपासक को विविध प्रकार के श्रेष्ठ फल देने वाले हैं तथा गायत्री मन्त्र का उपासक व साधक उन २४ देवताओं की अलौकिक शक्ति प्राप्त करके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करता हुआ उत्थान के पथ पर अग्रसर होते हुए महान बन जाता है।

गायत्री के आध्यात्मिक रहस्य

वेदशास्त्रादि ग्रन्थों व ऋषियों तथा विद्वानों के कथन

शास्त्रों तथा धार्मिक ग्रन्थों में तेजस्वी ऋषियों मनीषियों ने गायत्री की विविध आध्यात्मिक शक्तियों का अन्वेषण तथा रहस्योद्‌घाटन करते हुए बहुत विस्तारपूर्वक लिखा है। यहाँ उसमें से कुछ अंश ही प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जो कि गायत्री मन्त्र की रहस्यपूर्ण आध्यात्मिक शक्तियों का उद्‌बोधन कराते हैं।

यथा आदि शक्तिरिति विष्णोस्तामहं प्रणमामिहि।
सर्गः स्थिति विनाशश्च जायन्ते जगतोऽनया।

अर्थात्—यह गायत्री ही परमेश्वर की आदिशक्ति है, उस को मैं प्रणाम करता हूं। इसी शक्ति से संसार का निर्माण, पालन और संहार होता है।

ऋषयो वेद शास्त्राणि सर्वे चैव महार्षयः।
श्रद्धया हृदि गायत्री धारयन्ति स्तुवन्ति च।

अर्थात्—समस्त ऋषि, वेद, शास्त्र और समस्त महर्षि भी श्रद्धा-पूर्वक गायत्री को हृदय में धारण करते तथा स्तुति करते हैं।

परमात्मनस्तु या लोके ब्रह्म शक्ति र्विराजते।
सूक्ष्मा च सात्विकी चैव गायत्री त्यभिधीयते।

अर्थात्—संसार में परमात्मा की जो सूक्ष्म और सात्विक ब्रह्म शक्ति विद्यमान है, वह ही गायत्री है।

ह्रीं श्रीं क्लीं चेति रूपेभ्यस्त्रिम्योहि लोक पालिनी।
भासते सततं लोके गायत्री त्रिगुणात्मिका।

अर्थात्—ह्रीं श्रीं और क्लीं इन तीनों रूपों से संसार का पालन करने वाली त्रिगुणात्मिका गायत्री संसार में सतत् रूप से प्रकाशित हो रही है।

गायत्र्येव मता माता वेदानां शास्त्र सम्पदाम्।
चत्वारोऽपि समुत्पन्ना वेदास्तस्या असंशयम्।

अर्थात्—शास्त्र सम्पत्ति रूप वेदों की माता गायत्री ही मानी गई है, चारों वेद इसी से उत्पन्न हुए है, इसमें किसी प्रकार का संशय नहीं है।

प्रभावा देव गायत्र्या भूतानामभिजायते।
अन्तःकरणेषु दैवानां तत्वानां हि समुद्भवः।

अर्थात्—प्राणियों के अन्तःकरणों में दैवी तत्वों का प्रादुर्भाव गायत्री के प्रभाव से ही होता है।

गायत्र्युपासकरणादात्म शक्ति विवर्धते।
प्राप्यते क्रमशोऽजस्य सामीप्यं परमात्मनः।

अर्थात्—गायत्री की उपासना करने से आत्मबल की वृद्धि होती है और जन्ममरण बन्धन मुक्त परमात्मा की समीपता प्राप्त होती है।

शौचं शान्ति विवेकश्चैतल्लाभ भयमात्मकम्।
पश्चाद्वाप्यते नून सुस्थिरं तदुपासकम्।

अर्थात्—मन को वश में रखने वाले उस गायत्री साधक को उपरान्त में पवित्रता, शान्ति और विवेक, ये तीनों आत्मिक लाभ निश्चित रूप से प्राप्त होते हैं।

कार्येषु साहसः स्थैर्य कर्मनिष्ठा तथैव च।
एते लाभश्च वं तस्माज्जायन्ते मानसास्त्रयः।

अर्थात्—कार्यों में साहस, स्थिरता और वैसी ही कर्मनिष्ठा ये तीन मन सम्बन्धी लाभ उसको प्राप्त होते हैं।

पुष्पकला धनसंसिद्धिः सहयोगश्च सर्वतः।
स्वास्थ्यं वा त्रय एते स्युस्तस्माल्लाभश्च लौकिकाः।

अर्थात्—संतोषजनक धन की वृद्धि, सब ओर से सहयोग तथा स्वस्थता ये तीन लौकिक लाभ उसे निश्चय ही प्राप्त होते हैं।

वाह्यं चाभ्यन्तरं त्वस्य नित्यं सन्मार्गगामिनः।
उन्नतेरुभयं द्वारं यात्युन्मुक्त कपाटताम्।

अर्थात्—सदा सन्माग पर चलने वाले गायत्री उपासक के बाह्य और अभ्यन्तरीय (भीतरी) दोनों, उन्नति के द्वार के कपाट खुल जाते हैं।

अक्षराणां तु गायत्र्या गुम्फनं ह्यस्तितद्विधम्।
भवन्ति जाग्रता येन सर्वागुह्यास्तु ग्रन्थमः।

अर्थात्—गायत्री के अक्षरों का गुम्फन इस प्रकार हुआ है कि इससे (शरीर की) समस्त गुह्य ग्रन्थियाँ जागृत हो जाती हैं।

जागृता ग्रन्थ यस्त्वेताः सूक्ष्माः साधक मानसे।
दिव्य शक्ति समुद्भूति क्षिप्रं कुर्वन्त संशयम।

अर्थात्—जागृत हुई ये सूक्ष्म यौगिक ग्रन्थियाँ साधक के मन में निःसन्देह शीघ्र ही दिव्य शक्तियाँ उत्पन्न कर देती हैं।

जनयन्ति कृते पुंसामेता वै दिव्य शक्तयः।
विविधान वै परिणामान् भव्यान् मंगलपूरितान।

अर्थात्—ये दिव्य शक्तियाँ मनुष्यों के लिए विविध प्रकार के मंगलमय सुन्दर परिणामों को प्रति फलित करती हैं।

अनुष्ठानात्तु वै तस्मात् गुप्ताध्यात्मिक शक्तयः।
चमत्कारमयां लोके प्राप्यन्तेऽनेकधा बुधः।

अर्थात्—गायत्री अनुष्ठान से साधक को संसार में चमत्कार से परिपूर्ण अनेक प्रकार की गुप्त आध्यात्मिक शक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

महामन्त्रस्य चाप्यस्य स्थाने पदे पदे।
गूढ़ानन्तोपदेशानां रहस्यं तत्र वर्त्तते।

अर्थात्—इस गायत्री महामन्त्र के अक्षर २ और पद २ में गूढ़ रहस्य भरा हुआ है तथा अनन्त गूढ़ उपदेश इसमें छुपे हुए हैं।

प्रादुर्भवन्ति वे सूक्ष्माश्चतुर्विशति शक्तयः।
अक्षरेभ्यस्तु गायत्र्या मानवानां हि मानसे।

अर्थात्—मनुष्य के अन्तःकरण में गायत्री के २४ अक्षरों से २४ सूक्ष्म शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है।

एतस्यात्तु जपान्नूनं ध्यानामग्नस्य चेत सा।
जायते क्रमश्चैव षट्चक्राणां तु जाग्रतिः।

अर्थात्—ध्यान व चित्त को एकाग्र करके गायत्री मन्त्र का जप करने से निश्चय ही शरीर के षट् चक्र क्रमशः जाग्रत हो जाते हैं।

षट् चक्राणि यदैतानि जागृतानि भवन्ति हि।
षट् सिद्धयोऽभिजायन्ते चक्रैरेतैर्नरस्य वै।

अर्थात्—जब ये षट्-चक्र जाग्रत हो जाते हैं, तो मनुष्य को इनके द्वारा छः सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

चतुर्विशति वर्णैर्या गायत्री गुम्फिता श्रुतौ।
रहस्य मुक्तं तत्रापि दिव्यै रहस्य वादिभिः।

अर्थात्—२४ अक्षरों में गुँथी हुई जो गायत्री है, विद्वानों के कथनानुसार इन २४ अक्षरों के गुम्फन में बड़े २ गूढ़ रहस्य अन्तर्निहित हैं।

अभ्यन्तरे तु गायत्र्या अनेके योग सञ्चयाः।
अन्तर्हिता विराजन्ते कश्चिदत्र न संशयः।

अर्थात्—गायत्री मन्त्र के अन्तर में अनेक योग संचित हैं। इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

उपरोक्त गायत्री महात्म्य वर्णन से आपने यह भली प्रकार समझा होगा कि इस महामन्त्र में अनेक अलौकिक आध्यात्मिक शक्तियाँ इसके प्रत्येक अक्षर में अन्तर्हित हैं, जो कि साधक को दिव्य गुणों, तेज और शक्तियों से ओत-प्रोत कर देती हैं।

गायत्री मन्त्र की महिमा

वेद, शास्त्रों, ऋषियों, मुनियों तथा तपस्वियों द्वारा वर्णन

१ महर्षि विश्वामित्र जी ने कहा है—

गायत्री के समान चारों वेदों में कोई मन्त्र नहीं है। सम्पूर्ण वेद, यज्ञ, दान, तप आदि गायत्री मन्त्र की कला के समान भी नहीं हैं।

२ मनु ने 'मनुस्मृति' में कहा है-

ब्रह्मा जी ने तीनों वेदों का सार ग्रहणकर तीन पदों वाला गायत्री महामन्त्र रचा। गायत्री से बढ़कर पवित्रकारी अन्य कोई मन्त्र नहीं है। जो मनुष्य नियमित रूप से तीन वर्ष तक गायत्री का जप करता है, वह ईश्वर को प्राप्त होता है। जो द्विज दोनों संध्याओं में गायत्री मन्त्र का जप करता है, वह वेद-अध्ययन के फल को प्राप्त करता है। वह अन्य कोई साधन करे या न करे, केवल गायत्री जप से ही सिद्धि प्राप्त कर सकता है।

३ याज्ञवल्क्य के मतानुसार—

गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं, केशव से श्रेष्ठ कोई देवता नहीं, और गायत्रा से श्रेष्ठ मन्त्र न कोई हुआ और म भविष्य में होगा ही। समस्त वेदों का सार उपनिषद् हैं और समस्त उपनिषदों का सार गायत्री मंत्र है।

४ शंख ऋषि ने गायत्री का गुणगान इस प्रकार किया है—

नरक रूपी समुद्र में गिरते हुए को हाथ पकड़कर बचाने वाली गायत्री ही है। इससे श्रेष्ठ शक्ति न तो स्वर्ग में है और न पृथ्वी पर।

५ पाराशर जी का कथन है—

समस्त जप, सूक्तों तथा वेद मन्त्रों में गायत्री मन्त्र ही परम श्रेष्ठ है।

६ शौनक ऋषि का विश्वस्त मत है--

द्विज अन्य उपासनाएं करे या न करे, केवल गायत्री जप से ही वह जीवन बन्धन से मुक्त हो जाता है तथा भौतिक व पारलौकिक समस्त सुखों को प्राप्त करता है।

७ ब्रह्मर्षि वशिष्ठ जी, जिन्हें गायत्री सिद्ध थी, कहते हैं—

मन्दमति, कुपथगामी और अथिर-बुद्धि वाला भी गायत्री के प्रभाव से उच्च पद को प्राप्त करता है, फिर सद्गति होना अवश्यम्भावी है। जो पवित्रता और स्थिरता से गायत्री की उपासना करते हैं, वे आत्म-बोध का लाभ प्राप्त करते हैं।

८ महर्षि नारद उवाच--

गायत्री भक्ति का ही स्वरूप है। जहाँ भक्ति रूपी गायत्री है वहाँ श्री नारायण का निवास असंदिग्ध है।

९ महर्षि व्यास जी ने लिखा है—

जिस प्रकार पुष्प का सार मधु व दुग्ध का सार घृत है उसी प्रकार समस्त वेदों का सार गायत्री है। सिद्ध की हुई गायत्री कामधेनु के समान है। गंगा शारीरिक पापों को धो देता है और गायत्री रूपी ब्रह्म गंगा से आत्मा पवित्र होती हैं।

१० अत्रिमुनि के उद्गार इस रूप में प्रकट हुए हैं—

गायत्री आत्मा की परम शोधक है, उसके प्रताप से कठिनतम दोषों व दुर्गुणों का परिमार्जन हो जाता है। गायत्री तत्व को भली भाँति समझ लेने वाले विद्वान के लिए इस संसार में कोई सुख शेष नहीं रह जाता।

११ भारद्वाज ऋषि का कथन है कि—

ब्रह्मा विष्णु महेश आदि देवता भी गायत्री का जप करते हैं, वह ब्रह्म से साक्षात्कार कराने वाली है। अधर्म-कर्म करने वाले के दुर्गुण

गायत्री की कृपा से छूट जाते हैं। गायत्री से रहित द्विज शूद्र से भी अधिक अपवित्र है।

१२ 'चरक संहिता' के प्रणेता महान आयुर्वेदाचार्य ऋषिवर चरक ने भी गायत्री के महात्म्य को स्वीकार करते हुए कहा है—

'जो मनुष्य ब्रह्मचर्य पूर्वक गायत्री उपासना करता है और आँवले के ताजा फलों का सेवन करता है, वह दीर्घ जीवी होता है।

१३ अथर्ववेद (१६-७१-१) श्लोक में गायत्री की स्तुति करते हुए उसे आयु, प्राण, शक्ति, कीर्ति, धन और ब्रह्म तेज प्रदान करने वाली कहा गया है।

इसी प्रकार के समानार्थी मतों से धार्मिक ग्रन्थ भरे पड़े हैं, सभी ऋषियों, मुनियों, तपस्वियों, आचार्यों, ब्राह्मणों और विद्वानों ने एक मत से गायत्री मन्त्र में छुपी अनन्त अलौकिक शक्तियों, गूढ़ रहस्यों, ज्ञान और विवेक के अक्षय भण्डारों आदि की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा व गुणगान किया है। अस्तु गायत्री मन्त्र की श्रेष्ठता और महात्म्य असंदिग्ध है।

गायत्री मंत्र का गुणानुवादन

आधुनिक महापुरुषों और विद्वानों के उद्गार

प्राचीन ग्रन्थों और ऋषियों के अतिरिक्त आधुनिक युग के अगणित महापुरुषों और विद्वानों नें भी शास्त्रीयामत का एक स्वर से समर्थन करते हुए गायत्री मंत्र की श्रेष्ठता, महत्ता और उपयोगिता को स्वीकार किया है। नीचे उनके विचार तथा उद्गार उद्धृत किए जा रहे हैं।:—

१ स्वामी रामकृष्ण परमहंस का उपदेश है—

'मैं लोगों से प्रायः कहता हूं कि लम्बी साधनाएं न करके छोटी

सी गायत्री साधना करके देखो। गायत्री का जप करने से बड़ी-२ सिद्धियाँ मिल जाती हैं। यह मंत्र छोटा सा है पर इसकी शक्ति बड़ी भारी है।'

२ स्वामी रामतीर्थ जी कहा करते थे :—

राम को प्राप्त करना सबसे बड़ा काम है। गायत्री मनुष्य की बुद्धि को कामरुचि से हटाकर राम रुचि में लगा देती है और जिसकी बुद्धि पवित्र होगी, वही राम को प्राप्त कर सकेगा। गायत्री पुकारती है कि बुद्धि में इतनी पवित्रता होनी चाहिए कि वह राम को काम से बढ़कर समझे।

३ स्वामी विवेकानन्द जी का कथन है :—

'राजा से वही वस्तु मांगनी चाहिए, जो उसके गौरव के अनुकूल हो। परमात्मा से मांगने योग्य वस्तु सद्बुद्धि है। जिस पर परमात्मा प्रसन्न होता है, उसे सद्बुद्धि प्रदान करता है। सद्बुद्धि से सन्मार्ग पर प्रगति होती है और सत्कर्म से सब प्रकार के सुख मिलते हैं। जो सत् की ओर बढ़ रहा है, उसे किसी प्रकार के सुख की कमी नहीं रहती। गायत्री मंत्र सद्बुद्धि का मंत्र है, इसलिए उसे मंत्रों का मुकुट मणि कहा है।

४ जगद्गुरु शंकराचार्य जी का मत है —

'गायत्री की महिमा का वर्णन करना मनुष्य की सामर्थ्य से परे है। सद्बुद्धि का होना इतना बड़ा कार्य है जिसकी तुलना संसार के अन्य किसी कार्य से नहीं हो सकती। आत्म-प्राप्ति की दिव्य-दृष्टि जिस बुद्धि से प्राप्त होती है, उसकी प्रेरणा गायत्री द्वारा होती है। गायत्री आदि-मंत्र है। उसका अवतार दुरितों को नष्ट करने और रितु के अभिवर्धन के लिए हुआ है।'

५ महर्षि रमण का उपदेश है :—

'योग-विद्या के अन्तर्गत मंत्र-विद्या बड़ी प्रबल है, मंत्रों की शक्ति से

अद्भुत सफलताएं मिलती हैं। गायत्री ऐसा मंत्र है जिससे आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार के लाभ मिलते हैं।

६ स्वामी शिवानन्द जी का कथन है :—

'ब्रह्म मुहूर्त में गायत्री का जप करने से चित शुद्ध होता है और हृदय में निर्मलता आती है, शरीर निरोग रहता है, स्वभाव में विनम्रता आती है, बुद्धि सूक्ष्म होने से दूरदर्शिता बढ़ती है और स्मरण शक्ति का विकास होता है। कठिन प्रसंगों में गायत्री द्वारा दैवी सहायता मिलती है। उसके द्वारा आत्म-दर्शन हो सकता है।

७ स्वामी करपात्री जी ने कहा है :—

'जो गायत्री के अधिकारी हैं, उन्हें नित्य नियमपूर्वक जप करना चाहिए। द्विजों के लिए गायत्री का जप अत्यन्त आवश्यक धर्मकृत्य है।

८ प्रसिद्ध आर्य समाजी महात्मा सर्वदानन्द जी कहते हैं :—

'गायत्री मंत्र द्वारा प्रभु का पूजन सदा से आर्यों की रीति रही है। ऋषि दयानन्द ने भी उसी शैली का अनुसरण करके संध्या का विधान तथा वेदों के स्वाध्याय का प्रयत्न करना बताया है। ऐसा करने से अन्तःकरण की शुद्धि तथा बुद्धि निर्मल होकर मनुष्य का जीवन अपने तथा दूसरों के लिए हितकर हो जाता है। जितना ही इस शुभ कर्म में श्रद्धा और विश्वास हो उतना ही अविद्या आदि क्लेशों का ह्रास होता है। जो जिज्ञासु गायत्री मंत्र का प्रेम और नियमपूर्वक उच्चारण करते हैं, उनके लिए यह संसार-सागर से तरने की नाव और आत्म-प्राप्ति का मार्ग है।'

९ आर्य समाज के प्रवर्तक श्री स्वामी दयानन्द जी कहा करते थे :—

'गायत्री मंत्र सबसे श्रेष्ठ मंत्र है, चारों वेदों का मूल यही गुरुमंत्र है। आदि काल से सभी ऋषि मुनि इसी का जप किया करते थे।

१० काली कमली वाले बाबा विशुद्धानन्द जी कहते थे :—

'पहले तो गायत्री की ओर रुचि ही नहीं होती, यदि ईश्वर कृपा से हो ही जाय, तो वह कुमार्गगामी नहीं रहता। जिसके हृदय में गायत्री वास करती है, उसका मन ईश्वर की ओर जाता है। विषय-विकारों की व्यर्थता उसे भली प्रकार अनुभव होने लगती हैं। कई महात्मा गायत्री जप करके परम सिद्ध हुए हैं। परमात्मा की शक्ति ही गायत्री है, जो गायत्री के निकट जाता है, वह शुद्ध होकर रहता है। आत्म-कल्याण के लिए मन की शुद्धि आवश्यक है और मन की शुद्धि के लिए गायत्री मन्त्र अद्भुत है। ईश्वर प्राप्ति के लिए गायत्री को प्रथम सीढ़ी समझना चाहिए।

११ गीता ज्ञान के व्याख्याता स्वामी विद्यानन्द जी का कथन है :—

'गायत्री बुद्धि को पवित्र करती है। बुद्धि की पवित्रता से बढ़कर जीवन में दूसरा लाभ नहीं है। इसलिए गायत्री एक बहुत बड़े लाभ की जननी है।

१२ योगी अरविन्द घोष कहा करते थे :—

'गायत्री में ऐसी शक्ति सन्निहित है, जो महत्वपूर्ण कार्य कर सकती है। उन्होंने कइयों को साधना के तौर पर गायत्री का जप बताया था।

१३ कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इन शब्दों में अपने उद्गार व्यक्त किए थे :—

'भारत वर्ष को जगाने वाला जो मंत्र है वह इतना सरल है कि एक ही श्वास में उसका उच्चारण किया जा सकता हैं। वह है— गायत्री मन्त्र! इस पुनीत मन्त्र का अभ्यास करने में किसी प्रकार के तार्किक ऊहापोह, किसी प्रकार के मतभेद अथवा किसी प्रकार के बखेड़े की गुंजाइश नहीं है।'

१४ लाकमान्य बालगंगाधर तिलक कहा करते थे :—

'जिस बहुमुखी दासता के बन्धनों में भारतीय प्रजा जकड़ी हुई है। उसका अन्त राजनैतिक संघर्ष करने मात्र से न हो जायगा। उसके लिए आत्मा के भीतर प्रकाश उत्पन्न होना चाहिए, जिससे सत् और असत् का विवेक हो। कुमार्ग को छोड़ कर श्रेष्ठ मार्ग पर चलने की प्रेरणा मिले, गायत्री मंत्र में यही भावना विद्यमान है।'

१५ महात्मा गांधी ने अपने विचार इन शब्दों में प्रकट किए थे :—

'गायत्री मन्त्र का जप निरन्तर रूप से करना रोगियों को अच्छा करने और आत्मा की उन्नति के लिए उपयोगी है गायत्री का स्थिर और शान्त हृदय से किया हुआ जप आपत्ति काल के संकटों को दूर करने का प्रभाव रखता है।'

१६ महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी कहते थे :—

'ऋषियों ने जो अमूल्य रत्न हमें दिए हैं, उनमें से एक अनुपम रत्न गायत्री है। गायत्री से बुद्धि पवित्र होती है, ईश्वर का प्रकाश आत्मा में आता है। इस प्रकाश से ही असंख्य आत्माओं को भव-बंधन से त्राण मिला है। गायत्री में ईश्वर-परायणता के भाव उत्पन्न करने की शक्ति है। साथ ही वह भौतिक अभावों को दूर करती है। गायत्री की उपासना ब्राह्मण-मात्र के लिए तो अत्यन्त आवश्यक है। जो ब्राह्मण गायत्री-जप नहीं करता, वह अपने कर्त्तव्य धर्म को छोड़ने का अपराधी है।

१७ सर डा० राधा कृष्णन ने कहा था :—

'यदि हम इस सार्व-भौमिक प्रार्थना गायत्री पर विचार करें, तो हमें प्रतीत होगा कि यह वास्तव में कितना ठोस लाभ देती है। गायत्री हम में फिर से जीवन का स्रोत उत्पन्न करने वाली आकुल प्रार्थना है।'

१८ दक्षिण भारत के प्रसिद्ध आत्म ज्ञानी टी सुब्बाराव का कहना है :—

'सविता नारायण की दैवी प्रकृति को गायत्री कहते है। आदि-शक्ति होने के कारण इसे गायत्री कहा जाता है। गीता में इसका वर्णन 'आदित्य वर्ण कहकर किया गया है। गायत्री की उपासना करना योग का सबसे प्रथम अंग है।'

इसी प्रकार आधुनिक युग के और भी अनेक विद्वानों व महापुरुषों ने भी गायत्री मन्त्र की महिमा को एक स्वर से स्वीकार किया है। इससे सहज ही यह बोध होता कि गायत्री वास्तव में एक अद्भुत शक्ति स्रोत व साधन है, गायत्री मन्त्र सर्वश्रेष्ठ मंत्र है।

गायत्री उपासना से प्राप्त भौतिक व आध्यात्मिक लाभ तथा उनके प्रत्यक्ष दृष्टान्त

विद्वान पाठक यह तो भली प्रकार जानते ही हैं, कि गायत्री को वेदों की जननी आदि काल से माना जाता है। प्राचीन काल में जबकि भारतवर्ष आध्यात्मिक उन्नति के चरमोत्कर्ष पर था, यह देश तपोभूमि के नाम से विख्यात था। क्योंकि यहाँ बड़े-२ ऋषि, महर्षि, ज्ञानी, मनीषी, महात्मा, विद्वान और आध्यात्मिक ज्ञान के प्रकाण्ड पंडित तथा महान तपस्वी, साधक और अन्वेषक हुए हैं, जिनमें ब्रह्मर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, याज्ञवल्क्य, अत्रि, व्यास, शुकदेव, दधीचि, बाल्मीकि, च्यवन ऋषि, शंख ऋषि, लोमश, वैशम्पायन, दुर्वासा, दत्तात्रेय, अगस्त्य, मैत्रय, लोमश, जाबालि उद्दालक, कण्व, शोनक, सनतकुमार आदि मुनियों के नाम आज भी भारत के आध्यात्मिक इतिहास में जगमगा रहे हैं। इन ऋषि मुनियों के जीवन वृत्तान्त तथा उनके कथनों द्वारा यह बात स्पष्ट रूप से प्रकट होती है, कि उनकी महान आध्यात्मिक सफलताओं का मूल साधन गायत्री उपासना ही थी।

आधुनिक युग में भी जितने महात्मा, विद्वान और महापुरुष हुए हैं, उनमें से अधिकतर गायत्री की महाशक्ति का सम्बल प्राप्त करके

अलौकिक ज्ञान, बुद्धि और प्रतिभा को प्राप्त करते रहे हैं और इस रहस्य का उद्घाटन उन्होंने स्वयं भी किया है। गायत्री मन्त्र की अलौकिक शक्तियों का उन्होंने मुक्त कण्ठ से गुणगान करते हुए उसे अपने उत्थान और विकास का मूल आधार स्वीकार किया है। ऐसे महापुरुषों में जगद्गुरु शंकराचार्य जी, समर्थ गुरु रामानन्द, सन्त ज्ञानेश्वर, मछिन्दरनाथ, हरिदास, रामायण के प्रवर्तक गोस्वामी तुलसीदास, परमहंस रामकृष्ण देव, स्वामी विवेकानन्द, रामानुजाचार्य, माधवाचार्य, स्वामी रामतीर्थ, महर्षि रमण, गौरांग महाप्रभ, स्वामी दयानन्द, आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त सामान्य जनों में भी असंख्य भक्तों ने गायत्री उपासना द्वारा अनेक प्रकार के भौतिक तथा आध्यात्मिक लाभ प्राप्त किए हैं, जिनके कुछ दृष्टान्त पाठकों की सुप्रेरणा के लिए यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

१—कहते हैं कि आयुर्वेद के सुविख्यात ग्रन्थ 'माधव निदान' के प्रणेता श्री माधवाचार्य जी ने आरम्भ में १३ वर्ष तक वृन्दावन में रहकर गायत्री उपासना और गायत्री पुरश्चरण किए थे, किन्तु प्रत्यक्षतः उन्हें जब उस साधना का कोई प्रतिफल प्राप्त होता दिखाई न दिया, ता बड़े निराश होकर वे काशी चले गए और वहाँ एक अवधूत साधु से अपने मन का दुख प्रकट किया। उस अवधूत ने उन्हें भैरव की तान्त्रिक उपासना करने की राय दी। अस्तु वे उसके आदेशानुसार लीनभाव से भैरव की उपासना करने लगे। कुछ दिन में भैरव प्रसन्न हुए और माधवाचार्य के पीछे की ओर प्रकट हो कहने लगे कि 'वत्स ! मैं तेरी उपासना से प्रसन्न हुआ, वर मांग ले।' पीछे से यह स्वर सुनकर माधवाचार्य को बड़ा आश्चर्य हुआ और वे कहने लगे —'हे देव ! आप सम्मुख प्रकट होकर दर्शन दीजिए।'

तब भैरव ने उत्तर दिया —'मैं गायत्री उपासक के सम्मुख प्रकट नहीं हो सकता।' अब तो माधवाचार्य के आश्चर्य का ठिकाना न

रहा। वे बोले—जब आप गायत्री उपासक के सामने नहीं आ सकते तो वरदान क्या देंगे ? कृपया अब आप हमें इतना ही बता दीजिए कि मेरी १३ वर्ष की गायत्री साधना निष्फल क्यों रही ?' तब भैरव ने उत्तर दिया-तुम्हारी अब तक की साधना तुम्हारे पूर्व जन्म के पापों का नाश करने में लग गई। अब तुम्हारी आत्मा निष्पाप हो गई। आगे से जो भी साधना करोगे वह सफल होगी।' यह सुनकर श्री माधवाचार्य फिर वृन्दावन लौट आए और उसी स्थान पर पुनः गायत्री की तपस्या आरम्भ कर दी, अन्त में उन्हें पूर्ण सिद्धि तथा माता गायत्री के दर्शन प्राप्त हुए।

२—गायत्री उपासना का एक और चमत्कारी प्रभाव देखिए :—

नगराई के निकट राम टेकरी के घने जंगल में एक 'हरीहर बाबा' के नाम से विख्यात महात्मा ने गायत्री की तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की थी। उसकी आध्यात्मिक शक्ति का प्रभाव आस पास के क्षेत्र में किस प्रकार व्याप्त था, इसकी चर्चा उस क्षेत्र के प्रत्येक नर-नारी के मुख से आज भी सुनी जाती है। कहते हैं कि महात्मा जी की कुटिया तक जाने के लिए कई मील का घना जंगल पार करना पड़ता था और उस जंगल में सैकड़ों शेर, चीते, बाघ आदि हिंसक पशु पाए जाते थे। कोई भक्त महात्मा जी के दर्शन को जाता, तो मार्ग में उसकी दो-चार शेर चीतों से भेंट अवश्य हो जाती थी, किन्तु इतना कह देने मात्र से कि 'हरीहर बाबा के दर्शन को जा रहे हैं' वे हिंसक जीव बिना किसी प्रकार की हानि पहुंचाए चुपचाप रास्ता छोड़ देते थे और जंगल में चले जाते थे। इस प्रकार दर्शनार्थी भक्त निर्भय होकर महात्मा जी की कुटिया तक पहुँच जाते थे कितना प्रताप था उन गायत्री सिद्ध महात्मा का !

३—महात्मा देवगिरि जी बताते थे कि उनके गुरु जी हिमालय की एक गुफा में गायत्री तप किया करते थे। वे अपने आसन से उठकर भोजन शयन स्नान या मल मूत्र तक त्यागने के लिए नहीं

जाते थे, क्योंकि उन्हें इनकी आवश्यकता ही प्रतीत नहीं होती थी। गायत्री तप के प्रभाव से उनकी आयु ४०० वर्ष से भी अधिक हो चुकी थी फिर भी उनका शरीर त्याग का समय नहीं आया था।

४—आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द जी के गुरु थे स्वामी विरजानन्द सरस्वती। उन्होंने गंगा के किनारे तीन वर्ष तक गायत्री का जप किया था। वे वाह्य रूप से अंधे थे, किन्तु ज्ञान-चक्षुओं द्वारा वे अगाध विद्या और ज्ञान प्राप्त कर चुके थे। उनमें अलौकिक ब्रह्म तेज था, जोकि सब गायत्री की कृपा से था।

५—एक बूटीसिद्ध नामक महात्मा जोकि सदैव मौन धारण किए रहते थे, मथुरा के निकटवर्ती क्षेत्र में बड़े विख्यात थे। लोगों की उनके प्रति अटूट श्रद्धा और अखण्ड विश्वास था। कहते हैं कि वे अलवर राज्य के एक साधारण परिवार में उत्पन्न हुए थे। उन्हें किसी कारण वश घर से वैराग्य हो गया और मथुरा में आकर उन्होंने एक टीले पर एक करोड़ गायत्री मंत्र का जप किया, जिससे उन्हें माता नें दर्शन देकर कृतार्थ किया और वे सिद्ध हो गए। आज भी वह ठीला गायत्री टीले के नाम से प्रसिद्ध है और अब वहाँ एक मन्दिर बन गया है, जिसमें गायत्री की भव्य मूर्ति स्थापित है। उन महात्मा के आशीर्वाद से असंख्य जनों का कल्याण हुआ। अलवर व धौलपुर नरेश उनके अनन्य भक्त थे।

६—बड़ौदा के मंजुसर ग्राम निवासी श्री मुकुटराम जी महाराज गायत्री की उपासना से सिद्धि प्राप्त कर चुके थे, वे प्रतिदिन आठ घण्टे नियमित रूप से गायत्री का जप किया करते थे। वे गुजराती की केवल दो कक्षा पास थे, किन्तु गायत्री की दिव्यशक्ति द्वारा वे विश्व भर की भाषाओं के ज्ञाता हो गए थे और विदेशी लोग आ आकर उनसे घण्टों अपनी भाषा में बातें करते थे। साथ ही वे योग विद्या, जोतिष विद्या, वैद्यक, तंत्र विद्या तथा धर्मशास्त्रों के पूरे-२ पंडित होगए थे। देश देशान्तर के समाचार इस प्रकार बताते

थे, मानों सब कुछ आँखों से देख रहे हों। पश्चात् परीक्षा करने पर उनकी बातें सोलह आने सत्य सिद्ध होती थीं।

७ एक और प्रत्यक्ष दृष्टान्त है—काशी में बाबू शिवप्रसाद जी गुप्त द्वारा स्थापित 'भारतमाता' मन्दिर का शिलान्यास बाबू भगवान दास द्वारा होना था, उसके उपलक्ष्य में १० लाख गायत्री जप का एक महायज्ञ आयोजित किया गया। यज्ञ की पूर्णाहुति के दिन पास में लगे पेड़ों के सूखे पत्ते अकस्मात् हरे हो गए, कुछ पेड़ों में असमय ही फल आ गए। यह सारा चमत्कार पं० मदनमोहन मालवीय, राजा मोती चन्द, हाई कोर्ट के जज श्री कन्हैयालाल आदि गणमान्य व्यक्तियों ने भी प्रत्यक्ष देखा, जो कि उस अवसर पर वहाँ उपस्थित थे

८ गढ़वाल के महात्मा गोविन्दानन्द जी अत्यन्त विषधर सर्पों के दंशित रोगियों की प्राणरक्षा करने के लिए दूर-दूर तक विख्यात थे, पूछने पर वे स्वयं बताते थे, कि यह सब गायत्री जप के प्रभाव से ही सम्भव था। इसी प्रकार समस्तीपुर के श्री शोभान साहू भी गायत्री मन्त्र की शक्ति से विषैले जन्तुओं तथा पागल कुत्ते के काटे रोगियों को ठीक कर देते थे।

९ विठूर के पास खांडेराव नामक एक वयोवृद्ध तपस्वी एक विशाल खिरनी के वृक्ष के नीचे बैठकर गायत्री-साधना किया करते थे। उन्होंने एक बार विराट् गायत्री यज्ञ और ब्रह्म भोज का अयोजन किया। सारे दिन लोगों की पंक्तियाँ भोजन करती रहीं। अन्त में रात के नौ बजे के लगभग घी समाप्त हो गया और अभी हजारों व्यक्ति भोजन करने के लिए शेष थे। खांडेराव जी को वस्तुस्थित की सूचना दी गई, तो वे तत्क्षण बोले—जाओ गंगाजी में से चार कनस्तर भर लाओ और पूड़ियाँ सिकने दो। उनकी आज्ञानुसार गंगाजल भरकर लाया गया। कहते हैं कि वे पूड़ियाँ घी से भी बढ़ कर स्वादिष्ट थीं। दूसरे दिन महात्मा जी ने चार कनस्तर घी मंगवाकर गंगाजी में डलवा दिया।

१० चन्देल क्षेत्र निवासी गुप्त योगेश्वर श्री उद्धड़ जी जोशी नाम के एक सिद्ध पुरुष हुए हैं। गायत्री उपसना से उनकी कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत हो गई थी। उनकी वाणी सत्यसिद्ध हो चुकी थी। वे जो कह देते थे, सदैव सच होता था। अनेक लोगों की उनकी कृपा से प्राणरक्षा हुई, बहुतों को धन सम्मान आदि प्राप्त हुए, असंख्य नाना प्रकार की आपत्तियों से छूटे। एक बार एक शंकालु व्यक्ति ने उनका उपहास किया, तो उन्होंने उसे श्राप दे दिया कि 'जा! तू कोढ़ी हो जायगा।' और कुछ दिनों बाद ही वह व्यक्ति सचमुच कोढ़ी हो गया।

११ और अगणित धर्म ग्रन्थों में वर्णित ब्रह्मर्षि वशिष्ठ जी की गायत्री सिद्धि के दृष्टान्त तो आप में से बहुतों ने पढ़े व सुने ही होंगे, फिर भी न जानने वाले जिज्ञासु पाठकों की जिज्ञासा तृप्ति हेतु यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूं :—

वशिष्ठ जी, जो कि राजगुरु के पद पर सुशोभित थे, महान तपस्वी ब्रह्मर्षि थे। विश्वामित्र जी जो कि उस समय एक प्रतापी राजा थे, एक बार शिकार खेलते हुए अपने सैनिकों समेत वशिष्ठ जी के आश्रम के निकट पहुंच गए। उन्होंने भी वशिष्ठ जी का बड़ा नाम सुना था, सो वे सैनिकों को वहीं ठहरने का आदेश कर वशिष्ठ जी के दर्शन करने आश्रम में पहुंचे। वशिष्ठ जी ने उनका बड़ा आदर सत्कार किया। जब वे उठकर जाने को तैयार हुए, तो वशिष्ठ जी ने उनसे रात को आश्रम पर ही ठहरने का आग्रह किया। राजा विश्वामित्र कहने लगे—महाराज! हमारे साथ तो पूरी सेना है, आप जैसे त्यागी तपस्वी ब्राह्मण के लिए इतने सैनिकों के भोजन की व्यवस्था करना भी सम्भव न होगा। यह सुनकर वशिष्ठ जी मुस्कुराए और कहने लगे कि—ईश्वर की कृपा से सब प्रबन्ध हो जायगा, आप यदि ठहरना चाहें तो ठहर जाइए। विश्वामित्र को उनकी बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। मन में सोचने लगे कि चलो आज

वशिष्ठ जी की परीक्षा भी हो जायगी। अस्तु वे आश्रम पर ही ठहर गए। वशिष्ठ जी अपनी संध्याकालीन उपासना में लीन हो गए।

सध्या पूजन से जैसे ही वशिष्ठ जी उठे, उन्होंने राजा विश्वामित्र से कहा, कि आप अपने समस्त सैनिकों को भोजन के लिए बुलवाइए। विश्वामित्र हैरान थे—न कोई सामग्री आई न कोई बनाने वाला, न कोई व्यवस्था। और वशिष्ठ जी कह रहे हैं, कि सैनिको को भोजन के लिए बुलवाइए। उन्होंने शंका प्रकट की, तो वशिष्ठ जी ने अपना ब्रह्मदण्ड उठाकर जैसे ही घुमाया, तो विश्वामित्र क्या देखते हैं कि क्षण मात्र में आश्रम के पार्श्व-उद्यान में नाना प्रकार के व्यजनों से भरे थाल सजे हुए हैं, और हजारों व्यक्तियों के भोजन की व्यवस्था पलक झपकते ही हो गई। अब तो मन ही मन वशिष्ठ जी के ब्रह्मबल की प्रशंसा करते हुए सैनिकों को बुलाने की आज्ञा उन्होंने भेज दी। कई सौ सैनिक जो उनके साथ थे: आए और तृप्ति पूर्वक भोजन करके चले गए। उन्होंने ऐसा स्वादिष्ट भोजन अपने जीवन में पहले कभी नहीं किया था। विश्वामित्र ने आश्चर्यातिरेक हो अपने सैनिक जासूसों को आज्ञा दी कि रात के अन्धेरे में आश्रम के चारों ओर का क्षेत्र पूरी तरह छानकर पता लगाओ, कि कहीं कोई गुप्त भण्डार तो नहीं बना रखा है वशिष्ठजी ने। प्रातःकाल जासूसों ने समाचार दिया कि महाराज! कहीं कोई भण्डार नहीं हैं। आश्रम में केवल एक गाय अवश्य है, जिसकी वशिष्ठ जी बड़ी श्रद्धा से सेवा करते हैं। और रात को उसी गाय के पास खड़े ऋषिवर कह रहे थे—माँ! तूने आज अपने पुत्र की लाज रखी, इसके लिए मैं तेरा कृतज्ञ हूं। मुझ पर ऐसी ही दया बनाए रखना। तब तो विश्वामित्र को विश्वास हो गया कि वशिष्ठ जी के पास कामधेनु गाय है और उसी के कारण यह सब सम्भव हुआ। उन्होंने दूसरे दिन वशिष्ठ जी से कहा—कि आप अपनी गाय मुझे दान करदें, क्योंकि ऐसी उत्तम गाय तो राजमहल की ही शोभा हो

सकती है। यह सुनकर वशिष्ठ जी बोले—राजन्! वह तो मेरी माता है, उसके बिना तो मेरा जीवन ही शून्य है। आपकी दृष्टि में वह एक गाय मात्र है किन्तु मेरी दृष्टि में वह मेरी जननी, मेरी पोषक और मेरे जीवन का सर्वस्व वही है। मैं किसी प्रकार भी उसे अपने से विलग नहीं कर सकता।

वशिष्ठ जी का ऐसा उत्तर सुनकर विश्वामित्र ने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि बलपूर्वक इस गाय को ले चलो। फिर क्या था? विश्वामित्र के सैनिक ज्योंही गाय की ओर बढ़े, वशिष्ठ जी ने अपना ब्रह्मदण्ड उठा लिया। पलमात्र में उस गाय के शरीर से हज़ारों वीर सैनिक उत्पन्न हो गए, जिन्होंने विश्वामित्र के असंख्य सैनिकों को यमलोक पहुंचा दिया। जो बचे, वे भाग गए और स्वयं विश्वामित्र ने भागकर अपने प्राण बचाए। वशिष्ठ जी का ऐसा आध्यात्मिक बल देखकर विश्वामित्र के मुंह से निकला—

'धिक् बलं क्षत्रिय बलं, ब्रह्म बलं परं बलम्।

और फिर सारा राजपाट त्याग वे ब्रह्मबल प्राप्त करने के लिए घोर तपस्या में लीन हो गए। उन्होंने साठ हजार वर्ष तक कठोर तप किया और तब ब्रह्मर्षि पद को प्राप्त किया।

इन दृष्टान्तों और उदाहरणों से आप लोग भली-भांति समझ गए होंगे, कि गायत्री वह महाशक्ति है, जिसके द्वारा संसार में कोई कार्य असम्भव नहीं। साथ ही यदि मनुष्य पवित्र मन, निष्ठा और विश्वासपूर्वक माँ गायत्री की उपासना करे, तो उसकी उपासना कभी निष्फल नहीं जाती। माँ की कृपा से उसमें दिव्य शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है और भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं। उसका इहलोक और परलोक दोनों संवर जाते हैं, तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति और सफलता प्राप्त होती है।

गायत्री पुरश्चरण-विधान

★ गायत्री पुरश्चरण विधि विधान तथा जप-ध्यानादि विधि

★ गायत्री कल्प (न्यास, मार्जन, तर्पण इत्यादि सहित)

★ गायत्री शापोद्धारम् आदि

गायत्री पुरश्चरण विधि विधान

पुरश्चरण की भी धार्मिक ग्रन्थों में भिन्न २ विद्वानों द्वारा मिन्न २ व्याख्याएं प्रस्तुत की गई हैं। यथा—

(१) नित्य त्रिकाल देव पूजन, जप, तर्पण, हवन तथा ब्राह्मण-भोजन इन पाँच विधियों को पुरश्चरण कहते हैं।

(२) मन्त्र फल की सिद्धि के लिए प्रारम्भ में शास्त्रीय विधि विधान से किया गया अनुष्ठान पुरश्चरण कहलाता है।

(३) पुरः अर्थात् पूर्व को (आगे को) चरण अर्थात् चलना। तो आगे चलने से पूर्व तैयारी की जो स्थिति होती है, उसे पुरश्चरण कहा जाता है। भावार्थ यह है कि किसी अभीष्ठ उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पर्याप्त मात्रा में आत्मबल एकत्रित करने के लिए कुछ काल तक आन्तरिक शक्तियों को जाग्रत और विकसित किया जाता है, उसी प्रक्रिया को पुरश्चरण कहते हैं।

पुरश्चरण का मुख्य नियम—

पुरश्चरण का मुख्य नियम यह है कि जितने मंत्रों का जप करें, उसकी दशांश आहुतियों का हवन होना चाहिए और हवन का दशाँश तर्पण, तर्पण का दशाँश मार्जन और मार्जन का दशांश ब्राह्मण-भोजन अनिवार्य है। अर्थात् यदि सवा लाख मन्त्र का जप किया जाय, तो १२,५०० आहुतियों का हवन, १२५० तर्पण, १२५ मार्जन और १२ से अधिक ब्राह्मणों का भोजन कराना आवश्यक है। अस्तु पुरश्चरण करने का संकल्प करने वाले साधक को प्रथम अपनी आर्थिक क्षमता और सामर्थ्य का विचार रखते हुए ही मन्त्र-जप की संख्या निर्धारित करनी चाहिए। कम से कम २४ हजार मन्त्रों का जप किया जा सकता है उससे अधिक सामर्थ्यानुसार सवा लाख,

चौबीस लाख, एक करोड़, सवा करोड़ इत्यादि मन्त्रों का जप किया जा सकता है। किन्तु यह जप २४ दिन में पूरा करना होता है, अस्तु यदि अधिक बड़ा पुरश्चरण किया जाता है, तो जप हवन तर्पण आदि में सहायता सहयोग करने के लिए उपयुक्त पारिश्रमिक देकर धर्माचारी ब्राह्मणों की नियुक्ति करली जाती है और उनके भोजन, वस्त्र, पात्र तथा दक्षिणा आदि की समुचित व्यवस्था पुरश्चरण साधक को करनी होती है। पुरश्चरण पूरा हो जाने पर ब्राह्मण भोजन, कथा कीर्तन तथा प्रसाद वितरण आदि के द्वारा उत्सव मनाते हुए पूजा की सामग्री आदि गंगाजी या अन्य किसी पवित्र स्थान में विसर्जित करनी चाहिए।

पुरश्चरण के लिए उपयुक्त स्थान चयन—

विश्वामित्र कल्प के अनुसार पुरश्चरण के लिए उपयुक्त स्थान पर्वत शिखर, नदी का तट, बेल की छाया तले, तालाब के किनारे, गौशाला, मन्दिर, पीपल वृक्ष के नीचे, उद्यान, तुलसी वन, पुण्य क्षेत्र गुरु आश्रम अथवा तीर्थ स्थान होता है। इन स्थलों पर मन्त्रसिद्धि के लिए किया गया पुरश्चरण अथवा अनुष्ठान निश्चय ही फलप्रद एवम् सफल होता है।

पुरश्चरण जप के लिए स्थान के वियय में नारद पुराण में लिखा है कि—

भगवान शिव की प्रतिमा के समीप, सूर्य, अग्नि तथा गुरु के समीप अथवा जलते हुए दीपक के पास जप करने से फल की सिद्धि होती है। घर में जप करने से सामान्य फल, गौशाला में जप करने से उसका सौ गुना नदी के तट पर लाख गुना और शिव के समक्ष (अर्थात् शिव मन्दिर में) जप करने से अनन्त गुना फल होता है। समुद्र तट, तालाब, पर्वत, देवालय तथा सभी पुण्याश्रमों में जप करने से करोड़ गुना फल होता है।

उपरोक्त वर्णन अनुसार उपयुक्त स्थान पर साधक को पहले दीप स्थान अर्थात् सूर्य चक्र का निर्माण करना चाहिए। वह इस प्रकार कि भूमि को समतल कर उसमें नव कोण बनावे। पूर्व कोष्ठ से आरम्भ कर क्रमशः कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग और यवर्ग आदि लिखे। मध्य कोष्ठ में २-२ स्वर (अआ, इई, उऊ आदि) क्रम से लिखे। फिर पूर्व के क्रम से जहाँ नाम का आदि अक्षर आता हो, वहीं कूर्म का मुख समझना चाहिए। उसके दोनों बगल में कूर्म (कछुवे) के हाथ समझें। इसी प्रकार पीठ, कुक्षि, दो पैर तथा पूंछ की कल्पना करें। यही सब मन्त्रों की सिद्धि का साधन शास्त्र वर्णित कूर्म चक्र होता है।

उपयुक्त स्थान का चुनाव करने के पश्चात् साधक को अपने शरीर की शुद्धि करना आवश्यक है। महर्षि याज्ञवल्क्य के मतानुसार शरीर-शुद्धि के लिए साधक को कम से कम तीन लाख, अथवा आठ या चौबीस लाख वेदोक्त गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिए। अथवा—पवित्र नदी आदि के जल में सर्व प्रायश्चित्त की विधि से कम से कम डेड़ वर्ष अथवा तीन वा छः वर्ष तक यथा शक्ति कृच्छ चान्द्रायणादि सभी प्रायश्चित्त करके तब पुरश्चरण आरम्भ करना चाहिए।

पुरश्चरण साधक के लिए भोजन विषयक शास्त्रीय नियम...

पुरश्चरण करने वाले साधक को शुद्ध अन्न का भोजन करने का शास्त्रीय निर्देश है। विश्वामित्र कल्प में बताया गया है कि शुद्ध अन्न चार प्रकार का होता है—(१) अयाचित (बिना माँगा हुआ) (२) उञ्छ (खेत में गिरे दाने संग्रह करके) (३) शुक्ल (अर्थात् अपने परिश्रम से ईमानदारी के साथ कमाकर प्राप्त किया गया) (४) भिक्षा। भिक्षा में प्राप्त अन्न को वैदिक विधान से शुद्ध करके तभी प्रयोग करना चाहिए। ब्राह्मण साधक को चाहिए कि वह

ब्राह्मण के अतिरिक्त क्षत्रिय वैश्य अथवा शूद्र का अन्न भिक्षा में ग्रहण न करे, क्योंकि पुरश्चरण में मांस के स्पर्श मात्र से तपस्या नष्ट हो जाती है। दूसरे भिक्षा में प्राप्त अन्न को चार बराबर भागों में विभक्त कर प्रथम भाग किसी ब्राह्मण को दे, द्वितीय भाग गौग्रास का तृतीय भाग अतिथि को खिला कर केवल चतुर्थ भाग साधक स्वयं ग्रहण करे। पुरश्चरण में स्थित तपस्वी साधक यदि गृहस्थ ब्राह्मण हो, तो केवल १६ ग्रास ग्रहण करे, वानप्रस्थ हो तो ८ ग्रास ले और यदि ब्रह्मचारी हो तो इच्छानुसार भोजन ग्रहण कर सकता है। किन्तु भोजन ग्रहण करने से पूर्व गो मूत्र से क्रमशः नौ, छः तथा तीन बार प्रोक्षण करना चाहिए। प्रोक्षण करने की शास्त्र निर्देशित विधि यह हैं कि हाथ की सभी अंगुलियों को सटाकर 'ॐ तत्सत्' मन्त्र का उच्चारण कर अन्न का प्रोक्षण करे। आहार नियमों का पालन करते हुए गुरुभक्ति से ओत-प्रोत साधक को छः मास में ही सिद्धि प्राप्त हो सकती है, किन्तु गायत्री जप रूप में कर्म में एक दिन पंचगव्य पीकर दूसरे दिन केवल वायु के आहार पर, और तीसरे दिन किसी धर्मा-नुयायी ब्राह्मण का अन्न खाकर पुरश्चरण करना चाहिए। अथवा— स्नान करते समय एक सौ गायत्री मन्त्र का जाप करे, फिर जल के भीतर आचमन करता हुआ एक सौ गायत्री मन्त्र का जप करे अर्थात् प्रत्येक मन्त्र के साथ एक एक आचमन करे। इस प्रकार के जप से कृच्छ चान्द्रायण आदि का फल प्राप्त होता है, ऐसा कुछ आचार्यो का मत है।

पुरश्चरण में स्थित साधक के लिए निषेध—

पुरश्चरण करने वाले साधकों को नमक, खार, खट्टे पदार्थ व गाजर आदि का आहार निषिद्ध है : इसके अतिरिक्त ताम्बूल, एक बार से अधिक भोजन, दुष्ट व अधार्मिक व्यक्तियों का संग, पागलपन श्रुति तथा स्मृतियों का विरोध और रात्रिकालीन जप का भी निषेध किया गया है। यदि श्राद्ध आदि के कारण पुरश्चरण-कर्त्ता जप

अनुष्ठान का परित्याग करता है, तो वह देवद्रोही होता है और अपनी सात पीढ़ियों को नरक में ले जाता है।

गायत्री पुरश्चरण के लिए नियम—

गायत्री पुरश्चरण करने वाले साधक को पूर्वोक्त नियमों तथा निषेधों का पालन करने के साथ २ कुछ अन्य नियमों का भी पालन करना आवश्यक है। यथा—भूमिशयन, ब्रह्मचर्य पालन, मौनव्रत धारण, त्रिकाल स्नान, क्षुद्र कर्मों का त्याग, नित्य पूजा. नित्य दान. लीन भाव से भगवान की स्तुति, कीर्तन, नैमित्तिक अर्चन गुरु तथा गायत्री में पूर्ण विश्वास और श्रद्धा - इन १२ नियमों का पालन मंत्र तथा धर्म सिद्धि में सहायक होता है। साथ ही उसे नित्य सूर्य की प्रदक्षिणा कर सूर्याभिमुख हो गायत्री की मूर्ति, प्रतिमा अथवा चित्र का पूजन करना चाहिए। अग्नि में सूर्य का पूजन करे। स्नान, पूजन, जप, ध्यान, हवन तर्पण आदि कृत्यों में निरन्तर लगा रहे और कामना विरत हो देवता में अपने सभी कर्म का निवेदन करे।

पुरश्चरण के लिए उपयुक्त काल लग्नादि—

'रुद्रयामल' के अनुसार वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक फाल्गुन तथा अगहन मास पुरश्चरण के लिए श्रेष्ठ हैं।

'स्मृतिचन्द्रिका' के अनुसार-पूर्णिमा, पञ्चमी, द्वितीया सप्तमी, त्रयोदशी तथा दशमी ये तिथियां पुरश्चरण के लिए अत्यन्त शुभ हैं। इन तिथियों में ही पुरश्चरण का आरम्भ करना श्रेष्ठ होता है।

शुभ लग्न के विषय में 'रुद्रयामल' में लिखा है कि —

जिस समय गुरु और शुक्र दोनों उदय हो, शुद्ध लग्न हो और उत्तम वार हो, चन्द्रमा तथा नक्षत्र अनुकूल हों, शुक्ल पक्ष हो, तो ऐसे शुभ लग्न में पुरश्चरण आरम्भ करने से मंत्र की अवश्य ही सिद्धि होती है।

पुरश्चरण काल में प्रयुक्त आसन का महत्व —

पुरश्चरण काल में साधक यदि कृष्ण मृगचर्म के आसन पर बैठकर जप करे तो ज्ञान प्राप्त होता है, व्याघ्र चर्म के आसन पर बैठ कर जप करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है, कुशासन पर बैठकर जप करने से पुष्टि प्राप्त होती है। वेत्रासन (बेत का आसन) शान्ति प्रदायक होता है, वंशासन पर बैठकर जप करने से व्याधियों का नाश होता है कम्बल पर बैठकर जप करने से दुखों का नाश होता है, इत्यादि फल शारदा ग्रन्थ में कहे गए हैं।

पुरश्चरण में प्रयुक्त माला का संस्कार विधान —

शारदाग्रन्थ में कहा गया है कि —

रुद्राक्ष तथा श्वेत कमल की माला चाहे छोटी, बड़ी, अथवा फूटी हुई ही क्यों न हो, सब प्रकार के जपों में प्रशस्त है। माला १०८ दानों की होनी चाहिए। जप काल में माला तथा जप की मुद्रा गुप्त रखनी चाहिए, यहाँ तक कि गुरु को दिखाना भी वर्जित है, अस्तु माला को वस्त्र से पूर्णतया ढंक कर जप करें।

माला संस्कार के विषय में लिखा है —

प्रथम माला को पंचगव्य से, फिर जल से 'ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि' इस मंत्र का उच्चारण करते हुए प्रक्षालन करें, पश्चात् चन्दन, अगुरु तथा गंध का घर्षण इस मंत्र के साथ करें—'ॐ वामदेवाय'। 'ॐ अघो रेभ्योऽथ—' इस मंत्रोच्चार से धूप दे। फिर 'ॐ तत्पुरुषाय' मंत्र द्वारा अनुलेपन और 'ॐ ईशानः सर्वः इस मंत्र द्वारा सौ सौ बार अभिमंत्रित करना चाहिए। इसी प्रकार मेरु को भी इसी मंत्र से अभिमंत्रित करे। उपरान्त जिस मंत्र का जप करना हो, उसी मन्त्र से माला को प्रतिष्ठित करना चाहिए, तब उस मंत्र का उससे जप करना चाहिए। गायत्री पुरश्चरण के लिए माला को गायत्री मंत्र द्वारा ही प्रतिष्ठित करना चाहिए।

गायत्री मंत्र का जप किस प्रकार करें ? —

इस सम्बन्ध में 'विश्वामित्र कल्प' में लिखा है —

ॐ कारं पूर्व मुच्चार्यं भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
गायत्री प्रणवान्तां च मध्ये त्रिप्रणवां तथा।

एवं नित्यं जपं कुर्याद् ब्राह्मणो विप्रपुङ्गवः
भिन्न पादा तु गायत्री ब्रह्म हत्या प्रणाशिनी।

तथा—

अभिन्न पादा गायत्री ब्रह्म हत्यां प्रयच्छति।
अच्छिन्न पाद गायत्री जपं कुर्वन्ति ये द्विजाः।

अधो मुखाश्च तिष्ठन्ति कल्प कोटिशतानि च।
धर्मशास्त्र पुराणेषु इतिहासेषु सुव्रत !

पञ्च प्रणव संयुक्तां जपे दिव्यनुशासनम्
जप संख्याष्ट भागान्ते पादो जाप्यस्तुरीयकः।

स द्विजः परमो ज्ञेयं परं सायुज्यमाप्नुयात्।
अन्यथा प्रजपेद्यस्तु स जपो विफलो भवेत्॥

प्रारम्भ दिनमारभ्य समाप्ति दिवसावधि।
न न्यूनं नातिरिक्तं च जपं कुर्याद् दिने दिने॥
नैरन्तर्येण कुर्वति स्व स्ववृत्ति न लिम्पयेत्।
प्रातरारभ्य विधि वज्जपेन्मध्यन्दिनावधि।
मनः संहरणं शौचं यानं मन्त्रार्थ चिन्तनम्।

अर्थात्—प्रथम ॐ कार का उच्चारण करे, पश्चात् 'भूर्भुव स्वः' उच्चारण करे। फिर पुनः ॐ कार का उच्चारण कर गायत्री मंत्र पढ़े। अर्थात् —

('ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं ॐ भर्गो देवस्य धीमहि ॐ धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ') इस प्रकार गायत्री मंत्र के मध्य प्रत्येक

पाद के अन्त में ॐ लगाकर तथा गायत्री मंत्र के अन्त में प्रणव ॐ का उच्चारण करते हुए जप करना चाहिए। इस विधि के अनुसार श्रेष्ठ ब्राह्मण नित्य जप करे। यदि गायत्री मंत्र के तीन पाद भिन्न करके जप किया जाता है तो वह ब्रह्म हत्या का विनाश करने वाला होता है। किन्तु गायत्री मंत्र को पादशः पृथक न करके जप करने वाले को ब्रह्म हत्या का पाप लगता है जो ब्राह्मण गायत्री के पाद को अलग न कर एक पाद में ही जप करता है वह करोड़ो वर्षों तक अधो मुख (नर्क) में वास करता है। धर्मशास्त्र पुराणों तथा इतिहास में कहा गया है कि गायत्री को उपर्युक्त पञ्चप्रणव से युक्त ही जप करना चाहिए। जब जप पूरा हो जाय, तो चौथा पाद 'धियो योनः प्रचोदयात्' इसका यथाशक्ति जप करना चाहिए। इस प्रकार जप करने वाला ब्राह्मण श्रेष्ठ सायुज्य मुक्ति फल को प्राप्त करता है। इससे भिन्न जो जप किया जाता है, वह निष्फल हो जाता है। पुरश्चरण के दिन से आरम्भ कर अन्तिम दिन तक जप की संख्या घटानी या बढ़ानी नहीं चाहिए, साथ ही अपनी नित्य विधि का भी लोप न करे। प्रातः काल से आरम्भ कर मध्यान्ह पर्यन्त गायत्री जप करने की विधि है। मन को पूरी तरह वश में रखना चाहिए। पवित्रतापूर्वक मंत्र के अर्थ का जप काल में चिन्तन करना चाहिए। विश्वामित्र कल्प के अनुसार २४ लाख गायत्री जप का एक पुरश्चरण होता है।

गायत्री पुरश्चरण के लिए हवन-सामग्री—

'विश्वामित्र कल्प' में निर्देश है कि तिल, पत्र, फूल, यव मधु से युक्त कर जप की दशांश आहुतियों से होम करे, इस प्रकार मंत्र की सिद्धि हो जाती है।

'शारदा ग्रन्थ' में लिखा है, कि गोदुग्ध, पायस, तिल, दूर्वा दुधार वृक्षों (पीपल, गूलर, पाकड़, बड़ आदि) की समिधा (लकड़ी) से प्रत्येक के ३-३ हजार अर्थात् आठों को मिलाकर चौबीस हजार होम

मन्त्र सिद्धि के लिए करना चाहिए।

उपरोक्त शास्त्रीय वर्णन अनुसार गायत्री पुरश्चरण के लिए उपयुक्त स्थान, समय, मुहूर्त तथा सामग्री आदि का ध्यान रखकर पवित्रता पूर्वक आटा, रोली, हल्दी, मेंहदी, पीली मिट्टी तथा पेवड़ी आदि मांगलिक द्रव्यों से चौक पूरें और उस चौक के मध्य में हवन की वेदी का निर्माण करें। हवन की वेदी भूमि से चार अंगुल ऊंची रहे तथा २४ अंगुल चौड़ी हो। ईशान कोण में कलश स्थापित करे। एक चौकी पर देव स्थापन तथा गायत्री मंत्र स्थापना करे। चौकी के निकट गौघृत का दीपक जला कर रखें, उपरान्त आगे वर्णित गायत्री पूजन करके अन्य कार्य करे।

गायत्री पुरश्चरण में नित्यकर्म स्नानादि, संध्या, गायत्री पूजन (जिसके अन्तर्गत अंगपूजन, कवच, न्यास ध्यान, स्तोत्र आदि हैं। शाप मोचन, हवन, तर्पण, मार्जन, मुद्रा, विसर्जन, और ब्राह्मण भोजन ये दस कार्य नित्यनियम पूर्वक किए जाते हैं। इन दसों कार्यों का आगे वर्णन किया जा रहा है। इस प्रकार शास्त्रीय विधि विधान पूर्वक पवित्र हृदय, श्रद्धा व विश्वास पूर्वक यदि गायत्री पुरश्चरण पूर्ण किया जाता है, तो साधक को अनन्त भौतिक एवम आध्यात्मिक लाभ प्राप्त होते हैं।

गायत्री पुरश्चरण में किसी प्रकार की त्रुटि न होने पाए, अस्तु किसी अनुभवी व ज्ञाता कर्मकाण्डी पुरोहित के निर्देशन में किया जाय, तो अत्युत्तम है। अब हम गायत्री पुरश्चरण के उपरोक्त दसों कार्य विधानों का वर्णन करते हैं।

गायत्री कल्पः

गायत्री पुरश्चरण के लिए
नित्य नैमित्तिक शास्त्रीय विधि-विधान

गायत्री पुरश्चरण के लिए विश्वामित्र कल्पोक्त नित्य नैमित्तिक शास्त्रीय विधि-विधान इस प्रकार बताया गया है :—

१—आन्हिक लक्षण योग—

अस्य कृत्स्नस्य मंत्रस्य प्राणायामं निरुन्धयेत् ।
प्राणायामं नियम्याशु गुरु पूजा पुरः सरम् ।
प्रातरुत्थाय यो विप्रः शयने पर्यवस्थिता ।
एकाग्रमानसो भूत्वा ध्यायेन्मूलेऽस्थ कुण्डलीम् ।

अर्थात्—सर्व प्रथम मन्त्र सिद्धि के लिए सोकर उठने के पश्चात् गुरु का मन ही मन श्रद्धापूर्वक ध्यान व पूजन कर प्राणायाम करे, फिर मन को एकाग्र करके नाभि के नीचे मूलाधार में स्थित कुण्डलिनी का ध्यान करे।

नाभि सन्निहिता ज्ञेया द्वात्रिंशद्वर्णसंख्यया ।
एवं ज्ञात्वा प्रभातायां षडाधारं तथा न्यसेत् ।
षडाधारं तथा वक्ष्ये विन्यसेच्चुतुरक्षरम् ।
आद्यन्त प्रणवैर्युक्तं षट् कुक्षिस्तु ततोन्यसेत् ।

अर्थात्—नाभि के नीचे स्थित बत्तीस वर्ण वाली कुण्डलिनी का चार २ अक्षर आदि तथा अन्त प्रणव (ॐ) से युक्त करके क्रमानुसार षडाधार में न्यास करे, पश्चात् षट्कुक्षि में न्यास करें। न्यास-विधि का वर्णन आगे किया गया है।

अब शौचादि से निवृत हो पवित्रता पूर्वक गंगा स्नान करे तीन

बार गंगाजल से आचमन तथा तीन बार स्नान कर जल के मध्य में आदि तथा अन्त में प्रणव से युक्त मायाबीज सहित गायत्री मन्त्र लिखे। प्रणव तथा गायत्री के मध्य तीनों व्याहृतियाँ (भूर्भुवः स्वः लिखे उपरान्त शुद्ध जल से आचमन कर तीन बार प्राणायाम करे। तदनन्तर गायत्री का ध्यान कर देशकाल आदि का संकीर्तनपूर्वक संकल्प करे। पश्चात्—

सूक्ताग्नि मार्जनं कुर्याद्यथाशाखोक्त मार्गतः।
अघमर्षण मंत्रं च स्नानं पञ्चाङ्गपूर्वकम्।
श्रोत्रे नासाक्षि रुद्धवा च सहस्रान्तं जले वपुः।
मग्नं कुर्याज्जिपेन्मन्त्रं कुर्याद्वायुनिरोधनम्।
ततः स्नानत्रयं कुर्याच्छिरो व्याहृति पूर्वकम्।
त्रिवारं त्रिविधं स्नानं पायुमेढं शिरःस्तनम्।
प्रोक्षये शंखमुद्राभिर्व्याहृत्यादि शिरोन्तकम्।
ततस्तीरं समागत्यं गायत्री कवचं पठेत्।

अर्थात्—अपनी शाखा के अनुसार सूक्त पढ़ता हुआ मार्जन करें। और अघमर्षण का मन्त्र पढ़कर पुनः पंचाङ्गपूर्वक स्नान करे।

अघमर्षण मन्त्र इस प्रकार है :—

'ॐ ऋतं च सत्यं चाभोद्धात्तपसोऽध्यजायत्। ततो रात्र्यजायत् ततः समद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत्। अहो रात्राणि विदधद्विश्वस्यमिषतो वशी। सूर्याचन्द्र मसौधाता यथा पूर्वम् कल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्ष मयो स्वः।'

पञ्चाङ्ग मन्त्र इस प्रकार है :—

पञ्चाङ्गानि महादेवि! जपो होमश्च तर्पणम्।
अभिषेकश्च विप्राणा माराधन मपीश्वरिः।

इन मन्त्रों सहित स्नान करने के उपरान्त कान, नाक और आँखों को बन्द कर, जल में प्राणवायु को रोककर एक हजार गायत्री का

जप करे और फिर तीनों व्याहृतियों का उच्चारण करता हुआ शिरः स्नान करे। इस प्रकार तीन बार तीन प्रकार से स्नान करे। प्रत्येक बार स्नान के समय शंख मुद्रा से लिङ्ग गुदा तथा शिर एवम् स्तन-पर्यन्त प्रोक्षण करे, फिर पानी से बाहर निकल किनारे पर खड़े होकर गायत्री कवच का पाठ करे। गायत्री कवच आगे दिया गया है।

शङ्खमुद्रा इस प्रकार वर्णन की गई है—

वामाङ्गुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना।
कृत्वोत्तानं तथा मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत्।
वामाङ्गुल्यस्तथा श्लिष्टा संयुक्ताः सुप्रसारिताः।
दक्षिणाङ्गुष्ठके लग्ना मुद्रा शंखस्य भूतिदा।

कवच पाठ करने के पश्चात् स्वच्छ पवित्र वस्त्र धारण कर चन्दन या भस्म से तिलक धारण करे। फिर निम्न मन्त्र से शिखा में गाँठ लगाए—

'ॐ आपोज्योती रसोऽमृतम्'।

उपरान्त जल में त्रिकोण बनाकर मध्य में ह्रींकार, कोण में 'प्र' पद और दण्ड पर व्याहृति लिखे। प्रणव से जल के बाहर 'ॐ ह्रीं' इसका जप करे, पुनः मार्जन करे। उसी स्थान पर सन्ध्या न करे अन्यथा शूद्र के समान हो जाता है। ऐसा विश्वामित्र कल्प में लिखा है इस प्रकार गायत्री कल्पान्तर्गत आह्निकलक्षणयोग सम्पूर्ण हुआ।

२—आचमन योग

'विश्वामित्र कल्प' में आचमन योग इस प्रकार बताया गया है—

चतुर्विंशतिनामानि तत्तत्स्थानेषु विन्यसेत्।
केशवादीनि विन्यस्य पौराणाचमनं चरेत्।

अर्थात्—प्रथम केशव आदि विष्णु के २४ नामों से उन २ स्थानों पर न्यास करे, फिर शास्त्रीय विधि से आचमन करे।

चतुर्विशति वर्णानां केशवादिरनुक्रमात् ।
देव्याः पादैस्त्रिभिः पीत्वा चाङ्ग लैर्नवभिः स्पृशेत् ।
सप्तव्याहृति गायत्री शिरस्तुर्भद्वयंन्यसेत् ।
श्रुति-स्मृति-विधानेन द्विविधं परिकल्पयेत् ।

अर्थात्—केशवादि २४ अक्षरों से गायत्री के तीन पाद से क्रमशः तीन बार जल पीकर नौ अंगुलियों से न्यास करे। उपरान्त सप्त-व्याहृति युक्त गायत्री मन्त्र से सिर का चार अथवा दो बार न्यास करे फिर श्रुति तथा स्मृतियों के विधान अनुसार दो प्रकार का आचमन करे।

तृतीयं मूल मन्त्रेण क्रमादवर्णानि विन्यसेत् ।
आचमन विधिः प्रोक्तः पौराणः स्मार्त्त आगमः ।
श्रौतं मानसमश्चभ्यं पञ्चभि श्रुतिचोदितैः ।
सन्ध्या प्रारम्भकाले त्वाचमनत्रितयं न्यसेत् ।

अर्थात्—मूल मन्त्र के द्वारा तत्तद् वर्णों से न्यास करे। फिर वेदोक्त आचमन विधि से पुराण, स्मार्त्त, आगम, श्रौत तथा मानस ये पांचों प्रकार के आचमन करे तथा संध्या के प्रारम्भ काल में तो तीन बार आचमन करना चाहिए।

कुरुते सर्वसिद्धिः स्यान्नास्ति चेन्निष्फलं भवेत् ।

अर्थात्—जो सन्ध्या काल में इस प्रकार आदि मध्य अन्त में तीन बार आचमन करते हैं, उनको सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है और ऐसा न करने वालों की सन्ध्या निष्फल होती है।

वेदोक्त आचमन विधि मन्त्र—

श्रौत आचमन मंत्र—ॐ माधवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ केशवाय नमः।

स्मृति आचमन मन्त्र—ॐ नारायणाय नमः, ॐ केशवाय नमः ॐ माधवाय नमः।

पुराण आचमन मन्त्र– ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः ।

न्यास-मंत्र —'ॐ गोविन्दाय नमः' इस मंत्र से आगे, 'ॐ विष्णवे नमः' इस मंत्र से सुषुम्ना में न्यास करे ।

ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ आदित्याय नमः, ॐ शुद्धांशवे नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः, इन मंत्रों से आगे, 'ॐ वामनाय नमः, ॐ श्री धराय नमः इन मंत्रों द्वारा दोनों हाथों में न्यास करे ।

'ॐ हृषीकेशाय नमः, ॐ पद्मनाभायनमः' इन मंत्रों से दोनों पैरों का न्यास करे ।

'ॐ दामोदराय नमः' मंत्र से सिर के मध्य न्यास करे ।

'ॐ संकर्षणाय नमः' मंत्र से नाक के मध्य या अन्त भाग में न्यास करे । फिर 'ॐ वासुदेवाय नमः' से नाक के दाएं नथुने में और 'ॐ प्रद्यु म्नाय नमः' से वाएं नथुने में तथा 'ॐ अनिरुद्धाय नमः' इस मंत्र से दुबारा दाहिने नथुने में न्यास करे । पश्चात् — ॐ पुरुषोत्तमाय नमः से बाएं नेत्र में, और 'ॐ अधोक्षजाय नमः' से दाएं नेत्र में न्यास करे । फिर 'ॐ नारसिंहाय नमः' मंत्र से पुनः बाएं नेत्र में न्यास करे ।

'ॐ अच्युताय नमः'—इस मंत्र से नाभि में न्यास करे ।

'ॐ जनार्दनाय नमः'—इस मंत्र से बाम भुजा पर न्यास करे ।

'ॐ हरये नमः'—इस मंत्र द्वारा दाई भुजा पर न्यास करे ।

इस प्रकार शास्त्रोक्त विधिविधान से आचमन करने से सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है । आचमन करने की विधि बताते हुए लिखा है । —

संहताङ्गुलिना तोयं ब्रह्मतीर्थे पिवेज्जलम् ।
मुक्ताङ्गुष्ठं कनिष्ठायां शेषेणाचमनं भवेत् ।।
गोकर्णाकृति हस्तेन माषमात्रं जल पिवेत् ।
न्यूनातिरिक्त मात्रेण तज्जलं सुरया समम् ।।

अर्थात्—कनिष्ठा अंगुली तथा अंगूठे को पृथक कर शेष सभी अंगुलियों को एक साथ मिलाकर हाथ को गोकर्ण के समान आकृति में बनाकर ब्रह्मतीर्थ से माशाभर जल पीकर आचमन करे। माशा से कम अथवा अधिक जल होने से वह जल सुरा के समान हो जाता है।

इस प्रकार विश्वामित्र कल्पोक्त गायत्री कल्पान्तर्गत आचमन योग सम्पूर्ण हुआ।

३—प्राणायाम योग

गायत्री पुरश्चरण के विधि विधान में ऋषियों ने प्राणायाम को बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया है। प्राणायाम अर्थात् प्राणों का आयाम (विस्तार) करना। प्राणायाम क्रिया के तोन लक्षण होते हैं :—

(१) पूरक—अर्थात् वायु को श्वास द्वारा भीतर खींचना।
(२) कुम्भक—अर्थात् वायु को भीतर ही रोके रखना।
(३) रेचक—अर्थात् वायु को निःश्वास द्वारा बाहर निकालना।

इनमें पूरक तथा रेचक प्राणायाम फलहीन होने से गायत्री पुरश्चरण में निषिद्ध हैं, केवल कुम्भक प्राणायाम ही फलप्रद होने से सफल (अमोघ) माना गया है। लिखा है :—

निषिद्धं रेचकं ज्ञेयं पूरकं च तथैव च।
अमोघं कुम्भकं प्रोक्तं प्राणायामं प्रकीर्तितम्।

प्राणायाम काल के विषय में कहा गया है—कि

अधमे द्वादशी मात्रा मध्यमें द्विगुणा मता।
उत्तमा त्रिगुणा प्रोक्ताः प्राणायामं निरुन्धयेत्।

अर्थात्—बारह मात्रा काल पर्यन्त का प्राणायाम निकृष्ट (अधम), चौबीस मात्रा काल का मध्यम और छत्तीस मात्रा काल का प्राणायाम उत्तम होता है।

गायत्री पुरश्चरण में प्राणायाम किस प्रकार का होना चाहिए, इस विषय में लिखा है :—

प्राणायाम समान विन्दु सहितं विन्दुत्रयं संयुतं ।
सप्तव्याहृति बिन्दु सम्पुट परं वेदादि पादत्रयम् ।
गायत्रीं शिरसा त्रिनाडि सहिता मीड्य द्वये द्वे परे ।
शुद्ध केवल कुम्भकं प्रतिदिनं ध्यायामि तत्त्वं पदम् ।

अर्थात्—प्राणायाम 'भूर्भुवः स्वः' आदि सप्त व्याहृतियों से सम्पुटित इडा, सुषुम्ना और पिंगला इन तीनों नाड़ियों सहित गायत्री मंत्र युक्त, पूरक तथा रेचक दोनों से उत्तम और शुद्ध केवल कुम्भक ही माना जाता है। कुम्भक प्राणायाम द्वारा ही नित्य ध्यान करने से तत्व पद प्राप्त होता है।

भगवान शंकर ने भी कहा है कि इडा पिंगला और सुषुम्ना इन तीन नाड़ियों से रहित प्राणायाम निष्फल होता है।

आगे प्राणायाम की उत्तम, शुद्ध तथा फलप्रद विधि बताते हुए कहा गया है कि :—

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यति स्तथा ।
ततो धर्मं समाश्रित्यं प्राणायाम विदो विदुः ।
नासा पुटं त्वङ्गुलीभिः पञ्चभिर्वायुरोधनम् ।
शनैः शनैस्तु निःशब्दं प्राणायामं निरोधयेत् ।
नासिका पुट मङ्गुल्या निधायैकेन मारुतम् ।
आकृष्य धारयेदग्नि प्राणायामं विचिन्तयेत् ।

अर्थात्—ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ अथवा सन्यासी चारों आश्रमों में से किसी भी आश्रम का साधक प्राणायाम के समय वायु का व्यतिक्रम न होने दे। पांचों अंगुलियों से नासा पुट (नाक के अग्र भाग) को बन्द कर वायु को रोकता हुआ, किसी भी शब्द को न सुनता हुआ प्राणायाम करे। नासिका पुट को एक अंगुली से बन्द कर वायु को खींचकर अग्नि तत्व का ध्यान करना चाहिए। साथ ही कहा है :—

प्राणायामेन ज्ञात्वा च स्नापयेच्चिन्मयं शिवम् ।
तदादौ मानसं कुर्यात्तदां केवल कुम्भकम् ।
पञ्चप्रज्वालकं चैव प्राणायामं समाचरेत् ।
पूजामानस संयुक्तं प्राणायाम फलं भवेत् ।

अर्थात्—प्राणायाम काल में शिव का ध्यान कर ज्ञान रूप शिव का मानस पूजन करना चाहिए और उस समय केवल कुम्भक प्राणायाम ही करना चाहिए । प्राणायाम काल में पंच प्रज्वाल पूर्वक मानस पूजा करने से ही प्राणायाम का फल प्राप्त होता है :—

पञ्च पूजा कैसी होती है, इसे बताते हुए होता है :—

लकारं च हकारं च यकारं च रकारयोः
वकारमिति विख्यातं पञ्च पूजात्मकं जपेत् ।

अर्थात्—लकार, हकार, यकार, रकार तथा चकार रूप वर्णो का ध्यान करना ही पंच पूजा कहलाती है, अस्तु प्राणायाम काल में इन पांच वर्णों की मानस पूजा करनी चाहिए ।

पञ्चपूजा बिना येन प्राणायामं करोति यः ।
तस्य निष्फलितं कर्म विश्वामित्रेण भाषितम् ।

अर्थात्—जो लोग पंच पूजा के बिना ही प्राणायाम करते हैं । उनका प्राणायाम निष्फल हो जाता है, ऐसा विश्वामित्र जी ने कहा है ।

प्राणायाम में शरीरिक स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है कि प्राणायाम में सिद्धासन, कुम्भक प्राणायाम और नेत्रों को बन्द करना ये तीनों श्रेष्ठ स्थितियाँ हैं, अस्तु प्राणायाम के समय नेत्रों को बन्द कर, शरीर को सीधा रखकर सुखासन पर बैठ कर कुम्भक प्राणायाम करना चाहिए ।

गायत्री पुरश्चरण में प्राणायाम का श्रेष्ठ रूप बताते हुए कहा गया है कि—

उत्तमं नवधा चैव मध्यमं ऋतु संख्यया।
अधमं त्रयमित्याहुः प्राणायामो विधीयते

अर्थात् नौ बार गायत्री मंत्र पढ़कर जो प्राणायाम किया जाता है, वह उत्तम, छैः बार गायत्री मंत्र पढ़कर प्राणायाम किया जाय, तो मध्यम और तीन बार गायत्री मंत्र के साथ किया गया प्राणायाम अधम होता है।

सप्त व्याहृतिभिश्चैव प्राणायामं पुटीकृतम्
व्याहृत्यादि शिरोऽन्तं च प्राणायाम त्रयत्रिकम्।

अर्थात् – सप्त व्याहृतियों से सम्पुटित प्राणायाम करे। व्याहृति से आरम्भ कर शिरोन्त सत्यान्त स्वरोम पर्यन्त तीन-२ मंत्र प्रत्येक प्राणायाम (पूरक कुम्भक रेचक) के साथ जपना चाहिए। भूः से आरम्भ कर स्वः पर्यन्त तथा सम्पूर्ण गायत्री मंत्र का तीन बार उच्चारण कर प्राणायाम करना चाहिए।

अस्त्र प्रयोग काले तु प्राणायामं च लम्बकाः।
प्राणायाम बलोपेतं उप संहार कारकः।
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन प्राणायामं समाचरेत्।
सर्व धर्म परित्यागी स महापातकी भवेत्।

अर्थात्—प्राणायाम क्रिया की समाप्ति काल में कुम्भक द्वारा रोके हुए दीर्घ श्वास को अपनी शक्ति के अनुसार धीरे-२ निःसर्ग करता हुआ प्राणायाम करे। अस्तु सभी प्रकार के उपायों से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। किन्तु वर्णाश्रम के सब धर्मों को छोड़ कर जो लोग गायत्री पुरश्चरण का आरम्भ करते हैं, वे महापातकी होते हैं।

उक्त वर्णन सहित विश्वामित्र कल्पोक्त गायत्री कल्पान्तर्गत प्राणायाम योग विषयक विधि विधान सम्पूर्ण हुआ।

४—मार्जन योग

मार्जन विधि के विषय में निर्देश करते हुए विश्वामित्र कल्प में बताया गया है कि—

अष्टाक्षरं नवपदं पदादौ ब्रह्महा भवेत्
ऋचादौ मार्जनं कुर्यात् सोऽश्वमेध फलं लभेत् ।
पादं पादं क्षिपेन्मूर्ध्नि प्रति प्रणव सम्पुटम् ।
निक्षिपेदष्टपादं तु अधो यस्य क्षयाय च ।

अर्थात्—मार्जन के अष्टाक्षरी (आठ अक्षरों वाले) नौ मंत्र हैं

१. आपोहिष्ठा मयो भुवः
२. ता न ऊर्जे दधात् नः
३. महेरणाय चक्षसे
४. यो वः शिवतमो रसः
५. तस्य भाजयते ह नः
६. उशतीरिव मातरः
७. तस्माऽअरंग मामवः
८. यस्य क्षयाय जिन्वथ
९. आपो जन य‍ा च नः

अस्तु गायत्री के प्रत्येक पाद को प्रणव से युक्त कर तीन बार सिर पर जल से अभिषेक करे, फिर प्रथम मन्त्र से नौवें मंत्र तक पढ़कर सिर पर जल छोड़े। ध्यान रहे कि गायत्री पद के आदि से मार्जन नहीं करना चाहिए; क्योंकि ऐसा करने से महर्षि विश्वामित्र के मतानुसार ब्रह्महत्या का दोष लगता है। इसलिए प्रत्येक मंत्र के आदि से मार्जन करना चाहिए। ऐसा करने से साधक को अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

यस्य क्षयाय पादं तु आपः सिन्धुत्वमेव च ।
भूमौ पादौ विनिः क्षिप्य इतरन्मूर्ध्नि विन्यसेत् ।
प्रातः सूर्यश्च मंत्रेण सायमग्निः पिवेज्जलम् ।
आपः पुनन्तु मध्याह्ने क्रमेणाऽऽचमनं न्यसेत् ।

अर्थात्—'यस्य क्षयाय जिन्वथ' और 'आपो जनयथो च नः' इन दो मंत्रों (ऋचाओं) से पृथ्वी पर जल छोड़े, तथा अन्य सात

ऋचाओं से शरीर का मार्जन करना चाहिए। प्रातः काल और सायंकाल क्रमशः 'सूर्यश्च मा मन्युश्च०' और 'अग्निश्च मा मन्युश्च०' मंत्रों द्वारा आचमन करे, तथा मध्यान्ह में' आपः पुनन्तु पृथिवीं' मंत्र द्वारा आचमन करना चाहिए।

आपोहिष्ठेति मंत्रेण नवपादं द्विवारकम्
हिरण्यवर्णश्चत्वारो दधि मंत्र द्विवारकम्।

अर्थात्—'आपोहिष्ठा—' नवपाद वाले मंत्र से दो बार आचमन करे, उपरान्त 'हिरण्यवर्णा—' तथा 'दधि मन्त्र' से दो-२ बार आचमन करे।

पदादौ क्लीं पदं मध्ये पदान्ते मार्जनं भवेत्।
ऋचादौ प्रणवं चोक्त्वा ऋचोऽन्ते मार्जनं भवेत्।

अर्थात्- प्रत्येक मंत्र के आदि में 'क्लीं' पद तथा अन्त में प्रणव का पाठ करते हुए मार्जन करे। प्रत्येक ऋचा के आदि में तथा अन्त में प्रणव (ॐ) का उच्चारण करते हुए मार्जन करना चाहिए।

सत्त्वं रजस्तमो जातं मनो वाक् कायिकादिषु।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्तादि नवैतान्नवभिर्दहेत्।

अर्थात्—नव ऋचा के मंत्र से सात्विक, राजस, तामस, कायिक वाचिक मानसिक तथा जाग्रत, स्वप्न सुषुप्तादि में किए गए नौ प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं।

दधि-द्विमार्जनं चैव हिरण्यादि चतुष्टयम्।
काम क्रोधादि षडवर्ग मार्जयेत् सर्व मार्जनम्।

अर्थात्—'दधि मंत्र' से दो बार और 'हिरण्यादि' मंत्र से चार वार कुल छै बार मार्जन करने से साधक के काम क्रोध आदि षड्वर्ग पापों का नाश हो जाता है।

इस प्रकार गायत्री कल्पान्तर्गत विश्वामित्र कल्पोक्त मार्जन योग सम्पूर्ण हुआ।

५—अर्घ्यदान योग

गायत्री उपासना अथवा दैनिक देव पूजन में ब्राह्मण के लिए सूर्य को अर्घ्यदान नितान्त आवश्यक तथा महत्वपूर्ण है। किन्तु उसका फल तभी है, जब कि वह शास्त्रोक्त विधि विधान पूर्वक किया जाय। अनेक ब्राह्मण उपासना के शास्त्रोक्त विधान न जानने के कारण अशास्त्रीय ढंग से पूजा किया करते हैं और उन्हें उसका उपयुक्त फल प्राप्त न होने के कारण उनकी साधना निष्फल जाती है। आचार्यों, ऋषि मुनियों तथा प्राचीन विद्वानों ने गहन अध्ययन के पश्चात् ही शास्त्रीय उपासना विधानों की रचना की है, जिनके पीछे गूढ़ रहस्य उनकी वर्षों की साधना और अनुभव तथा गहन अध्यन, मनन व चिन्तन छुपा हुआ है। अस्तु हमें हठधर्मिता से काम न लेकर अथवा अज्ञानतावश मनमाने ढंग से साधना न करके, उपयुक्त शास्त्रीय विधियों का सदैव पालन करना चाहिए। अन्यथा लाभ प्राप्त होने के बजाय हानि की ही सम्भावना रहती है।

अनेक व्यक्ति तर्क करते हैं, कि उपासना में कर्मकाण्ड या विधि-विधान की क्या आवश्यकता? उपासना तो मन की श्रद्धा-भावना की अभिव्यक्ति है—ठीक है कि श्रद्धा के बिना उपासना एक ढोंग मात्र है, किन्तु उपासना के विधि विधान और कर्मकाण्ड भी तो आध्यात्मिक-शक्ति के उपयोग के नियम हैं। उन नियमों का पालन किए बिना हम उस शक्ति का पूरा २ और ठीक २ प्रयोग नहीं कर सकते। जिस प्रकार विद्युत-शक्ति के विषय में ज्ञान न होने पर यदि कोई अनाड़ी गलत ढंग से उसे व्यवहार में लाता है, तो या तो उस शक्ति से समुचित लाभ नहीं उठा पाता अथवा तार छू जाने से उसका प्राणान्त हो जाता है। अस्तु, मैं तो यही निवेदन करूंगा, कि आध्यात्मिक शक्ति का उचित सदुपयोग करने तथा उसका पूरा २ लाभ प्राप्त करने के लिए प्राचीन मनीषियों के दीर्घ अनुभव पर आधारित उनके द्वारा बताए हुए नियमों का पालन करें।

'विश्वामित्र कल्प' में अर्घ्यदान का जो विधि विधान बताया गया है, वह यहाँ निष्ठावान साधकों तथा भक्त जनों के लाभार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है।

विश्वामित्र कल्प में अर्घ्यदान के विषय में लिखा है—

एकं मध्याह्न काले च प्रायश्चित्तं द्वितीयकम्।
अर्घ्यद्वयं तु मध्याह्ने तथा मुक्तं महामुने॥
अर्घ्यत्रयं प्रयोगार्थं प्रायश्चित्तं चतुर्थकम्।
सायं-प्रात-द्विजादीना मेव मेव विधिःक्रमात्॥

अर्थात्—मध्याह्न काल में एक अर्घ्य देकर, दूसरा प्रायश्चित्त-संज्ञक अर्घ्य देना चाहिए। इसी प्रकार सायंकाल में भी तीन अर्घ्य उपासना संज्ञक और चौथा अर्घ्य प्रायश्चित्त संज्ञक देना चाहिए। अर्थात् ब्राह्मणों को प्रातःकाल में तीन अर्घ्य, मध्यान्ह में दो अर्घ्य और सायंकाल में चार अर्घ्य देना चाहिए, जिनमें मध्यान्ह व सायंकाल का १-१ अन्तिम अर्घ्य प्रायश्चित्त संज्ञक हो।

एकं शस्त्रास्त्र नाशाय एकं हनन नाशने।
असुराणां बधायाऽर्घ्यं प्रायश्चित्तार्थं संयुतम्।

अर्थात्—एक अर्घ्य सूर्य के शत्रु (राहु) के शस्त्रास्त्र नष्ट करने के लिए, दूसरे उसके विनाश के लिए, तीसरा अर्घ्य असुरों के वध के लिए देना चाहिए। तीसरे अर्घ्य से सूर्य पर आई हुई राहु की विपत्ति दूर होती है। चौथा प्रायश्चित्त के लिए अर्घ्य दें।

ब्रह्मास्त्रं नाभिजानाति स विप्रः शूद्र एव हि।
तस्य कर्मादिकं जातं धर्माद्यां निष्फलं भवेत्।

अर्थात्—जो ब्राह्मण ब्रह्मास्त्र को नहीं जानता, वह शूद्र के तुल्य है, उसका किया हुआ समस्त धर्म-कर्म निष्फल जाता है।

ब्रह्मास्त्रं ब्रह्म दण्डं च ब्रह्मशीर्षं च संयुतम्।
अर्घ्यत्रयं प्रयोगार्थं मेव मेव मुदाहृतम्।

अर्थात्—तीन अर्घ्यों में से प्रथम अर्घ्य ब्रह्मास्त्र, दूसरा अर्घ्य ब्रह्म दण्ड तथा तीसरे अर्घ्य का नाम ब्रह्मशीर्ष है, ऐसा मनीषियों ने कहा है।

प्रथम अर्घ्य में—'इदं ब्रह्मास्त्र' कहकर हाथ में जल लें।

दूसरे अर्घ्य में—'इदं ब्रह्मदण्डं' कहकर हाथ में जल लें।

और तीसरे अर्घ्य में—'इदं ब्रह्मशीर्षं' कहकर हाथ में जल लें। उपरान्त उस जल को गायत्री मन्त्र से अभिमंत्रित कर तीन बार असुरों के वध के लिए अर्घ्यदान करना चाहिए।

प्रथम अर्घ्य अस्त्र दण्ड रूप सिर से स्पर्श कर एक अंजुलि जल छोड़ना चाहिए। उससे सूर्य के वाहनों की रक्षा और असुरों का विनाश होता है। असुरों के बध के लिए प्रायश्चित्त स्वरूप द्वितीय अर्घ्य अपने दाएं ओर पृथ्वी पर छोड़ना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य सब प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है।

दद्यात् केवल गायत्र्या मूढ़ोह्यर्घ्यं तु यो द्विजः।
स बिन्दु-ब्राह्मणो नामः सर्वं धर्मं बहिष्कृतः।

अर्थात्—जो मूढ़ ब्राह्मण केवल गायत्री मन्त्र से अर्घ्य देता है, वह 'बिन्दु' वर्ग का ब्राह्मण है और वह किसी भी धर्म का अधिकारी नहीं होता है।

बीजमंत्रेण गायत्र्याः प्रणवेत्यभिधीयते।
देहस्तु दण्ड इत्युक्तः संज्ञाकवच मेव च।
सर्वाङ्गानि पदौ मंत्रं सर्वं मंत्रे त्वयं विधिः॥

अर्थात्—गाययी का बीज मन्त्र ही प्रणव कहा जाता है। देह दण्ड हैं, गायत्री कवच उसकी संज्ञा है। पद और मन्त्र सभी अंग हैं सब मन्त्रों की यही विधि है।

अस्त्राष्टवारतः प्रोक्ता गायत्री व्याप्त उच्यते।
एतत् षणमन्त्रकं ज्ञात्वा अर्घ्यंदद्याद्धि नामतः।

अर्थात्—गायत्री मन्त्र में व्याप्त आठ बार अस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए। इन छः मन्त्रों को जान कर 'ॐ सूर्यायनमः' इस नाम से अर्ध्यदान करना चाहिए।

असावादित्य मन्त्रेण ब्रह्मेत्यादि प्रदक्षिणम्।
आपोभिरयुतं कार्यं सर्वाघौघ-निकृन्तनम्।
हंस हंसेति मंत्रस्य बृहत्यन्तं समुच्चरेन्।
शिरसा दण्डमस्त्रं च सम्मुखे इव निक्षिपेत्।

अर्थात्—'असौ आदित्यो ब्रह्मा' इस मन्त्र को पढ़कर तथा गायत्री मन्त्र सहित जल से दस हजार अर्ध्यदान पूर्ण करने वाले मनुष्य के सभी प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं।

'हंस हंस बृहत्यन्तं' इस मन्त्रोच्चार के साथ सिर से स्पर्श कर सम्मुख में ही अर्ध्यदान करना चाहिए। यही 'अस्त्र दण्ड' कहा गया है।

तर्ज्जन्यङ्गुष्ठयोगेन राक्षसी मुद्रिका भवेत्।
राक्षसी मुद्रिका दत्तं तत्तोयं रुधिरं भवेत्।
निक्षिपेद्यादि मूढ़ात्मा रौरवं नरकं व्रजेत्।
अङ्गुष्ठच्छाया पतितं देवता मुद्रिका भवेत्।
देवता मुद्रिका दत्ते सर्वैः पापैः प्रमुच्यते।
एवं विज्ञान मान्त्रेण सद्यः सिद्धिर्भयिष्यति।

अर्थात् —तर्जनी तथा अंगूठे को मिलाकर राक्षसी मुद्रा होती है तथा राक्षसी मुद्रा से दिया हुआ जल रुधिर के समान होता है जो मूढ़मति प्राणी राक्षसी मुद्रा से अर्ध्यदान करता है, वह घोर नरक में पड़ता है तथा जिस अर्ध्य में अंगूठे की छाया पड़ती है, वह देव मुद्रा कही जाती है। देव मुद्रा द्वारा दिए गए अर्ध्य से मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है। तथा इस देव मुद्रा को जान लेने मात्र से उसे शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त हो जाती है।

अर्घ्यदान के विषय में यहाँ स्थानाभाव के कारण मुख्य २ शास्त्रीय सूक्त ही प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिन का पालन करना विशेष रूप से आवश्यक है, वैसे धार्मिक ग्रन्थों यथा शास्त्रों पुराणों, वेदों में बहुत विस्तृत नियम और उनके फलादि का वर्णन मिलता है।

इस प्रकार विश्वामित्र कल्पोक्त अर्घ्यदान योग का विषय सम्पूर्ण हुआ।

६—ध्यान आवाहनादि योगः

ध्यानं मुद्रां नमस्कारं गुरुमंत्रं तथैव च।
संयोगमात्मसिद्धि च पञ्चधैव विभावयेत्।

अर्थात्—साधक को ध्यान, मुद्रा, नमस्कार, गुरुमंत्र और अपनी सिद्धि के साथ संयोग, इन पाँच बातों का मुख्य रूप से ध्यान रखना चाहिए।

न्यास—स्वशुद्धिं भूतशुद्धिं च कृत्वा शोषणदाहनम्।
प्लवने च ततः कुर्यात् प्रणवादि त्रयं क्षरैः।
प्राणायाम समायुक्तं अन्तर्बाह्यं समातृकात्।
देहे न्यासं ततः कुर्यात् कराङ्ग न्यास समाचरेत्।

अर्थात्—सर्व प्रथम आत्मशुद्धि करे, फिर भूतशुद्धि करे, पश्चात् प्रणव सहित महाव्याहृति पढ़कर प्लवन करे। फिर प्राणायाम करके अन्तः तथा बाह्य शुद्धि करे, उपरान्त अंगन्यास व करन्यास करे।

ऋषिं न्यसेत् पूर्व मुखे, तथाश्च्छन्द उदीरितम्।
देवता हृदि विन्यस्य गुह्ये बीजमिति स्मृतम्।
शक्तिं विन्यस्य चाधारे पादयोः कीलकं न्यसेत्।
एवं न्यास विधिं कृत्वा ष्यादिन्यास ऋपूर्वकम्।

अर्थात्—मुख में छन्द तथा सप्त ऋषियों का न्यास करे, हृदय में देवताओं का और गुह्य स्थान में बीज का न्यास करे। आधार में शक्ति का तथा पैर में कीलक पढ़कर न्यास करे। इस प्रकार ऋष्यादि का न्यास करे।

आवाहनम्–

आवाहनादि भेदं च दश-मुद्राः प्रदर्शयेत् ।
आयातु वरदां देवी अङ्ग-प्रत्यङ्ग सङ्गमे ।
प्रातर्गायत्री सावित्री मध्याह्ने च सरस्वती ।
एवमावाहनं ज्ञात्वा सन्ध्यायां जपमाचरेत् ।

अर्थात्–आह्वानादि करते हुए दसों मुद्राओं को प्रदर्शित करे, फिर प्रातःकाल अङ्ग-प्रत्यङ्ग सहित वरदा गायत्री देवी का, मध्यान्ह में सावित्री का तथा सायंकाल में सरस्वती रूप का ध्यान करते हुए आवाहन करे ।

हस्ताभ्यामनुलोमेन आवाहन मनाहुते ।
नामत्रयमृषिश्छन्दः क्रमेणाऽऽवाहनं भवेत् ।

अर्थात्–दोनों हाथों को सीधा करके गायत्री का आवाहन करना चाहिए । आवाहन में क्रमशः ऋषि, देवता तथा छन्द का उच्चारण करते हुए आवाहन करना चाहिए ।

मूलाधारेण गायत्री सावित्री मणिपूरके ।
द्वादशारे सरस्वती छन्दो नाडीत्रयं तथा ।
ऋषिर्मूर्ध्नि सुविज्ञेयं आवाहन मनुक्रमात् ।
आवाहनं यथोक्तं च यथोक्तं तु विसर्जनम् ।

अर्थात्—मूलाधार चक्र में गायत्री का, मणिपूरक चक्र में सावित्री का तथा द्वादशार चक्र में सरस्वती का निवास होता है । छन्दों का निवास इडा पिंगला तथा सुषुम्ना तीनों नाड़ियों में होता है और ऋषियों का निवास मूर्धा (शिर) में होता है । इस प्रकार ध्यान करते हुए देवता, छन्द और ऋषि का क्रमशः आवाहन तथा विसर्जन करें ।

चतुर्विशति गायत्रीं प्रातः स्नात्वा जपेन्मनुम् ।
प्राणायामं ततः कुर्यान्न्यास ध्यानं समाचरेत् ।

करन्यासं ततः कुर्यादङ्गन्यासं तथैव च।
चतुश्चतुश्चतुष्कं च चतुश्चतुश्चतुश्चतुः।

अर्थात्—प्रातःकाल स्नान व प्र णायाम करने के उपरान्त अंग-न्यास तथा ध्यान करें और फिर २४ अक्षरों वाले गायत्री मन्त्र का जप करें। इसी प्रकार चार बार प्राणायाम, चार बार ध्यान, चार बार अंगन्यास तथा चार बार कर न्यास करना चाहिए, तदुपरान्त जप करना चाहिए।

एवं जानीहि विप्रेन्द्र ! जपं ध्यानम समाचरेत्।
आवाहनं ततो न्यासं विना जाप्यंतु निष्फलम्।

अर्थात्—हे विप्रेन्द्र ! इस प्रकार शास्त्रोक्त विधि जान कर तदनुसार ही गायत्री जप एवम् ध्यान करना चाहिए। आवाहन तथा ध्यान के बिना गायत्री का जप निष्फल हो जाता है।

षड्ङ्ग विन्यसेद् देवीं गायत्रीं वेदमातरम्।
व्याहृतित्रयमुच्चार्य अनुलोमं च विभ्रतः।

अर्थात्—वेदमाता गायत्री का प्रथम तीन व्याहृतियों के उच्चारण सहित षड्ङ्ग न्यास करें। गायत्री में (ॐ) प्रणव का संयोग होना चाहिए। उपरान्त करन्यास करे।

ध्यानम्—ओमित्येकाक्षरं चोक्तं न्यास-ध्यान-पुरःसरम्।
यथा शक्ति जपं कुर्यान्नित्यकर्म समाचरेत्।

अर्थात्—गायत्री का न्यास तथा ध्यान करके (ॐ) इस अक्षर का जप करना चाहिए।

गायत्री शक्ति ध्यानम्—

वणस्त्रि कुण्डिका हस्तां शुद्ध निर्मल ज्योतिषीम्।
सर्व तत्त्वमयीं वन्दे गायत्रीं वेदमातरम्।

अर्थात्—वर्णास्त्र युक्त कुण्डिका सहित हाथों वाली, शुद्ध निर्मल ज्योति स्वरूपिणी, सब तत्त्वों से युक्त वेदमाता गायत्री की वन्दना करता हूं।

मुक्ता विद्रुम हेमनील धवलच्छायैः मुखैः स्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दुनिबद्ध रत्न मुकुटां तत्त्वार्थ वर्णात्मिकाम् ।।
गायत्रीं वरदा भयांकुश कुशां शूलं कपालं तथा ।
शंख चक्र मथारविन्द युगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ।।

अर्थात्--मोती, विद्रुम, सुवर्ण, नील तथा श्वेत आभा से युक्त तीन नेत्र वाले मुख युक्त चन्द्र जटित रत्नों के मुकुट को धारण करने वाली, तत्त्वार्थ प्रकाश करने वाली, अभय का वरदान प्रदान करने वाली, त्रिशूल, कपाल, शंख, तथा चक्र और कमल हाथों में धारण करने वाली भगवती गायत्री का मैं ध्यान करता हूं।

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्य कोटि समप्रभाम् ।
सावित्रीं ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटि सुशीतलाम् ।।
त्रिनेत्रा सितबक्त्रां च मुक्ता हार विराजिताम् ।
वराभयांकुशकुशां हेम पात्राक्षमालिकाम् ।
शंख चक्राब्ज युगलं कराभ्यां दधतींपराम् ।
सितपंङ्कज संस्थां च हंसारूढ़ां सुखस्मिताम् ।
ध्यात्वैवं मानसाम्भोजे गायत्री कवचं पठेत् ।

अर्थात्--पाँच मुख, दश भुजाओं वाली, करोड़ों सूर्यो के समान प्रभा वाली, सावित्री, ब्रह्म वरदा, करोड़ों चन्द्र के समान शीतल, तीन नेत्रों वाली, शीतल वाणी वाली, मोतियों का हार धारण करने वाली, वर, अभय, अंकुश, हेमपात्र, अक्षमाला, शंख चक्र हाथों में धारण करने वाली, श्वेत कमल पर स्थित, हंसारूढ़, मन्द २ मुस्कराती हुई गायत्री का हृदय कमल पर ध्यान करके तब गायत्री कवच का पाठ करना चाहिए।

वर्णानां ध्यानम्--

तत्कारं चम्पकापीतं ब्रह्म विष्णु शिवात्मकम् ।
शतपत्रासनारूढं ध्यायेत् सुस्थान संस्थितम् ।

—चम्पक पुष्प के समान पीतवर्ण, ब्रह्मा विष्णु शिवात्मक, कमल पुष्प पर आरूढ़, सुन्दर स्थान पर स्थित 'तत्' कार का ध्यान करें।

साकारं चिन्तये द्देवमलसी पुष्प सन्निभम्।
पद्म मध्यस्थितं सौम्यमुपपातक संस्थिम्।

—अलसी के पुष्प जैसी आभा वाले, पद्म के मध्यस्थित, सौम्य तथा उपपातकों के विनाशक 'स' कार का ध्यान करें।

विकारं कपिलं नित्यं कमलासनं संस्थितम्।
ध्यायेच्छान्तो द्विज श्रेष्ठो महापातक नाशनं।

—कमलासन पर स्थित विद्रुम के समान महापाप नाशक 'वि' कार का द्विजश्रेष्ठ शान्त चित्त से ध्यान करें।

तुकारं चिन्तये त्प्राज्ञ इन्द्रनील समप्रभम्।
निर्दहेतु सर्वं पापानि ग्रह रोग समुद्भवम्।

—नील इन्द्रमणि के समान प्रभा वाले, ग्रह रोगादि से उत्पन्न समस्त पापों का दहन करने वाले 'तु' कार का विद्वानजन ध्यान करें।

वकारं दह्नि दीप्ताभं चिन्तयेच्च विचक्षणः।
भ्रूण हत्या कृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति।

—अग्नि के समान दीप्ति वाले, भ्रूणहत्या के पाप को तत्क्षण नष्ट करने वाले 'व' कार का ध्यान करें।

रेकारं विमलं शुद्धं स्फटिकं सन्निभम्।
पापं नश्यति नत्क्षिप्रं गम्यागमनोद्भवम्।

—शुद्ध स्फटिक के समान निर्मल 'रे' का ध्यान करें, जिसके ध्यान मात्र से अगम्य स्थान में जाने से लगा पाप नष्ट हो जाता है।

णिकारं चिन्तयेद्योगी शुद्ध स्फटिक सन्निभम।
अभक्ष्य भक्षणं पापं तत्क्षणा देव नम्यति।

—शुद्ध स्फटिक के सदृश 'णि' कार का योगी पुरुष ध्यान करें,

क्योंकि इसका ध्यान करने से अभक्ष्य वस्तु खा लेने से लगा पाप शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

यकारं तारकावर्ण मिन्दु शेष विभूपितम्।
योगीनां वरदं ध्यायेत् ब्रह्म-हत्या विनाशनम्।

—तारों के वर्ण वाले इन्दु से विभूषित 'य' कार का ध्यान करें। इस महान वर देने वाले योगी के ध्यान करने से ब्रह्म हत्या का पाप नष्ट हो जाता है।

भकारं कृष्णवर्णा तु नील मेघं समप्रभम्।
ध्यानात्वा पुरुष हत्यादि पापं नाशयति द्विजः।

—नील मेघ के समान प्रभा वाले कृष्ण वर्ण भ' कार का ध्यान करे, जो कि द्विज पुरुष हत्यादि पापों का नाशक है।

गौ कारं रक्त वर्णं च कमलासन संस्थितम्।
गो हत्यादि कृतं पापं ध्यात्वा नश्यति तत्क्षणाम्।

—कमलासन पर अवस्थित रक्तवर्ण आभा वाले 'गो' कार का ध्यान करें, जो कि गौहत्या आदि महापातकों को नष्ट करने वाला है।

देकारं रक्त संकाशं कमलासन संस्थितम्
चिन्तयेत्सततं योगीं स्त्री हत्या गहनं परम्।

—रक्त वर्ण वाले कमलासन पर स्थित 'दे' कार का ध्यान धारण करने से स्त्री हत्या का पाप नष्ट हो जाता है, अस्तु योगी पुरुष निरन्तर उसका चिन्तन करें।

वकारं चिन्तयेच्छुद्धं जाती पुष्पं समप्रभम्।
गुरु हत्या कृतं पापं ध्यानात् नश्यति तत्क्षणात्।

—जाती पुष्प के समान आभा वाले शुद्ध 'व' कार का ध्यान करें, जिसका ध्यान करने से गुरु हत्या का पाप नष्ट होता है।

स्यकारं तं तथा भानुं सुवर्ण सदृशं प्रभम्।
मनसा चिन्तितं पापं ध्यात्वा दूरमपाहरेत्।

—सुवर्ण के समान आभा वाले 'स्य' कार को मन से चिन्तन करे, जो कि समस्त पापों को नष्ट करता है।

धीकारं चिन्तयेच्छुक्लं कुन्द पुष्पं समप्रभम्।
पितृ मातृवधात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः।

—कुन्द पुष्प के समान आभा वाले शुक्लवर्ण 'धी' कार के चिन्तन करने से माता-पिता के वध करने से लगे हुए पाप नष्ट हो जाते हैं।

मकारं पद्म रागाभं चिन्तयेद्दीप्त तेजसम्।
पूर्व जन्माजितं पापं तत्क्षणादेव नश्यति।

—पद्म के समान आभा वाले दीप्त तेज के समान 'म' कार का ध्यान करने से पूर्व जन्म के पापों का अविलम्ब नाश होता है।

हिकारं शंख वर्णन्तु पूर्ण चन्द्र समप्रभम्।
अशेषं पाप दहनं ध्यायेन्नित्यं विचक्षणः।

—पूर्ण चन्द्र के समान कान्ति वाले, शंख के से वर्ण वाले सम्पूर्ण पापों को नाश करने वाले हि' कार का ध्यान करें।

धिकारं पाण्डवं ध्यायेत पद्म स्योपरि संस्थितम्।
प्रतिग्रह कृतं पापं स्मरणादेव नश्यतिः।

—पद्म पर अवस्थित पाण्डु वर्ण 'धि' कार ध्यान करना चाहिए। जिसके स्मरण मात्र से प्रतिग्रह पाप नष्ट हो जाते हैं।

यो कार रक्तवर्ण तु इन्द्र गोप समप्रभम्।
ध्यात्वा प्राणिवधं पापं निर्दहेन्मुनि पुङ्गवः।

—रक्त वर्ण गोप के समान प्रभावाले 'यो' कार का ध्यान करे, जिसके ध्यान मात्र से श्रेष्ठ मुनि लोग प्राणीवध के पाप से मुक्त हो जाते हैं।

द्वितीयश्चैव यः प्रोक्तो यो कारो रक्त सन्निभः।
निर्दहेत् पापानि पुनः पापं न लिप्यते।

—द्वितीय 'यो' कार, जो कि रक्त वर्ण आभा वाला है, वह ध्यान करने पर सब पापों को विनष्ट कर देता है, तथा पुनः पापों में प्रलिप्त नहीं होना पड़ता।

नः कारन्तु मुखं पूर्वमादित्योदय सन्निभम्।
सकृद ध्यात्वा द्विजः श्रेष्ठः स गच्छेत्परमं पदम्।

—उदय होते हुए सूर्य की आभा वाले 'नः कार का ध्यान पूर्व की ओर मुख करके करने से श्रेष्ठ द्विज परम पद को प्राप्त होता है।

नीलोत्पलं दलं श्यामं 'प्र' कारं दक्षिणायनम्।
सकृद् ध्यात्वा द्विजः श्रेष्ठः संगच्छदीश्वरं पदम्।

—नील कमल के समान श्याम वर्ण 'प्र' कार का ध्यान करें, जो कि श्रेष्ठ ब्राह्मणों को ईश्वर पद प्राप्त कराने वाला है।

सौम्यं गोरोचनापीतं 'चो' कारं चतुराननम्।
सुकृद् ध्यात्वा द्विजः श्रेष्ठः संगच्छेद्वैष्णव पदम्।

—सौम्य गोरोचन जैसे पीले वर्ण वाले 'चो' कार को एक बार ध्यान कर श्रेष्ठ ब्राह्मण विष्णु पद को प्राप्त होता है।

शुक्ल वरणेन्दु सङ्काशं 'द' कारं पश्चिमाननम्।
सकृद् ध्यात्वा द्विजः श्रेष्ठः संगच्छेद् ब्रह्मनः पदम्।

शुक्ल चन्द्र के समान पश्चिम मुखी 'द' कार को ध्यान करने से श्रेष्ठ द्विज ब्रह्म पद को प्राप्त होते हैं।

यात्कारं तु शिवं प्रोक्तं चतुर्वदनं समप्रभम्।
प्रत्यक्ष फलदा ब्रह्म विष्णु रुद्रं इति स्मृतिः।

—'यात्' कार को तो शिव अर्थात् कल्याण कारी कहा है। यह ब्रह्मा के समान आभा वाला तथा प्रत्यक्ष शुभ फल देने वाला है।

न भवेत्सूतकं तस्य मृतैकश्च न विद्यते ।
यस्त्वेकं न विजानाति गायत्री च तथा विधाम् ।

—जो इस प्रकार गायत्री को सविधि जपना जानता है, उसको न तो कभी सूतक ही लगता है और न कभी मृत्यु ही होती है ।

त्रिकाल जपम्—

प्रातः केवल गायत्रीं मध्याह्ने व्याहृतायुता ।
सायाह्ने तुर्यया युक्ता नित्य जापम् समाचरेत् ।
पादादौ रेफ संयुक्ता गायत्रीं जप लक्षणम् ।

अर्थात्—प्रातः कालः केवल गायत्री मंत्र का, दोपहर में व्याहृति से युक्त तथा सायंकाल में तुरीय (प्रणव) से युक्त गायत्री का जप करना चाहिए । प्रत्येक पाद के आदि में 'ॐ रम्' इस बीज मंत्र का उच्चारण कर जप करना चाहिए ।

पादत्रयं समुच्चार्यं प्रतिलोमंततश्चरेत् ।
रेफ बिन्दु तदाद्यन्तौ गायत्रीं जपमाचरेत् ।

अर्थात्—गायत्री के तीन पाद का उच्चारण कर पुनः उसे उल्टा उच्चारण करते हुए आदि व अन्त में 'ॐ रम्' के उच्चारण सहित जप करना चाहिए ।

गायत्रीं पूर्व मुच्चार्य तुर्यान्त्यादि विलोमतः ।
सायं संध्या जपेदेवं साधकः सर्व सिद्धये ।

अर्थात्—सायंकाल में गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर फिर उसे उल्टे रूप में उच्चारण करने से साधक के सभी कार्य सिद्ध होते हैं ।

तकारादि यकारान्तमनुलोमं विलोमतः ।
तुर्यपादं विना मंत्रं प्रातः सन्ध्यामथाचरेत् ।
भकारादि-हिकारान्तं मध्य पादमिति स्मृतम् ।
तार्तीयं तु प्रयोक्तव्यं तदर्ध्ये प्रथमं भवेत् ।

धकारादि-यकारान्तं तृतीयं पाद मुच्चरेत्।
प्रथमं च द्वितीयं च त्रिविधि जपलक्षणम्।

कालत्रयं त्रिधा जाप्यं त्रिकालं त्रिविधं स्मृतम्।
अनुलोम-विलोमाभ्यां चिरं सिद्धिम वाप्नुयात्।

चतुर्विंशति - वर्णानामनुलोमं जपेदपि।
पूर्ण जाप्यफलं नास्ति अर्द्ध जाप्यफलं लभेत्।

अर्थात्—'तत्' से आरम्भ कर 'यात्' तक गायत्री का उच्चारण अनुलोम उच्चारण है। प्रचोदयात् से आरम्भ कर 'तत्' पर्यन्त विलोम उच्चारण है। प्रातः काल में 'योनः प्रचोदयात्' इस गायत्री के चतुर्थ पाद के विना ही जप करना चाहिए। 'भर्गो' के 'भ' कार से आरम्भ कर धीमहि के 'हि' पर्यन्त गायत्री का मध्यपाद कहलाता है, परन्तु अर्घ्यदान करते समय तीनों पाद का उच्चारण करना चाहिए। 'धियो' के 'ध' कार से यात् के 'य' पर्यन्त तृतीयपाद कहलाता है। इस प्रकार प्रथम, द्वितीय तृतीय पाद का उच्चारण पूर्वक गायत्री का जप करना चाहिए।

इस प्रकार तीनों काल में तीनों पाद सहित गायत्री का जप करना चाहिए। त्रिकाल प्रातः मध्यान्ह व सायं तीन समय का माना जाता है। अस्तु उपर्युक्त विधान अनुसार अनुलोम तथा विलोम गायत्री का जप करने से शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है।

चौबीस अक्षरों वाली गायत्री का अनुलोम जप करने मात्र से अर्थात् विलोम जप न करने से जप का पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता, उससे केवल आधा फल ही प्राप्त होता है।

जप पारायणं कुर्यात् त्रिपदा सम्पुटं नव
एवं ज्ञात्वा जपेन्नित्यमेकः कोटिगुणं भवेत्।

कालत्रयं यथोक्तं च जाप्य पारायणम् परम्
अनन्त फल माप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ।

अर्थात्—त्रिपदा गायत्री को नौ बार सम्पुटित कर गायत्री का पारायण करना चाहिए। इस प्रकार से किया गया एक जप भी करोड़ों गुणा फल देने वाला होता है। तीनों काल उक्त विधि से गायत्री जप का पारायण करने से अनन्त फल प्राप्त होता है, यह नितान्त सत्य है, असंदिग्ध है।

ओङ्कारः पुरुषश्चैव गायत्रीं सुन्दरी तथा ।
तयोः संयोग काले तु वस्त्र माच्छाय गण्यते ।
वरेण्यं विरलं चोक्त्वा जप काले विशेषतः
पारायणेषु युक्तं स्यादन्यथा त्रिफलं भवेत् ।

अर्थात्—ओंकार पुरुष है, गायत्री उसकी सुन्दरी हैं, अस्तु उन दोनों के संयोग काल में अर्थात् प्रणव सहित गायत्री जप करते समय जप को वस्त्र में ढककर गणना करनी चाहिए। जपकाल में 'वरेण्यं विरलं' ऐसा कह कर जप का पारायण करना चाहिए, अन्यथा गायत्री जप निष्फल हो जाता है।

इति श्री गायत्री कल्प सम्पूर्णम् ।

गायत्री शापोद्धारम् (गायत्री पटल)

पुराणादि ग्रन्थों में लिखा है, कि एक बार ब्रह्मा, वशिष्ठ और विश्वामित्र ने गायत्री को शाप दे दिया था, उस शाप से गायत्री की शक्ति क्षीण हो गई थी। ब्रह्मशक्ति के इस प्रकार शाप द्वारा क्षीण हो जाने पर देवताओं में हाहाकर मच गया। तब उन देव-ऋषियों ने गायत्री शक्ति को शाप मुक्त करने के लिए एक शाप विमोचन मन्त्र दिया और कहा कि इस शाप विमोचन मंत्र द्वारा शापमुक्त करके जो गायत्री जप करेगा, उसकी गायत्री शक्तिशालिनी होगी। अस्तु शास्त्रों में प्रथम गायत्री का शापोद्धार करने का विधान है।

ब्रह्म शापोद्धार—

विनियोग :—ओ३म् अस्य गायत्री ब्रह्मशाप विमोचन मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः वरुणो देवता ब्रह्म शाप विमोचनार्थे जपे विनियोगः।

अर्थात्—इस गायत्री शाप विमोचन मंत्र के ब्रह्मा ऋषि गायत्री छन्द और वरुण देवता हैं, तथा ब्रह्म शाप के मोचन के लिए जप में इनका विनियोग है।

(दाहिने हाथ में जल लेकर उक्त मंत्र पढ़ कर भूमि पर छिड़क दें)

शाप विमोचन मन्त्रः—

ओ३म् यद् ब्रह्मेति ब्रह्मविदो विदुस्त्वां पश्यन्ति धीराः

सुमनसो त्वं गायत्री ब्रह्मशापान्मुक्ता भव।

हे गायत्री ! ब्रह्मवेत्ता जिसको ब्रह्मनाम से पुकारते हैं, धीर पुरुष अपने अन्तःकरण में आपको उसी रूप से देखते हैं, आप ब्रह्मशाप से मुक्त होवें।

वशिष्ठ शापोद्धार—

विनियोग—ॐ अस्य गायत्री वशिष्ठ शाप विमोचन मन्त्रस्य वशिष्ठ ऋषिः अनुष्टुप छन्दो, वशिष्ठ देवता, वशिष्ठ शाप विमोचने विनियोगः ।

गायत्री के वशिष्ठ शाप विमोचन मन्त्र के वशिष्ठ ऋषि, अनुष्टुप छन्द और वशिष्ठ देवता हैं तथा वशिष्ठ शाप विमोचन में इनका विनियोग है ।

(दाएं हाथ में जल लेकर उक्त मंत्र पढ़कर पृथ्वी पर छोड़ दें)

शाप विमोचन मन्त्र—

ॐ अर्क ज्योतिर्हं ब्रह्मा ब्रह्मज्योतिर्हम् शिवः ।
शिव ज्योतिर्हं विष्णु विष्णु ज्योतिः शिवः परः ।
गायत्रीं त्वं वशिष्ठ शापाद्विमुक्ता भव ।

अर्थात्—हे सूर्य की ज्योति ब्रह्म, ब्रह्म की ज्योति शिव, शिव की ज्योति विष्णू और विष्णु की ज्योति शिव गायत्री ! आप वशिष्ठ के शाप से मुक्त होवें ।

विश्वामित्र शापोद्धार—

विनियोगः—ओ३म् अस्य गायत्री विश्वामित्र शापविमोचन मन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, अनुष्टुप छन्दः आद्या देवता, विश्वामित्र शाप विमोचनार्थे जपे विनियोगः ।

—गायत्री के विश्वामित्र शाप विमोचन मन्त्र के विश्वामित्र ऋषि, अनुष्टुप छन्द और आद्या देवता हैं और विश्वामित्र के शाप विमोचन के लिए इनका विनियोग है ।

(दाएं हाथ में जल लेकर उक्त मंत्र पढ़कर भूमि पर छिड़कें)

शापोद्धार मन्त्र—

ॐ अहो देवि महादेवि दिव्ये सन्ध्ये च सरस्वतिः
अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोनि नमोस्तुते ।
गायत्रि त्वं विश्वामित्र शापाद्विमुक्ता भव ।

हे देवि ! हे महादेवि ! हे दिव्य रूपे ! हे सन्ध्या स्वरूपे ! हे सरस्वति ! हे जरा रहिते ! हे मरण रहिते ! आपको नमस्कार है। हे गायत्री ! आप विश्वामित्र के शाप से विमुक्त होवें।

इस प्रकार गायत्री का शापोद्धार कर अन्त में भगवती गायत्री का ध्यान करते हुए नमस्कार करे।

> यद्देवाऽसुरपूजितं परतरं मामर्थ्यनारात्मकं
> पुन्नागाऽम्बुज पुष्प नागबकुलैः केशैः शुकैरर्चितम्।
> नित्यं ध्यान समस्त दीप्तिकरणं कालाग्निरुद्दीपनं,
> तत्संहार करं नमामि सततं पातालसंस्थं मुखम्।

---

० न्यास विधान ०

वर्ण न्यास मन्त्र—

	स्पर्श करें
ॐ तत्पादाङ्गुलिपर्वभ्यां नमः	(पैरों की अंगुलियों की गाँठें)
ॐ सपादाङ्गुलिभ्यो नमः	(पैरों की अंगुलियाँ)
ॐ विजङ्घाभ्यां नमः	(दोनों जाघें)
ॐ तुर्जानुभ्यां नमः	(दोनों जानु)
ॐ व ऊरूभ्यां नमः	(कटि के नीचे का भाग)
ॐ रे शिश्नाय नमः	(शिश्न)
ॐ णि वृषणाभ्यां नमः	(वृषण)
ॐ यं कट्यै नमः	(कटि)
ॐ भर्नाभ्यै नमः	(नाभि)
ॐ गो उदराय नमः	(पेट)
ॐ दे स्तनाभ्यां नमः	(स्तन)
ॐ व उरूसे नमः	(छाती)
ॐ स्य कण्ठाय नमः	(कण्ठ)

ॐ धी दन्तेभ्यो नमः (दांत)
ॐ म तालुने नमः (तालु)
ॐ हि नासिकायै नमः (नाक)
ॐ धि नेत्राभ्यां नमः (नेत्र)
ॐ यो भ्रूभ्यां नमः (भौहें)
ॐ यो ललाटाय नमः (माथा)
ॐ नः पूर्वमुखाय नमः (मुख का पूर्वी भाग)
ॐ प्रदक्षिण मुखाय नमः (मुख का दक्षिण भाग)
ॐ चो पश्चिम मुखाय नमः (मुख का पश्चिम भाग)
ॐ द उत्तर मुखाय नमः (मुख का उत्तर भाग)
ॐ यात् मूर्ध्ने नमः (सिर)

करन्यास मन्त्र— (स्पर्श करें)

ॐ आपः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः (अंगूठा)
ॐ ज्योतिस्तर्जनीभ्यां नमः (तर्जनी)
ॐ रसो मध्यमाभ्यां नमः (मध्यमा)
ॐ अमृतम् अनामिकाभ्यां नमः (अनामिका)
ॐ ब्रह्म कनिष्ठिकाभ्यां नमः (कनिष्ठा)
ॐ भूर्भुवः स्वरोम् करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः (हथेली व पृष्ठ भाग)
ॐ अग्नये हृदयाय नमः (हृदय)
ॐ वायवे शिरसे स्वाहा (सिर)
ॐ सूर्याय शिखायै वषट् (शिखा)
ॐ ब्रह्मणे कवचाय हुम् (दोनों भुजाएं)
ॐ विष्णवे नेत्राय बौषट् (नेत्र)
ॐ रुद्राय अस्त्राय फट् (ताली बजाएं)

ब्रह्म गायत्री मन्त्र—

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं
ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।
ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।

देहन्यास मन्त्र— (स्पर्श करें)

ॐ भू पादयोः (दोनों पैर)
ॐ भुवः जान्वोः (दोनों जानु)
ॐ स्वः नाभौः (नाभि)
ॐ महः हृदये (हृदय)
ॐ जनः कण्ठे (कण्ठ)
ॐ तपः ललाटे (ललाट)
ॐ सत्यं मूर्ध्नि (सिर)
ॐ तत्पादयोः (दोनों पैर)
ॐ सवितुर्जान्वोः (दोनों जानु)
ॐ वरेण्यं स्कन्धयोः (कन्धे)
ॐ भर्गो हृदये (हृदय)
ॐ देवस्य कन्ठे (कंठ)
ॐ धीमहि वक्त्रे (मुख)
ॐ धियो यो नेत्रे (नेत्र)
ॐ नः मुखे (मुख)
ॐ प्रचोदयात् अस्त्राय फट् (ताली वजाएं)

न्यास क्रिया के अन्तर्गत मूलभावना यह होनी चाहिए, कि आप मंत्रोच्चार के साथ जिस २ अंग का स्पर्श करें, उसी २ अंग में देवी गायत्री अपनी दिव्य शक्ति भरे। इस प्रकार वे अंग-प्रत्यंग पवित्र होकर दिव्य शक्ति को प्राप्त करते हैं।

इति न्यास विधानः समाप्तम्

तर्पण-विधान

तर्पण करने का विधान शास्त्रों में इस प्रकार बताया गया है कि किसी नदी या तालाब में जल के मध्य खड़े होकर कुश हाथ में ले, यज्ञोपवीत को अंगूठे और तर्जनी के बीच में से होते हुए हाथ में अटका हुआ निकाल लें, तथा अञ्जुलि में जल भरकर अर्घ्य की भांति अंगुलियां को नीचे की ओर झुका कर जल छोड़ें। तर्पण के समय दोनों हाथों की अनामिका अंगुलियों में कुश की बनी हुई अंगूठियाँ पहनें। शिखा में, दोनों पैरों के नीचे, यज्ञोपवीत में तथा धोती की अन्टी में भी कुश के टुकड़े लगा लें, तो अति श्रेष्ठ है।

अब क्रमशः निम्न मन्त्रोच्चारण करते हुए उपरोक्त विधि से तर्पण करते जाएं—

तर्पण मन्त्र—

ॐ भूर्भुवः स्वः पुरुषमृग्यजुः साम मण्डलान्तर्गत सविता रमा वाहामीत्यावाह्य तर्पणं कुर्यात्।

ॐ भूः पुरुषमृग्वेदं तर्पयामि।
ॐ भुवः पुरुषं यजुर्वेदं तर्पयामि।
ॐ स्वः पुरुषं सामवेदं तर्पयामि।
ॐ महः पुरुषं अथर्ववेदं तर्पयामि।
ॐ जनः पुरुषमितिहास पुराणं तर्पयामि।
ॐ तपः पुरुषं सर्वलोकं तर्पयामि।
ॐ सत्यं पुरुषं सर्वलोकं तर्पयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः पुरुषं ऋग्यजुः साममण्डलान्तर्गत तर्पयामि।
ॐ भूः रेकपदं गायत्री तर्पयामि।
ॐ भुवः द्विपादं गायत्री तर्पयामि।

ॐ स्व स्त्रिपादं गायत्री तर्पयामि ।

ॐ भूर्भु वः स्वश्चतुष्पादं गायत्री तर्पयामि ।

ॐ उषसं तर्पयामि ।

ॐ गायत्रीं तर्पयामि ।

ॐ सावित्री तर्पयामि ।

ॐ सरस्वतीं तर्पयामि ।

ॐ पृथ्वीं तर्पयामि ।

ॐ जयां तर्पयामि ।

ॐ कौशिकीं तर्पयामि ।

ॐ सांकृतीं तर्पयामि ।

ॐ सर्वापराजितां तर्पयामि ।

ॐ सहस्त्र मूर्ति तर्पयामि ।

एभिर्मन्त्रेश्च यो नित्यं चतुर्विशतिभि द्विजः
मुतर्पंति गायत्रीं स सन्ध्या फलमाप्नुयात् ।

अर्थात्—जो द्विज इस प्रकार उक्त मन्त्रों द्वारा नित्य चौबीस तर्पण करता है, उसे सन्ध्या का फल प्राप्त होता है ।

इति तर्पण विधानः समाप्तम् ।

गायत्री – कवच

यहाँ हम क्रमशः विश्वामित्र संहिता में वर्णित तथा वशिष्ठ संहिता में वर्णित, दोनों ही गायत्री कवच दे रहे हैं, पाठकगण अपनी अपनी श्रद्धानुसार किसी भी कवच का पाठ कर सकते हैं।

१—विश्वामित्र संहितोक्त गायत्री कवच

ब्रह्मोवाच—

विश्वामित्र ! महाप्राज्ञ ! गायत्री कवचं शृणु ।
यस्य विज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं वशयेत् क्षणात् ॥

अर्थात्—ब्रह्मा जी बोले—हे महाबुद्धिमान विश्वामित्र ! तुम गायत्री कवच का श्रवण करो, जिसको जानने मात्र से मनुष्य तीनों लोकों को अपने वश में कर लेता है।

सावित्री मे शिरः पातु शिखायाम मृतेश्वरी ।
ललाटं ब्रह्म दैवत्या भ्रुवौ मे पातु वैष्णवी ॥
कर्णौ मे पातु रुद्राणी सूर्या सावित्रिकाऽम्बिके ।
गायत्री वदनं पातु शारदा दशनच्छदौ ॥

अर्थात्—सावित्री मेरे सिर की रक्षा करें, अमृतेश्वरी मेरी शिखा की, ब्रह्म दैवत्या मेरे ललाट की और वैष्णवी मेरी भौहों की रक्षा करें। रुद्राणी दोनों कानों की, सूर्य में रहकर समस्त प्राणियों का सृजन करने वाली भगवती दोनों नेत्रों की, गायत्री मेरे मुख की तथा शारदा मेरे मसूढ़ों की रक्षा करें।

द्विजान् यज्ञप्रिया पातु रसनायां सरस्वती ।
सांख्यायनी नासिका मे कपोलौ चन्द्रहासिनी ।।
चिबुकं वेदगर्भा च कण्ठं पात्वघनाशिनी ।
स्तनौ मे पातु इन्द्राणी हृदयं ब्रह्मवादिनी ।।
उदरं विश्व भोक्त्री च नाभौ पातु सुरप्रिया ।
जघनं नारसिंही च पृष्ठं ब्रह्माण्ड धारिणी ।।
पार्श्वौं मे पातु पद्माक्षी गुह्यं गो गोप्त्रिकाऽवतु ।
ऊर्वोरोङ्कारारूपा च जान्वोः सन्ध्यात्मिकाऽवतु ।।

अर्थात्—यज्ञप्रिया मेरे दाँतों की, सरस्वती मेरी जिह्वा की, साँख्यायनी मेरी नासिका की और चन्द्रहासिनी मेरे कपोलों की रक्षा करें। वेदगर्भा मेरी ठोड़ी की, अघनाशिनी मेरे कण्ठ की, इन्द्राणी स्तनों की तथा ब्रह्मवादिनी मेरे हृदय की रक्षा करें। विश्व भोक्त्री मेरे पेट की, सुरप्रिया मेरी नाभि की, नारसिंही मेरी जंघाओं की तथा ब्रह्माण्ड धारिणी मेरी पीठ की रक्षा करें। पद्माक्षी मेरे दोनों पार्श्व की, गोप्त्रिका मेरे गुह्य अंगों की, ॐ कार रूपा मेरे दोनों उरू की तथा सन्ध्यात्मिका मेरे दोनों घुटनों की रक्षा करें।

जंघयोः पातु अक्षोभ्या गुल्फयोर्ब्रह्मशीर्षका ।
सूर्या पदद्वयं पातु चन्द्रा पादांगुलिषु च ।।
सर्वाङ्ग वेदजननी पातु मे सर्वदाऽनघा ।
इत्येतत् कवचं ब्रह्मन ! गायत्र्याः सर्वपावनम् ।।

अर्थात्—अक्षोभ्या मेरी जाँघों की, ब्रह्मशीर्षका गुल्फ की, सूर्या मेरे दोनों पैरों की तथा चन्द्रा पैरों की अंगुलियों की रक्षा करें। सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाली वेद जननी सर्वदा हमारे सम्पूर्ण अंगों की रक्षा करें। इस प्रकार यह गायत्री कवच सदैव सब प्रकार से पवित्र करने वाला है

पुण्यं पवित्रं पापघ्नं सर्वरोग निवारणम् ।
त्रिसंध्यं यः पठेद् विद्वान सर्वानकामान वाप्नुयात् ।
सर्वं शास्त्रार्थ तत्वज्ञः स भवेद् वेदवित्तमः
सर्वं यज्ञफलं प्राप्यं ब्रह्मान्ते समवाप्नुयात् ।

अर्थात्—यह गायत्री कवच पुण्य, पवित्र, पापनाशक तथा सर्व रोग निवारक है। जो विद्वान तीनों काल इसका पाठ करता है, उसके सब मनोरथ पूर्ण (सिद्ध) हो जाते हैं। वह सब शास्त्रों का तत्व ज्ञाता तथा वेदवेत्ता हो जाता है, तथा समस्त यज्ञों का फल प्राप्त करके अन्त में ब्रह्म को प्राप्त होता है।

इस गायत्री कवच का पाठ करने से पूर्व विनियोग तथा ध्यान करना चाहिए। विनियोग के लिए निम्न मन्त्र का उच्चारण कर हाथ में जल लेकर पृथ्वी पर छिड़क दें।

विनियोगः—ॐ अस्य श्री गायत्री कवचस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दौ गायत्री देवता ॐ भूः बीजम्, भुवः शक्तिः, स्वः कीलकम्, गायत्री प्रीत्यर्थ जपे विनियोगः।

ध्यान के लिए निम्न स्तुति पाठ करते हुए माता गायत्री के स्वरूप का ध्यान धारण करें उपरान्त पूर्वोक्त कवच का पाठ करें।

ध्यानम्—

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्य कोटि समप्रभाम् ।
सावित्रीं ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटि-सुशीतलाम् ।।
त्रिनेत्रां सितवक्त्रां च मुक्ताहार विराजिताम् ।
वराऽभयांकुश कशां हेमपात्राक्षमालिकाम् ।।
शंख-चक्राऽब्ज-युगलं कराभ्यां दधतीं पराम् ।
सित पंकज संस्थां च हंसारूढ़ां सुखस्मिताम् ।।

अर्थात्—जो गायत्री देवी पांच मुखों वाली तथा दश भुजाओं वाली है, जिसकी कान्ति करोड़ों सूर्यों के समान है तथा जो सावित्री ब्रह्मा को भी वरदान देने वाली है तथा करोड़ों चन्द्रमाओं के समान

शीतल है, जिसके तीन नेत्र हैं तथा मुखमण्डल स्वच्छ है, जो मुक्ता हार से विभूषित है, जिसके दोनों हाथों में वर, अभय, अंकुश कशा, स्वर्णपात्र, अक्षमाला, शंख, चक्र तथा ध्वज शोभायमान है. जो परब्रह्म स्वरूपिणी है, जो श्वेत कमल के आसन पर विराज रही है, शुभ्रवर्ण हंस जिसका वाहन है और जिसके मुखमण्डल पर सदैव प्रसन्नता की मुस्कान रहती है।

ध्यात्वैवं मनसाम्भोजे गायत्री कवचम् जपेत्।

मस्तिष्क पटल पर उस माता गायत्री के स्वरूप का ध्यान धारण कर गायत्री कवच का पाठ करें।

इति विश्वामित्र संहितोक्त गायत्री कवचम् सम्पूर्णम्।

२—वशिष्ठ संहितोक्त गायत्री कवच

वशिष्ठ संहिता में गायत्री कवच का वर्णन इस प्रकार है :—
एक बार महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने ब्रह्मा जी से पूछा—

स्वामिन् सर्व जगन्नाथं ! संशयोऽस्ति महान् मम।
चतुष्षष्टि कलानां च पातकानां च तद्वद ? ॥

मुच्यते केन पुण्येन ब्रह्मरूपं कथं भवेत् ?
देहश्च देवता रूपं मन्त्र रूपं विशेषतः ॥
क्रमतः श्रोतुमिच्छामि कवचं विधिपूर्वकम्।

अर्थात्—हे ब्रह्मन् ! हे सम्पूर्ण जगत् के स्वामी ! मुझे एक बड़ा भारी संशय है वह यह कि मनुष्य को चौंसठ कलाओं की प्राप्ति तथा सम्पूर्ण पापों से छुटकारा किस पुण्य के प्रभाव से प्राप्त होता है ? और वह कौन सा कवच है जिसका विधिपूर्वक पाठ करने से मानव शरीर देवता स्वरूप और मंत्ररूप हो जाता है। मैं उस कवच को सुनने का इच्छुक हूं।

ब्रह्मोवाच—

गायत्र्याः कवचस्याऽस्य ब्रह्मा विष्णुः शिवोऋषिः
ऋग् यजुः सामाऽथर्वाणिं छन्दासि परिकीर्त्तिता।
परब्रह्म स्वरूपा सा गायत्री देवता स्मृता।

ब्रह्माजी बोले—इस गायत्री-कवच के ब्रह्मा विष्णु तथा शिव ऋषि हैं, ऋग्यजुः साम तथा अथर्व छन्द हैं, परब्रह्म स्वरूपा गायत्री देवता है।

बीजं भर्गश्च शक्तिश्च धियः कीलकमेव च।
पुरुषार्थ विनियोगो योनश्च परिकीर्तितः।

अर्थात्—इस गायत्री कवच का 'भर्ग,' बीज है, 'धियः' शक्ति है और 'यो नः प्रचोदयात्' यह कीलक है। चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति के लिए इसे पढ़ना चाहिए, यही विनियोग है।

विनियोग—ॐ अस्य गायत्री कवचस्य ब्रह्मा विष्णु रुद्रा ऋषयः ऋग् यजुः सामाऽथर्वाणिच्छन्दांसि, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री देवता भूः बीजम्, भुवः शक्ति स्वः कोलकम् श्री गायत्री प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

(इस मन्त्र को पढ़ते हुए दाहिने हाथ में जल लेकर भूमि पर छोड़ दे)

ध्यानम्— वर्णास्त्रां कुण्डिकाहस्तां शुद्ध निर्मल ज्योतिषीम्।
सर्व तत्त्वमयीं वन्दे गायत्रीं वेदमातरम्॥

अर्थात्—सम्पूर्ण वर्णों के स्वरूप वाली, कुण्डिका हाथों में धारण करने वाली, शुद्ध निर्मल ज्योति स्वरूपिणी, समस्त तत्वों से युक्त वेदमाता गायत्री की मैं वन्दना करता हूं।

(इसके साथ ही पीछे गायत्री शक्ति ध्यान योग में वर्णित भगवती गायत्री के स्वरूप का दिग्दर्शन कराने वाली स्तुति का पाठ करते हुए उस स्वरूप का ध्यान धारण करें, ताकि चित्त पूर्णरूप से उस स्वरूप में आत्म-सात् हो जाय)।

कवचम्—

ॐ गायत्रीं पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे ।
ब्रह्मविद्या च मे पश्चादुत्तरे मां सरस्वती ।

पावकीं मे दिशं रक्षेत् पावकोज्ज्वल शालिनी ।
यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधान गणार्दिनी ॥

पावमानी दिशं रक्षेत् पावमान विलासिनी ।
दिशं रौद्रीभवतु मे रुद्राणी रुद्ररूपिणी ॥

ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ।
एवं दश दिशो रक्षेत् सर्वतो भुवनेश्वरी ।

ब्रह्मास्त्र स्मरणा देव वाचां सिद्धिः प्रजायते ।
ब्रह्म दण्डश्च मे पातु सर्व शस्त्राऽस्त्र भक्षकः ।

ब्रह्मशीर्षस्तथा पातु शत्रूणां वध कारकः ।
सप्त व्याहृतयः पान्तु सर्वदा विन्दु संयुताः ।

वेदमाता च मां पातु स-रहस्या स-दैवता ।
देवी सूक्तं सदा पातु सहस्राक्षर देवता ।

चतुष्षष्टि कला विद्या दिव्याद्या पातु देवता ।
बीज शक्तिश्च मे पातु पातु विक्रम देवता ।

अर्थात्—पूर्व दिशा में गायत्री, दक्षिण में सावित्री, पश्चिम में महाविद्या और उत्तर में सरस्वती हमारी रक्षा करें। अग्निकोण में अग्निवत् देदीप्यमान देवी, नैऋत्य में यातुधानों का नाश करने वाली हमारी रक्षा करे। वायव्य में वायु के समान विहार करने वाली और ईशान कोण में रौद्ररूपिणी भगवती रुद्राणी हमारी रक्षा करें। ऊपर की ओर ब्रह्माणी और नीचे की ओर वैष्णवी हमारी रक्षा करें। इस प्रकार दशों दिशाओं में सब देवियाँ हमारी रक्षा करें। समस्त शस्त्रास्त्रों का भक्षण (विनाश) करने वाला ब्रह्मदण्ड

हमारी रक्षा करे, शत्रुओं का वध करने वाला ब्रह्मशीर्ष हमारी रक्षा करे। रहस्यमयी वेदमाता हमारी रक्षा करें, जिसके सहस्राक्षर देवता हैं वह देवी सूक्त देवताओं सहित हमारी रक्षा करे। चौंसठ कलाओं सहित दिव्य विद्या, बीज शक्ति, विक्रम देवता ये सब हमारी रक्षा करें।

गायत्री पद शक्ति कवचम्—

तत्पदं पातु मे पादौ जंघे च सवितुः पदम्।
वरेण्यं कटि देशन्तु नाभि भर्गस्तथैव च॥

देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा।
धियो मे पातु जिह्वायां यः पदं पातु लोचने।
ललाटे नः पदं पातु मूर्द्धानं मे प्रचोदयात्॥

अर्थात्—'तत्' पद हमारे पैरों की, 'सवितुः' पद जंघाओं की, 'वरेण्यं' कटि देश की, 'भर्ग' पद नाभि स्थान की, 'देवस्य' पद हृदय की, धीमहि' पद गले की, 'धियः' पद वाणी की, 'यः' पद नेत्रों की, 'नः' पद ललाट की और प्रचोदयात्' पद हमारे शिर की रक्षा करें।

गायत्री अक्षर शक्ति कवचम्—

'तद्वर्णः' पातु मूर्द्धानं, 'स'कारः पातु भालकम्।
चक्षुषी मे 'वि'कारस्तु श्रोत्रं रक्षे'तु' कारकः॥

नासापुटे 'व'कारो मे, 'रे'कारस्तु कपालकम्।
'णि'कारस्त्वधरोष्ठे च 'य'कारस्तूर्ध्व ओष्ठके।
अस्य मध्ये 'भ'कारस्तु 'गो'कारस्तु कपोलयोः।

अर्थात्—'तत्' वर्ण सिर की और 'स'कार मस्तक की रक्षा करे। ः नेत्रों की, 'तु' कान की, 'व' नासापुट की और'रे' मेरे कपाल की रक्षा करे। 'णि' कार निम्नओष्ठ की, 'य' कार उपरोष्ठ की, 'भ' मुख के मध्य भाग की और 'गो'कार कपोलों की रक्षा करे।

'दे'कारः कण्ठदेशेच 'व'कारः स्कन्धदेशयोः ।
'स्य' कारो दक्षिणं हस्तं 'धी' कारो वाम हस्तकम् ।
'म'कारो हृदयं रक्षेद् 'हि' कारो जठरं तथा ।
'धि'कारो नाभि देशं तु 'यो'कारस्तु कटिद्वयम् ।
गुह्यं रक्षतु 'यो'कार उरु मे 'नः' पदाक्षरम् ।
प्र'कारो जानुनी रक्षेद्'चो'कारो जंघ देशयोः ।
'द' कारो गुल्फदेशं तु 'यात्कारः' पाद युग्ममम् ।
जातवेदेति गायत्री त्र्यम्बकेति शताक्षरा ।

अर्थात्--'दे' वर्ण कण्ठ की 'व' कन्धों की, 'स्य' दाएं हाथ की, 'धी' वाएं हाथ की रक्षा करे । 'म' कार हृदय की, 'हि' कार जठर की, 'धि' नाभि स्थान की, 'यो' दोनों कटि भाग की, 'यो' गुह्याङ्ग की, 'नः' पद व अक्षर दोनों उरू की, 'प्र' दोनों घुटनों की, 'यो' दोनों जंघों की रक्षा करे । 'द'कार गुल्फ की, 'यात्' कार दोनों पैरों की रक्षा करे । ॐ जातवेद से......' गायत्री के ४३ अक्षर, 'ॐ त्र्यम्वके......' गायत्री के ३३ अक्षर तथा 'तत्सवितुर्वरेण्यं......' गायत्री के २४ अक्षर, इस प्रकार सब मिलकर शताक्षरा गायत्री कही गई हैं, वह हमारी रक्षा करे ।

सर्वतः सर्वदा पातु आपो ज्योतीति षोडशी ।

ॐ आपो ज्योती......' यह षोडशाक्षर गायत्री सदा सब स्थानों पर हमारी रक्षा करे ।

गायत्री कवच महात्म्य—

इदं तु कवचं दिव्यं बाधाशत विनाशकम् ।
चतुष्पष्टि कला विद्या सकलैश्वर्य सिद्धिदम् ।
जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत् ।
स्त्री गो ब्राह्मण मित्रादि द्रोहाद्यखिल पातकैः
मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधि गच्छति ।

पुष्पाञ्जलिं च गायत्र्या मूलेनैव पठेत् सकृत ।
शतसाहस्त्र वर्षाणां पूजायाः फल माप्नुयात् ।

अर्थात्—यह गायत्री कवच सैकड़ों बाधाओं को नष्ट करने वाला है, चौंसठ कलाओं तथा समस्त ऐश्वर्य को देने वाला है। गायत्री जप के आरम्भ में गायत्री हृदय तथा जप के अन्त में गायत्री कवच का पाठ करना चाहिए। यह स्त्रीवध, गौवध, ब्राह्मणवध तथा मित्रद्रोह आदि समस्त पापों को नष्ट करने वाला है। गायत्री कवच का पाठ करने वाला मनुष्य परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त कर लेता है। इस गायत्री कवच का सदैव पाठ कर मूल मन्त्र से गायत्री को एक बार भी पुष्पाञ्जलि देने से सैकड़ों तथा हज़ारों वर्ष को गायत्री उपासना का फल प्राप्त होता है।

भूर्जपत्रे लिखित्वैतत् स्वकण्ठे धारयेद् यदिः
शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा धारयेद् बुधः ।
त्रैलोक्यं क्षोभयेत् सर्वं त्रैलोक्यं दहति क्षणात् ।
पुत्रवान् धनवाञ्छीमान् नाना विद्या निधिर्भवेत् ।

अर्थात्—जो बुद्धिमान पुरुष गायत्री कवच को भोजपत्र पर लिखकर कण्ठ, शिखा तथा दाहिने हाथ में अथवा मणिबन्ध में धारण करते हैं, वे क्षणभर में त्रैलोक्य को क्षुब्ध कर सकते हैं, अथवा तीनों लोकों का नाश कर सकते हैं। वे पुत्रवान् धनवान् श्रीमान तथा नाना विद्याओं में पारंगत हो जाते हैं।

ब्रह्मास्त्रादीनि सर्वाणि तदङ्गस्पर्शनात्ततः ।
भवन्ति तस्य तुच्छानि किमन्यत् कथयामिते ।

अर्थात्—इस गायत्री कवच की महिमा का कहाँ तक वर्णन करें, ब्रह्मास्त्र आदि भी उसके अंग के स्पर्श मात्र से तुच्छ हो जाते हैं।

अभिमंत्रितं गायत्रीं कवचं मानसं पठेत् ।
तज्जलं पिबतो नित्यं पुरश्चर्या फलं भवेत् ।

लघु सामान्यकं मन्त्रं महामंत्रं तथैव च।
यो वेत्ति धारणां युञ्जन जीवन्मुक्तः सउच्यते।

अर्थात्—जो जन गायत्री कवच से जल को अभिमंत्रित कर नित्य पीते हैं, वे पुरश्चरण के फल को प्राप्त करते हैं। जो साधक गायत्री का लघु मंत्र और महामंत्र जानता है और उनका जप करता है, वह जीवन्मुक्त हो जाता है।

सप्त व्याहृति विप्रेन्द्र ! सप्तावस्थाः प्रकीर्तिताः।
सप्त जीवशनां नित्यं व्याहृनि अग्निरूपिणी॥
प्रणवे नित्य युक्तस्य व्याहृतीषु च सप्तसु।
सर्वेषामेव पापानां सङ्करे समुपस्थिते॥
शतं सहस्त्रमभ्यर्च्य गायत्री पावनं महत्।
दशशतमष्टोत्तरशतं गायत्री पावनं महत्॥

अर्थात् हे विप्रेन्द्र ! ये जो सात महाव्याहृतियां हैं, वे जीव की सात अवस्थाएं हैं तथा अग्निरूपिणी हैं, अस्तु प्रणवयुक्त सप्तव्याहृति का जप करने वाले साधक को सभी प्रकार के पापों का साङ्कर्य उपस्थित होने पर मात्र सौ अथवा हजार वार गायत्री का जप भी अत्यन्त पवित्रता कारक है।

गायत्री जप का शास्त्रीय विधान—

भक्ति भाजो भवेद् विप्रः सन्ध्याकर्मसमाचरेत्।
काले काले प्रकर्त्तव्यं सिद्धि भवति नाऽन्यथा॥

प्रणवं-पूर्वं मुदधृत्यं भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
तूर्यं सहैव गायत्री जपं एव मुदाहृतम्॥
तुरीय पाद मुत्सृज्यं गायत्री च जपेद् द्विजः।
स मूढ़ौ नरकं याति काल सूत्र मधोगतिः।

अर्थात्—गायत्री में निष्ठा रखने वाला विप्र सर्वप्रथम सन्ध्योपासना करे, फिर समय समय से गायत्री का जप करे, तभी

उसे सिद्धि प्राप्त होती है। अन्यथा नहीं। पहले प्रणव (ॐ) का उच्चारण करे, पश्चात् भूर्भुवः स्वः का फिर गायत्री मंत्र के चारों पदों का। अर्थात् ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।' इस प्रकार गायत्री का जप करना बताया गया है। जो द्विज गायत्री के चतुर्थ पाद (धियो यो नः प्रचोदयात्) को छोड़कर प्रणव व व्याहृति सहित गायत्री जप करता है, वह मूढ़ कालसूत्र नरक में पड़कर अधोगति को प्राप्त होता है।

मन्त्रादौ जननं प्रोक्तं मन्त्रान्ते मृत सूत्रकम्।
उभयोर्दोष निर्मुक्तं गायत्री सफलां भवेत्।।

मन्त्रादौ पाश बीजं च मन्त्रान्ते कुश बीजकम्।
मंत्रमध्ये तु या माया गायत्री सफलां भवेत्।।

वाचिकस्त्वहमेवं स्यादुपांशु शत मुच्यते।
सहस्त्रं मानसं प्रोक्तं त्रिविधं जपलक्षणम्।।

अर्थात्—गायत्री मंत्र का आदि जनन है और अन्त मृतसूत्र है, अस्तु दोनों दोषों से रहित सम्पूर्ण गायत्री का जप करना चाहिए। मंत्र के आदि में पाश बीज है और अन्त में कुश बीजक है तथा मध्य में माया है, जो साधक ऐसा जानता है, उसका गायत्री जप सफल होता है। वाचिक जप का फल सामान्य होता है, उपांशु जप का फल उससे सौगुना होता है, तथा वाचिक जप से मानस जप का फल सहस्त्र गुना होता है।

अक्ष मालां च मुद्रां च गुरोरपि न दर्शयेत।
जपं चाक्षस्वरूपेणाऽनामिका मध्य पर्वणि।।

अनामा मध्यमा हीना कनिष्ठादिक्रमेण तु।
तर्जनी मूलपर्यन्तं गायत्री जप लक्षणम्।।

अर्थात्—जपकाल में जप की माला तथा मुद्रा गुरु को भी नहीं

दिखानी जाहिए । अनामिका के मध्य पर्व से लेकर कनिष्ठा के पर्व से होकर तर्जनी के मूल तक जप करना ही गायत्री जप का लक्षण है ।

पर्वभिस्तु जपेदेवमन्यत्र नियमः स्मृतः ।
गायत्री वेद मूलत्वाद वेदः पर्वसु गीयते ।
अङ्गुल्यग्रेण यज्जप्तं यज्जप्तं मेरु लङ्घने ।
असंख्यया च यज्जप्तं तज्जप्तं निष्फलं भवेत् ।।
विना वस्त्रं प्रकुर्वीनं गायत्री निष्फला भवेत् ।
वस्त्र पुच्छं न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः ।।

अर्थात् -मध्यमा का मध्य पर्व सुमेरु होता है, उसका उल्लंघन नहीं करना चाहिए । गायत्री वेद का मूल है और वेद का मूल पर्व में है । जो जप अंगुलि के अग्रभाग से किया जाता है, तथा जो सुमेरु का लंघन करके किया जाता है, अथवा विना गिनती (संख्या) के जप किया जाता है, उस जप का कोई फल प्राप्त नहीं होता। जो जप वस्त्र के भीतर (गोमुखी आदि) में माला को ढंक कर नहीं किया जाता अथवा जो वस्त्र के पिछले भाग में किया जाता है, वह जप भी निष्फल हो जाता है ।

दशभिर्जन्मजनितं शते नैव पुरा कृतम् ।
त्रियुगं तु सहस्त्राणि गायत्री हन्तिकिल्विषम् ।
प्रातः कालेषु कर्त्तव्यं सिद्धिं विप्रो य इच्छति ।
नादालये समाधिश्च सन्ध्यायां समुपासते ।

अर्थात्—गायत्री का जप दस जन्मों, सौ जन्मों तथा तीन युगों के सहस्त्रों जन्मों के पापों को भी दूर करने वाला है जो विप्र सिद्धि की कामना रखता है, उसे प्रातः काल में गायत्री का जप करना चाहिए और जो सन्ध्या काल में गायत्री की उपासना करता है, वह अनहद नाद में समाधिस्थ होना है ।

ऋषिश्छन्दो देवताख्या वीजं शक्तिश्च कीलकम् ।
नियोगं न च जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ।

वर्ण मुद्रा ध्यान पदमं आवाहनं विसर्जनम् ।
दीपं चक्रं न जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ।

शक्ति न्यासस्तथा स्थानं मन्त्र सम्बोधनं परम् ।
त्रिविधं यो न जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ।

पञ्चोपकारकांश्चैव होमद्रव्यं तथैव च ।
पञ्चाङ्गं च बिना नित्यं गायत्री निष्कला भवेत् ।

अर्थात्—जो साधक गायत्री के ऋषि, छन्द, देवता, वीज, शक्ति कीलक तथा विनियोग को नहीं जानता है, उसका गायत्री जप निष्फल होता है। तथा जो गायत्री का वर्ण मुद्रा, ध्यान पद, आवाहन, विसर्जन और दीपचक्र को नहीं जानता है, उसका गायत्री जप निष्फल होता है। जो उपासक शक्ति, न्यास, स्थान, मन्त्र, सम्बोधन तथा तीन प्रकार के जप को नहीं जानता है, उसका गायत्री जप निष्फल होता है तथा जो गायत्री के पञ्चोपचार पूजन, होमद्रव्य तथा पञ्चाङ्ग को नहीं जानता है, उसका गायत्री जप निष्फल होता है।

मन्त्र सिद्धिर्भवेज्जातु विश्वामित्रेण भाषितम् ।
व्यासो वाचस्पति र्जीवस्तुता देवी तपः स्मृतौ ।।

अर्थात्—विश्वामित्र का ऐसा भाष्य है कि उपर्युक्त सभी विधियों को जानने वाला साधक सिद्धि को प्राप्त करता है। व्यास, वाचस्पति आदि ऋषि स्तुति, तपस्या और स्मृति (ध्यान) को ही सिद्धि का साधन मानते हैं।

गायत्री तु परित्यज्यं अन्य मन्त्रमुपासते ।
सिद्धान्नं च परित्यज्यं भिक्षामरति दुर्मतिः ।

अर्थात्—जो उपासक गायत्री को छोड़कर अन्य मन्त्रों की उपासना करता है, वह दुर्मति मानो अपने घर का सिद्ध अन्न छोड़-कर भिक्षा मांगता फिरता है।

सहस्रजप्ना सा देवी ह्यपपातकनाशिनी।
लक्ष्यजाप्ये तथा तच्च महापातकनाशिनी।
कोटिजाप्येन राजेन्द्र! यदिच्छति तदाप्नुयात्।।

न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः।
शिष्येभ्यो भक्तिमुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात्।

अर्थात्—गायत्री का एक हजार जप करने से उपपातक नष्ट होता है, लाख जप करने से महापातक नष्ट हो जाता है और करोड़ जप करने से इच्छानुसार फल प्राप्त करता है।

कवच तथा जपादि की उक्त विधि दूसरे के शिष्य को नहीं कहनी चाहिए तथा जो भक्त न हो, उसे भी न कहें। अपने शिष्य तथा सच्चे भक्त को ही कहना चाहिए अन्यथा मृत्यु को प्राप्त होता है।

इति वशिष्ठ संहितोक्त गायत्री कवचम् सम्पूर्णम्।

मुद्रा-योग

शास्त्रों में गायत्री उपासना के लिए चौवीस प्रकार की मुद्राएं वताई गई हैं। हाथों को विशिष्ट आकृतियों में मौड़कर ये मुद्राएं बनाई जाती हैं तथा गायत्री की प्रतिमा, मूर्ति, चित्र या यन्त्र के सामने एकान्त में दिखाई जाती हैं। किसी के सामनें इन मुद्राओं को नही करना चाहिए। नीचे उन चौबीस मुद्राओं का सचित्र वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है। इन मुद्राओं को न जानने वाले साधक की गायत्री उपासना निष्फल हो जाती है।

गायत्री की २४ मुद्राएं

अतः परं प्रवक्ष्यामि वर्ण मुद्राः क्रमेण तु ॥
सुमुखं सम्पुटं चैव, विततं विस्तृतस्तथा ॥
द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुः पञ्चमुखं तथा।
षण्मुखाधोमुखं चैव व्यापकाञ्जनिकं तथा।
शकटं यमपाशं च ग्रन्थितं सन्मुखोन्मुखम्।
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यकूर्म वराहकम्।
सिंहाक्रान्तं महाक्रान्तं मुद्गरं पल्लवं तथा।
चतुर्विशति मुद्राक्षाज्जपादौ परिकीर्तितः।
चतुर्विंशतिरिमा मुद्रा गायत्र्याः सुप्रनिष्ठिताः
एता मुद्रा न जानाति गायत्री निष्फला भवेत्।

अर्थात्—सुमुख, सम्पुट, वितत, विस्तृत, द्विमुख, त्रिमुख चतुर्मुख, पञ्चमुख, षण्मुख, अधोमुख, व्यापकांजलि, शकट, यमपाश, ग्रन्थित, सन्मुखोन्मुख, प्रलम्ब, मुष्टिक, मत्स्य, कूर्म, वराहक, सिंहाक्रान्त, महाक्रान्त, मुद्गर पल्लव, ये २४ मुद्राएं जप आदि में करने के लिए वताई गई हैं।

गायत्री की २४ मुद्राएं
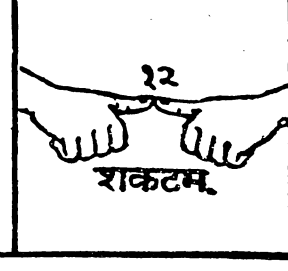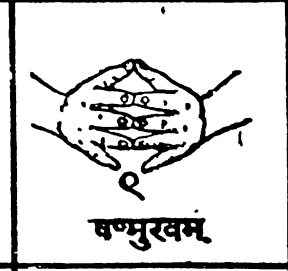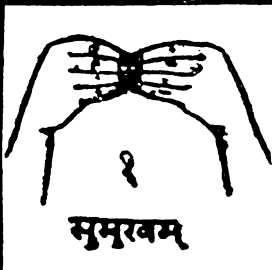
गायत्री की २४ मुद्राएं

१३ यमपाशम.	१४ ग्रन्थित्तम.	१५ उन्मुखोन्मुखम
१६ प्रलम्बम	१७ मुष्टिकम.	१८ मत्स्यः
१९ कूर्मः	20 वराहकम.	२१ सिंहाक्रान्तम
२२ महाक्रान्तम	२३ मुद्गरम	२४ पल्लवम

ॐ क्षमा - प्रार्थना ॐ

प्रत्येक साधना के उपरान्त जगद्गुरु शङ्कराचार्य विरचित यह क्षमा प्रार्थना स्तुति का सस्वर सध्यान पाठ करने से जाने अनजाने में हुई भूलों का दुष्परिणाम नष्ट हो जाता है, तथा मन की समस्त शंकाए निर्मूल हो जाती हैं ।

न मन्त्रं नो यंत्रं तदपि च न जाने स्तुति महो,
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुति कथा ।
न जाने मुद्राते तदपि च न जाने विलपनम्,
परं जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेश हरणम् । १ ।

विधेरज्ञानेनं द्रविण विरहेणालसतया ।
विधेया शक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।
तदे तत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे ।
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति । २ ।

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः ।
परं तेषां मध्ये विरल तरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे ।
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति । ३ ।

जगन्मातर्मातस्तव चरण सेवा न रचिता ।
नवा दत्तं देवि द्रविणमपि भूतस्तवमया ।
तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे ।
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति । ४ ।

श्वपाको जल्पाको भवति मधु कोपम गिरा ।
निरातंको रंको विहरति चिरं कोटि कनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फल मिदं ।
जनः को जानीते जननि जपनीयं जप विधौ । ५ ।

जगदम्ब ! विचित्र मत्र किं,
परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि ।
अपराध हरं परावृत्तं,
नहि माता समुपेक्षते सुतम् । ६ ।

मम ममः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा नहि ।
एवं ज्ञात्वा महादेवि यथा योग्यं तथा कुरुः । ७ ।

अर्थ—(१) मैं न तो मंत्र जानता हूं, न यंत्र जानता हूं, न ही स्तुति जानता हूं । आवाहन, ध्यान और स्तुति कथा भी नहीं जानता और न ही मुद्रा, पूजन आदि ही जानता हूं । किन्तु इतना अवश्य जानता हूं कि हे माता ! तुम्हारी शरण सब क्लेशों को हरने वाली है ।

(२) विधि विधान का ज्ञान न होने से, पैसे की कमी से, आलस्य और सामर्थ्याभाव से आपके चरणों की उपासना करने में जो भूल रह गई हो, हे सकल उद्धारिणी माता ! हे शिवे ! उसको तुम क्षमा कर देना । क्योंकि पुत्र तो कुपुत्र हो सकता है, किन्तु माता कुमाता कदापि नहीं होती है ।

(३) हे माँ ! पृथ्वी पर तेरे बहुत से पुत्र हैं, जो सरल हैं पर उनके मध्य तेरा एक मात्र मैं ही कुटिल पुत्र हो गया हूं । फिर भी

हे जननी ! तेरे लिए मुझे त्याग करना उचित नहीं है, क्योंकि पुत्र कुपुत्र हो सकता है, किन्तु माता कुमाता कदापि नहीं होती।

(४) हे जगत जननी ! मैंने तेरे चरणों की सेवा नहीं की। हे देवि ! तूने मुझे पर्याप्त द्रव्य भी नहीं दिया, जिससे दान पुण्य ही करता। तथापि तू मेरे ऊपर अनुपम स्नेह रखती है। पुत्र तो कुपुत्र हो सकता है, किन्तु माता कुमाता नहीं होती है।

(५) हे जननी ! तुम्हारी स्तुति करने में नीच और चाण्डाल भी मधुरवाणी बोलने वाले महाकवि हो जाते हैं, और रङ्क भी दुख की अग्नि से बचकर करोड़ों स्वर्ण मुद्राओं से युक्त, धनी बन जाता है। तुम्हारा शब्द कान में पड़ते ही मनुष्य श्रेष्ठ बल प्राप्त करता है। हे माता ! तुम्हारी स्तुति करने की विधि भला कौन मनुष्य जानता है ?

(६) हे जगदम्बे ! तुम यदि मुझ पर दयालु होओ, तो इसमें विचित्रता क्या है ? पुत्र चाहे कितना ही अपराध क्यों न कर चुका हो, किन्तु माता अपने पुत्र की कभी उपेक्षा नहीं करती।

(७) मुझ समान न तो कोई पापी है और न तेरे समान पाप-नाशिनी कोई अन्य है। ऐसा जानकर हे महादेवि ! जैसा तुम उचित समझो, वैसा करो।

विसर्जनम्

पुरश्चरण पूरा करने के पश्चात् नित्य गायत्री का उसी प्रकार विसर्जन करना भी आवश्यक है, जिस प्रकार पीछे आवाहन करना आवश्यक बताया जा चुका है, नीचे विसर्जन मंत्र दिया जा रहा है।

उत्तमे शिखरे देवी भूम्यां पर्वत मूर्घनि।
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम्।

इस मंत्र के साथ माता गायत्री का विसर्जन करे। पुरश्चरण पूरा करने के पश्चात् नित्य नियम पूर्वक ब्राह्मणों को भोजन कराना अनिवार्य है। भोजनोपरान्त यथा सामर्थ्य दक्षिणा अवश्य दें। भोजन पूर्ण श्रद्धाभाव से कराना चाहिए।
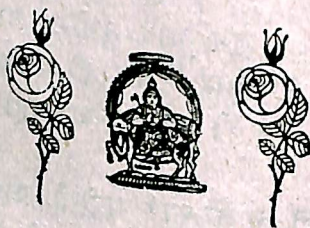
गायत्री पूजन-विधि

★ गायत्री पूजन व सन्ध्योपासनादि का पूर्ण शास्त्रीय विधि-विधान

★ गायत्री स्तोत्रम्, गायत्री हृदयम् गायत्री अ्रष्टोत्तर सहस्रनामादि सहित

★ गायत्री तत्वम्, स्तवराज स्तोत्रम्, आरती इत्यादि

गायत्री सन्ध्योपासना
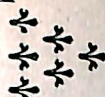
दैनिक गायत्री पूजन विधि

द्विज मात्र के लिए प्रतिदिन गायत्री पूजन करना दैनिकचर्या में एक आवश्यक धर्म बताया गया है। इससे उसकी आत्मा, बुद्धि, चित्त आदि पवित्र तथा उत्कृष्ट होते हैं और उसमें ब्रह्मशक्ति का प्रादुर्भाव होता है, शुभ गुणों की अभिवृद्धि होती है। जो द्विज नित्य नैमित्तिक कर्मों में इस शुभ उपासना कर्म को नहीं करता हैं, वह अधर्म पथ का अनुगामी होकर पतन को प्राप्त होता है। ऐसा द्विज 'द्विज' कहलाने का अधिकारी नहीं। ब्राह्मण कुल में जन्म लेने मात्र से वह यथार्थ ब्राह्मण नहीं होता। ब्राह्मण तो वही है, जो ब्रह्म को जानता है, उसकी शक्ति को पहिचानता है, उसकी उपासना में रहकर उसे ही प्राप्त करने की चेष्टा करता है, तथा समस्त विश्व के प्राणियों का कल्याण चाहते हुए अज्ञानान्धकार में फंसे जीवों को सन्मार्ग दिखाता है, उन्हें परमात्मा की कृपा और शक्ति प्राप्त करने के लिए धर्म मार्ग का अनुसरण करने की प्रेरणा देता है। तात्पर्य यह कि शुभ कर्म करने, धर्माचरण करने, भजन, पूजन, मनन और चिन्तन द्वारा अपना तथा दूसरों का कल्याण करने वाला ही यथार्थ ब्राह्मण है।

वेदमाता गायत्री ब्रह्म की आदि-शक्ति है, समस्त युगों में गायत्री की उपासना ही सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वकल्याणकारी मानी गई है। अस्तु शास्त्र वर्णित धार्मिक विधि विधान पूर्वक गायत्री की पूजा उपासना करने से सब प्रकार के भौतिक तथा आध्यात्मिक सुख-समृद्धियों की प्राप्ति होती है। यहाँ गायत्री पूजन की शास्त्रीय विधि का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है, ताकि द्विजमात्र उसका अनुसरण कर अपना तथा दूसरों का भी कल्याण कर सके।

अथ शुभ गायत्री पूजन विधि

सर्व प्रथम सूर्योदय से पूर्व ही शौचादि कार्यों से निवृत्त हो स्नान करें तथा मन में ईश्वर का ध्यान, पवित्र विचार और शरीर पर पवित्र वस्त्र धारण कर पूर्व दिशा की ओर मुख करके खुले स्थान में कुश या ऊन के आसन पर बैठकर, पवित्र पात्र में से पवित्र जल अंजुलि में लेकर निम्न मंत्र पढ़कर, अपने शरीर मन, बुद्धि की बाह्य तथा अभ्यन्तरीय शुद्धि के लिए अपने शरीर पर जल छिड़कें।

शुद्धि मंत्र— ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपिवा।
यः स्मरेत् पुण्डराकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।

उपरान्त भगवती गायत्री माता की मूर्ति प्रतिमा या चित्र के सम्मुख उनके सत्स्वरूप का ध्यान करते हुए हाथ में जल, अक्षत तथा पुष्प लेकर निम्न 'संकल्प मंत्र' का उच्चारण करते हुए मन में संकल्प धारण करे और मंत्र समाप्ति के साथ ही जल अक्षत तथा पुष्प मूर्ति के सम्मूख भूमि पर छोड़ दे—

संकल्प श्लोक—ॐ तत्सदद्य मासानां मासोत्तमोमासे अमुक पक्षौ अमुक तिथौ अमुकवासरे अमुक गोत्रोत्पन्नोऽहं समस्ताऽरिष्ट निरसनपूर्वक-माधिदैविकाऽऽधि भौतिकाऽऽध्यात्मिक त्रिविधि पापतापोपशमनार्थं सकल कामना सिद्धयर्थं च श्री सविता देवता-प्रीतये गायत्री पूजनं करिष्यते।

अब दाहिने हाथ में लालवर्ण का उत्तम पुष्प लेकर निम्नांकित श्लोक पढ़ते हुए माता भगवती गायत्री देवी के दिव्य स्वरूप का ध्यान धारण करे तथा निम्न स्तुति गाकर उपरान्त ध्यान- मंत्र पढ़े

स्तुति—मुक्ता विद्रुम हेम-नील-धवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै,
युंक्ता मिन्दु निबद्ध रत्न मुकुटां तत्वार्थ वर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदाऽ भयाङ्कुश कशां शूलं कपालं गुणं,
शंख चक्र मथार बिन्दु युगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे।

ध्यान् मंत्र—ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यैनमः ध्यानम् समर्पयामि।

पश्चात् पुनः निम्न स्तुति पाठ करके फिर आवाहन मंत्र का उच्चारण करते हुए माता गायत्री देवी का आवाहन करे—

स्तुति— ॐ सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात् ।
स भूमिंठः सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद् दशांगुलम् ।
आयाहि वरदे देवि त्र्यक्षरे ब्रह्मबादिनि ।
गायत्रि छन्दसां मातर्ब्रह्मयोने नमोऽस्तु ते ।
जगन्मयत्वं च तथा ह्यजत्वं लोके प्रसिद्धं तव देवि जाने
तथाऽपि मर्त्यो हृदयारविन्दा दावाहनं ते जननी प्रकुर्वे ।

आवाहन मंत्र—ॐ भुर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः आवाहनं समर्पयामि ।

फिर स्तुति वन्दन सहित निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुए भगवती गायत्री को आसन अथवा अभाव में अक्षत भेंट करे ।

स्तुति— अस्मिन् वरे स्वासन पीठ युक्ते सौवर्ण वर्णे कुशकम्बलाढये
त्वंतिष्ठ चाऽस्मत्सुमुखी दयार्द्रे यावत् समर्चा तव देवि कुर्वे ।

आसन समर्पण मंत्र—ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि ।

अब— ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्याऽमृतंदिविः ।
श्यामाक दूर्वाऽब्ज पदार्थ मिश्रं पाद्यं मया ते पदयोः प्रयुक्तम्
मातस्तथैवांशु ममाऽपि नित्यं ते पादयोरस्त्वनिशं निवासः ।

पाद्य समर्पण मंत्र—ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः पादयो पाद्य समर्पयामि ।

उक्त स्तुति व मंत्र सहित माता गायत्री देवी को पाद्य भेंट करें ।

उपरान्त निम्न स्तुति व मंत्र सहित जगज्जनी गायत्री को अर्घ्य अर्पण करे—

दर्भाग्र-दूर्वातिल सर्षपाणि प्रक्षिप्य मातः कृतमर्घपात्रम्
तस्माच्च ते मूर्ध्नि मया कराभ्यां संदीयते चाऽर्घजलंगृहाण

अर्घ्य समर्पण मंत्र—तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्द लक्षणम्।
तापत्रयायुते शीर्षिण तवाऽर्घ्यं कल्पयाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमन—

श्री संज्ञकं काल लवङ्ग मिश्रं सुस्वादुतत्तद् द्रवयुक्त शुद्धम्।
सम्मन्त्रितं वैदिक मन्त्र कैंस्तद् गायत्रि देव्याचमनं गृहाण।
वेदानामपि वेद्यायै देबानां देवतात्मने।
मया ह्याचमनं दत्तं गृहाणं जगदीश्वरी।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः आचमनीयम् समर्पयामि।

उक्त मंत्र सहित देवी को आचमनार्थ जल भेंट करे।

मधुपर्क समर्पणन्—

कनक घटित पात्रे वेदमंत्रैस्त्वदर्थं,
दधिमधुघृत भागान् देवि कृत्वा सुमिश्रान्।
अमृतमयमिदं त्वद्-दृष्टिपातेन कृत्वा,
भगवति मधुपर्कं दीयमानं गृहाण।
सर्व कालुष्य हीनायै परिपूर्ण सुखात्मने।
मधुपर्क मिदं तुभ्यं देवि दत्तं प्रसीद च।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः मधुपर्क समर्पयामि।

इस मंत्र के सहित देवी को मधुपर्क समर्पित करें।

उपरान्त पुनः भगवती को आचमन के लिए जल चढ़ाते हुए निम्न मंत्र उच्चारण करें—

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः मधुपर्कान्ते आचमनीयम् समर्पयामि।

पञ्चामृत स्नानम्—

अब क्रमशः दूध, दही, घृत, मधु इत्यादि पवित्र पदार्थों से निम्न प्रार्थनाएं वा मंत्रोच्चार करते हुए स्नान करावें।

दुग्ध स्नानम्—

ये न क्रियन्ते सकलाः क्रियावै यज्ञस्य होमादि विधौ प्रयुक्ताः।
तृप्तानि भूतानि तथा भवन्ति स्नानाय तद्दुग्धमहं ददामि॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः पयः स्नानम् समर्पयामि। पयः स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानान्ते आचमनीयम् समर्पयामि।

दधि स्नानम्—

स्वच्छं च शुद्धं शशिना समप्रभं,
ह्यामलं च किञ्चिन्मधुरं मनोहरम्।
स्नानाय तुभ्यं दधि देवि दत्तं,
ह्यङ्गी कुरु त्वं परिवार युक्ता।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः घृतस्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि। दधि स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि शुद्धोदक स्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

घृत स्नानम्—

हव्यानि यस्मात् प्रभवन्ति लोके,
निवर्त्यतेऽग्नौ हवनं च येन।
तृप्ताश्च येन द्विज देवतात्मा,
दास्ये घृतं तत्स्नपनाय देवि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः घृतस्नानं समर्पयामि। घृत स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

मधुस्नान—निम्न मंत्रों सहित देवी गायत्री को शहद से स्नान

करावें—

पुष्पेभ्य आदाय रसान् समग्रान्,
एकीकृतं यन्मधुमक्षिकाभिः।
तत्स्वादु तुभ्यं मधुरं वरेण्यं,
स्नानाय दास्यै मधु देवि मातः।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः मधु स्नानं समर्पयामि। मधुस्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

शर्करा स्नानम्—

अन्नानि मिष्ठानि यया भवन्ति,
तृप्तिं तथा भूतगणा लभन्ते।
तां शर्करां देवि शशि प्रभाभां,
स्नानाय दत्तां मधुरां गृहाण।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यैः नमः शर्करा स्नानं समर्पयामि। शर्करा स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

उक्त मंत्र सहित माता भगवती गायत्री को शक्कर से स्नान करावे और उपरान्त शुद्धोदक स्नान व आचमन के लिए जल अर्पित करे।

उपरान्त निम्न मंत्रोच्चार सहित गन्धोदक स्नान कराएं।

गन्धोदक स्नानम्—

सौगन्ध्ययुक्तं द्रवद्रव्यजातं घृष्टं च काश्मीरक कस्तुरीभिः।
गन्धोदकं तुभ्यमिदं प्रदत्त स्नानार्थमंगीकुरु देवि मातः।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः गन्धोदक स्नानं समर्पयामि। गन्धोदक स्नानान्ते शुद्धोदक स्नानम् समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

उद्वर्तन (उबटन) स्नानम्—

तैलं समाकृष्य कृतं विलेभ्यः,
पुष्पाणि निक्षिप्य सुवासितानि।
स्नेहं ग्रहाण स्नपनाय देवि,
स्नेहेन चास्मानवलोकयांशु।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः तैलोद्वर्तन स्नानम् समर्पयामि। तदन्ते शुद्धोदक स्नानम् आचमनीयं च समर्पयामि।

पादुका समर्पणम्—

उपास्य यस्याश्चरणौ सुरेशः स्वर्गस्य लक्ष्मी तुभुजेसुखेन्।
भक्त्यैव जन्तुः प्रभवेद्वराड्यस्ते पादुके त्वं पदयोर्गृहाण।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः चरणयोः पादुके समर्पयामि।

वस्त्र उपवस्त्र समर्पणम्—

विचित्रवर्णं ह्यु पवस्त्र युक्तं कौशेयकं चारु नवं मनोहरं।
गायत्रि संवीक्ष्य मदीय शक्ति वस्त्रं गृहाणा शुभयाऽर्पितंते।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः उपवस्त्र सहित वस्त्रं समर्पयामि। वस्त्रोपवस्त्रान्ते आचमनीयं समर्पयामि।

उक्त मंत्रोच्चार सहित गायत्री माता को साड़ी ओढ़नी इत्यादि वस्त्रोपवस्त्र भेंट करे।

अलङ्कार समर्पणम्—

अब निम्नांकित मंत्रों व श्लोकों का उच्चारण करते हुए भगवती गायत्री देवी को हार, कंकण, कर्णाभूषण, अंगद, मुद्रिका तथा कटि आभूषणादि समर्पित करे। यह साधक की अपनी-२ श्रद्धा भावना और सामर्थ्य पर निर्भर है कि वह सोने चाँदी अथवा रत्न जटित आभूषण भेंट करे अथवा यदि धन के अभाव में वह असमर्थ हो, तो केवल ताजा सुगंधित पुष्पों से आभूषण बनाकर चढ़ावे।

हार समर्पणम्—

मातस्त्वदर्थं मणिमौक्तिकाभिः कृतं मनोज्ञं कलकण्ठ भूषणम् ।
मयैव कण्ठे तव देवि चार्ऽपितं ग्रैवेयकं नाम गृहाण भूषणम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः कण्ठे ग्रैवेयकं समर्पयामि ।

कङ्कण समर्पणम्—

माणिक्य मुक्ता मणि खण्ड युक्ते सुवर्णकारेण च संस्कृते ये ।
ते किंकिणीभिः स्वगिते सुवर्णे मयाऽर्पिते देवि गृहाण कङ्कणे ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः हस्तयो कङ्कणे समर्पयामि ।

कर्णभूषण समर्पणम्—

ययोः शुभान्याखचितानि मातर्माणिक्य खण्डानि सुशोभनानि ।
ताटङ्क युग्मे कनकस्य कृत्वा मयाऽर्पिते देवि गृहाण चैते ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः कर्णयोः कुण्डले समर्पयामि ।

अङ्गदाभूषण समर्पणम्—

हेम्नाकृतं ह्यङ्गदयुग्मकं च मनोहरं सुन्दर चित्र युक्तम् ।
बाह्वोर्गृहाणाशु मयार्ऽपितं ते मनोज्ञमाभूषण-भूषणोत्तम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः बाह्वोअंगदे समर्पयामि ।

मुद्रिका समर्पणम्—

प्रवाल गोमेदमयैश्च रत्नैः कृतां तथा हेममयां मनोहरम् ।
तस्यां कुरु त्वं मुखवीक्षणं च गृहाण देव्याङ्गुलिमुद्रिकांच ।

ॐ भूर्भूवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यैः नमः करयोरङ्गुलि मुद्रिकां समर्पयामि ।

कटि भूषण समर्पणम्—

काञ्ची शुभां हारकनिर्मितां मया त्रैलोक्य मातः कटिभूषणाय ।
दत्तां यथे मां त्वभजे चयत्सेह्युद्धर्तुमस्यान् वह मातृगर्भान् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः कटिदेशे कांञ्ची समर्पयामि।

उक्त मंत्र सहित माता गायत्री को करधनी अर्पित करे।

नूपुर समर्पणम्—

सुसुन्दरे हारकनिर्मित द्वे पादाङ्गदे नूपुर नामधेये।
गृहाण मातः पदयोः प्रदत्ते सुकिंकिणीभिश्च विराजिते ते।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः पादयोः नूपुर समर्पयामि।

मुकुट समर्पणम्—

मातस्त्वमेवं मुकुटं हरिन्मणि प्रवाल मुक्ता मणिभिर्विराजितम्।
गारुत्मतैश्चापि मनोहरं कृतं गृहाण मातः शिरसोविभूषणम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः शिरसि मुकुटं समर्पयामि।

उक्त मंत्रोच्चार सहित माँ भगवती को मुकुट भेंट करे।

सुगन्ध समर्पणम्—

गन्धं सुगन्धं मृगनाभिवासितं तथैव काश्मीरक चूर्ण मिश्रितं।
भाले त्वदीये जगदम्ब चार्पितं तथा त्वमङ्गीकुरु वेदगर्भे।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः भाले गन्धम् समर्पयामि :

कुङ्कुम समर्पणम्—

जाती पुष्पं समं रक्तं मुखं कान्ति विवर्धकम्।
कुङ्कुमं रक्तवर्णं ते देवि भाले ददाम्यहम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः भाले कुंकुमं समर्पयामि।

उक्त मन्त्र द्वारा देवी माँ पर रोरी (कुंकुम) चढ़ावे।

अक्षत् समर्पणम्—

क्षतैर्विहीनान् मितवर्ण युक्तान् तथा सुहव्ये प्रार्थितान्श्रुतौ च।
त्वमक्षतान् तानुररीकुरुष्वे भाले त्वदीये शुभदेर्पयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः अक्षतान् समर्पयामि ।

उक्त मन्त्रोच्चार सहित गायत्री देवी को अक्षत् चढ़ाएं ।

पुष्प समर्पणम्—

पुष्पाणि रक्तानि सिताब्ज जाती जपा करीरप्रभृतीनि देविः ।
गृहाण मातः कुरुमार्द्रदृष्टिं यथा मयाऽऽप्तानि तथार्पितानि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः पुष्पाणि समर्पयामि ।

पुष्पमाला समर्पणम्—

शुभ्रैश्च पीतैः कुसुमैरनेकैः रक्तैस्तथाऽनेक सुवर्ण युक्तैः ।
कृतां त्वदर्थं च मया युगाभ्यां गृहाण कण्ठे विनिवेदितां तव ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः पुष्पमालां समर्पयामि ।

सिन्दूर समर्पणम्—

श्वेतं तथा रक्तमहं गुलालं सौभाग्य लाभाय हरिद्राम ।
भाले तवाऽम्बे स्वकरेण देवि सिन्दूर बिन्दुं ह्यपि वैददामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गाययी देव्यैनमः सिंदूरं समर्पयामि ।

कज्जल समर्पणम्—

चाम्पेयकर्पूरकां चन्दनादिकैर्नाना विधैर्गन्ध च यैः सुवासितम् ।
नेत्राञ्जनार्थाय हरिन्मणि प्रभं गायत्रि हे स्वीकुरु कज्जलं शुभम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः अक्षिभ्यां कज्जलं समर्पयामि ।

धूप समर्पणम्—

दशाङ्ग धूपं तव रञ्जनार्थं नाशाय मे विघ्न विधायकानाम् ।
दत्तं मया सौरभचूर्ण युक्तं गृहाणं मातस्तव सन्निधौ च ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः धूपं समर्पयामि ।

दीप समर्पणम्—

सुप्रकाशो महातेजः सर्वत्रः तिमिरापहः ।
स वाह्याभ्यन्तर ज्योतिर्दीपोऽयं प्रति गृह्यताम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः दीपं समर्पयामि।

नैवेद्य व फलादि समर्पणम्—

ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।
प्रप्रदातारं तारिषऽऊर्जन्नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।
सत्पात्रस्थं सुनैवेद्यं विविधानेक भक्षणम्।
निवेदयामि देवेशि सानुगायै गृहाणतत्।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः नैवेद्यं फलं च निवेदयामि तदन्ते च आचमनीयं समर्पयामि।

ताम्बूल समर्पणम्—

कर्पूर जातीफल जायकेन ह्येलालवङ्गेन समन्वितेन्
मया प्रदत्तं मुखवासनार्थं ताम्बूल मंगी कुरुमातरे तत।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः मुखवासार्थे एलालवङ्गादिभिर्युतं ताम्बूलं समर्पयामि।

पूगीफल (सुपारी) समर्पणम्—

भगवति तव भक्तिर्जायतां मानसे मे
जगति तव कृपाया भाजनंस्यां सदाऽहम्।
इति मम खलु मातः केवला ह्यन्तिमेच्छा
क्रमुकमिदमपि त्वां ह्यर्पयेतत्फलायः।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः पूगीफलं समर्पयामि।

द्रव्य समर्पणम्—

तव जननि जगत्यां विद्यते कार्यजातं,
तव चरणकृपातः प्राप्यते सर्बमेतत्।
भगवति किमकुर्या नास्ति किञ्चिन्मदीयं,
कथय जगति कां ने दक्षिणामर्पयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः द्रव्य दक्षिणां समर्पयामि।

छत्र समर्पणम्—

कनकमयमिदं ते देवि रम्यं सुछत्रं,
खचितमपि सुवर्णं- सर्वतो रत्न खण्डैः ।
जयतु जयतु रावैः शब्दितं किङ्किणीनां,
शिरसि जननि दत्तं दण्डयुक्तं गृहाणे ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः छत्रं समर्पयामि ।

चंवर समर्पणम्—

श्वेतैः शिरोजैश्चमरीमृगाणां वालैः सुसूक्ष्मैर्मृदुभिः कृते ये ।
ताभ्यां सुवर्णाकृति दण्डयुग्म्यां त्वां चामराभ्यां परिवीजयामि ।
ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः चामरे समर्पयामि ।

आदर्शा (दर्पण दर्शन)—

देव्यर्पितस्ते मुकुरः सुचारुः
श्वेतस्तथा हारकदण्ड युक्तः ।
पूर्णेन्दुवत् पूर्ण कला समेत—
स्तस्मिन् समालोकय मातरास्यम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः आदर्श समर्पयामि ।

तालवृन्त समर्पण—

निम्न मंत्रोच्चार सहित भगवती को ताड़ का पंखा भेंट करे ।

रौप्येण दण्डेन युतेन शब्दैर्युक्तेन बैरौप्य सुकिङ्किणीनाम् ।
सुतालवृन्तेन तवाङ्गकास्मि मातः सुमन्दं परिवीजयामि ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः तालवृन्तं समर्पयामि ।

आरार्तिक्यम्—

इदꣳ हविः प्रजननं मेऽअस्तु दशवीरः सर्वगणꣳ स्वस्तये आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्य भयसनि ।
अग्नि प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयोरेसऽअस्मासुधत्तः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः आरार्तिक्यं समर्पयामि ।

मन्त्र पुष्पाञ्जलि समर्पणम्—

ॐ यज्ञेन यज्ञ मयजन्त्तं देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्तिदेवाः ।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणायकुर्महे ।
स मे कामान् कामकामाय मह्यकामेश्वरो वैश्रवणोददातु ।

कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नम : ॐ स्वस्ति साम्राज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठयं राज्यं महाराज्यमाधिपत्य ममं समन्त पर्यायै स्यात् सार्वभौमः सार्वायुषां तदा परार्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया ऽएकराडिति । तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्याऽवसनगृहे ।। आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति । ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखोविश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत् त्रैर्द्यावा भूमिजनयन् देव एकः ।

मुक्ता विद्रुम हेमनील धवलाच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैप
युक्तामिन्दु निबद्धरत्न मुकुटाँ तत्त्वार्थ वर्णात्मिकाम् ।
गायत्री वरदाऽभयाङ्कुश-कशाः शुभ्रं कपालं गुणं
शङ्ख चक्रमथार विन्दुयुगलं हस्तैर्वहन्ती भजे ।
जानामि पूजनमहं न हि शास्त्रसिद्धं,
शक्तिस्तु ते परिचिता मम सर्वतश्च ।
पुष्पाञ्जलिर्जननि यश्चरणाब्जयोस्ते,
संदीयते परिगृहाण विसृज्य दोषान् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः मन्त्र पुष्पांजलि समर्पयामि ।

प्रदक्षिणा समर्पणम् -

पदे पदे या परिपूजकेभ्यः सद्योऽश्वमेधादिफलं ददाति ।
तां सर्व पापक्षय हेतु भूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ।

यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणाम् पदे पदे ।

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै श्री गायत्री देव्यै नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

उक्त मन्त्र सहित देवी भगवती गायत्री की प्रदक्षिणा करके यथा शक्ति एक सौ आठ, अट्ठाईस अथवा दश बार गायत्री का जप करे ।

उपरान्त अर्घ्यजल लेकर निम्न श्लोक का उच्चारण करके वेदमाता गायत्री को अर्घ्य समर्पण करे तथा स्तोत्र, कवच, चालीसा आदि का पाठ करे—

श्लोक—गुह्याऽति गुह्य गोप्त्री त्वं गृहाणाऽस्मकृतंजपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ।

गायत्री विसर्जनम्—

गायत्री मन्त्र का जप तथा स्तोत्र, कवच आदि का पाठ सम्पूर्ण करने के उपरान्त निम्न श्लोक उच्चारण करके पूजन समाप्त करें ।

उत्तमे शिखरे देवि भूम्यां पर्वत मूर्धनि ।
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथा सुखम् ।

इति श्री गायत्री पूजन विधि सम्पूर्णम्

गायत्री – स्तोत्रम्

सुकल्याणीं वाणीं सुरमुनिवरैः पूजितपदाम् ।
शिवामाद्यां वन्द्यां त्रिभुवनमयीं वेदजननीम् ।
परां शक्ति स्रष्टुं विविध विधि रूपां गुणमयीम् ।
भजेऽम्बा गायत्रीं परम सुभगानन्द जननीम् ।

अर्थ—हम उस परम सौभाग्य और आनन्द को उत्पन्न करने वाली माता गायत्री का भजन (ध्यान) करते हैं, जोकि वाणी का कल्याण करने वाली है, देवता और मुनि जिसके चरणों की पूजा करते हैं, जो साक्षात् शिवा (भवानी) है, आद्या है, तीनों लोकों में व्याप्त है, तथा वेदों की जननी है, जोकि पराशक्ति है, विविध गुणों से युक्त है तथा विविध रूपधारिणी है ।

विशुद्धां सत्त्वस्थामखिलं दुख स्थादिहरणम् ।
निराकारां सारां सुविमल तपो मूर्त्तिमतुलाम् ।
जगज्ज्येष्ठांश्रेष्ठा मसुरऽसुर पूज्यां श्रुतिनुताम् ।
भजेऽम्बा गायत्री परम सुभगानन्द जननीम् ।

अर्थ—जो विशुद्ध तत्वों से परिपूर्ण, परम सत्यमयी, तथा समस्त दुर्वस्थाओं को हरने वाली है, जो निराकार है, सारभूत है, अत्यन्त विमल है तथा अतुल तपोमूर्ति है, संसार में सबसे महान है, श्रेष्ठतम है और देवताओं व असुरों सभी के द्वारा पूजी जाती है, उस परम सौभाग्य और आनन्द की जननी माँ गायत्री का हम भजन करते हैं ।

तपोनिष्ठाभीष्ठां स्वजन मन सन्ताप शमनीम् ।
दयामूर्ति स्फूर्ति यतितति प्रसादेक सुलभाम् ।

वरेण्यां पुण्यां तां निखिल भव बन्धापहरणीम् ।
भजेऽम्बा गायत्रीं परम सुभगानन्द जननीम् ।

अर्थ—जिसका तपोनिष्ठ रहना ही मेरा अभीष्ट है, जो स्वजनों के मन का सन्ताप शमन करने वाली है, जो दया की मूर्ति है, स्फूर्तिमयी है, जिसको प्रसन्न करना अति सुलभ है, जो चित्त में धारण करने योग्य है, परम पवित्र है, समस्त सांसारिक बन्धनों का हरण करने वाली है, उस परम सौभाग्य व आनन्द की जननी माँ गायत्री का भजन करते हैं।

सदाराध्यां साध्यां सुमति मति विस्तार करणीम् ।
विशोका मालोकां हृदय गत मोहान्ध हरणीम् ।
परां दिव्यां भव्यां अगम भवसिन्ध्वेक तरणींम् ।
भजेऽम्बा गायत्रीम् परमसुभगानन्द जननीम् ।

अर्थ—जो सदैव आराधना करने योग्य है, तथा जिसकी आराधना अत्यन्त साध्य है, जो सद्बुद्धि का विस्तार करने वाली है, जो शोक रहित तथा आलोकमयी है, हृदय में भरे मोहरूपी अन्धकार को नष्ट करने वाली है जो पराशक्ति है, परम दिव्य रूपा है, भव्य है, अगम संसार सागर से पार करने वाली है, उस परम सौभाग्य एवं आनन्द की जननी माँ गायत्री का हम भजन करते हैं।

अजा द्वैतां त्रैतां विविथगुण रूपां सुविमलाम् ।
तमोसंत्री तंत्री श्रुति मधुर नादां रसमयीम् ।
महामान्या धन्या सतत करुणाशील विभवाम् ।
भजेऽम्बा गायत्रीं परम सुभगानन्द जननीम् ।

अर्थ—जो अजन्मा है, द्वैता तथा त्रैता है, विविध गुणों तथा सुविमल रूपों से युक्त है, जो अन्धकार को हरने वाली है, ब्रह्माण्ड की सञ्चालिका है, अति कर्णप्रिय जिसका स्वर है, तथा जो रसमयी है, महामान्या है, धन्य है, सतत करुणाशील है, वैभव सम्पन्न है,

उस परम सौभाग्य एवं आनन्द की जननी, मा गायत्री का हम भजन करते हैं।

जगद्धात्री पात्री सकल भव संहार करणीम्।
सुवीरां धीरां तां सुविमल तपोराशि सरणीम्।
अनेकामेकां वै त्रिय जगत्सदधिष्ठान पदवीम्।
भजेऽम्बा गायत्रीम् परम सुभगानन्द जननीम्।

अर्थ—जो समस्त विश्व की माता है, समस्त संसार का संहार करने की जो शक्ति धारण किए है, अति वीर तथा धीर हैं, जो पवित्र तप की राशि है, एक होकर भी अनेक है जो, तथा संसार की अधिष्ठानदात्री की पदवी से विभूषित है, उस परम सौभाग्यानन्द की जननी मां गायत्री का हम भजन करते हैं।

प्रबुद्धां बुद्धां तां स्वजनतति जाडयापहरणीम्।
हिरण्यां गुण्यां तां सुकविजन गीतां सुनिपुणीम्।
सुविद्यां निरवंद्याम विमल गुणगाथां भगवतीम्।
भजेऽम्बा गायत्रीं परम सुभगानन्द जननीम्।

अर्थ—जो प्रबुद्ध है, बोधमयी है, स्वजनों की जड़ता का हरण करने वाली है, हिरण्यमयी है, गुणमयी है, जिसकी सुकविजन प्रशस्ति गाते हैं, जो परम निपुण है, सद्ज्ञान स्वरूपा है, निर्वद्या है, जिसकी गुणगाथा अवर्णनीय है, उस परम सौभाग्यानन्द की जननी भगवती गायत्री माता का हम भजन करते हैं।

अनन्तां शान्ता यां भजति बुध वृन्दः श्रुतिमयीम्।
सुगेयां ध्येया यां स्मरति हृदि नित्यं सुरपतिः।
सदा भक्त्या शक्त्या प्रणति मतिभिः प्रीतिवशगाम्।
भजेऽम्बा गायत्रीं परमसुभगानन्द जननीम्।

अर्थ—जो अनन्त है, शान्त है, जिसका भजन करने से बुधजन श्रुतिमय हो जाते हैं, जिसका गान, ध्यान और स्मरण देवाधिपति इन्द्र भी नित्य हृदय से करता है, उस परमसौभाग्य व आनन्द की

जननी गायत्री माता का हम सदा भक्तिपूर्वक तथा प्रेम विभोर होकर भजन करते हैं।

शुद्ध चित्तः पठेद्यस्तु गायत्राष्टकं शुभम्।
अहो भाग्यो भवेल्लोके तस्मिन् माता प्रसीदति।

अर्थ—जो जन शुद्ध चित्त से इस शुभ गायत्री अष्टक का पाठ करते हैं, वे संसार में भाग्यवान होकर माता की कृपा प्राप्त करते हैं।

गायत्री स्तोत्रम् (द्वितीयम्)

यह गायत्री स्तोत्र श्रीमद् देवी भागवत पुराण में वर्णित है, जोकि पाठकों के ज्ञानार्थ यहाँ उद्घृत किया जा रहा है।

नारद उवाच—

भक्तानुकम्पिन् ! सर्वज्ञं ! हृदयं पाप नाशनम्।
गायत्र्याः कथितं तस्माद् गायत्र्याः स्तोत्रमीरयः।

श्रीनारायणोवाच—

आदि शक्ते ! जगन्मात भर्क्तानुग्रहकारिणि।
सर्वत्र व्यापिकेऽनन्ते श्री सन्ध्ये ते नमोऽस्तुते।
त्वमेव सन्ध्या गायत्रीं सावित्री च सरस्वती।
ब्राह्मणी वैष्णवी रौद्री रक्तश्वेता सितेतरा।
प्रातर्बाला च मध्याह्वे यौवनस्था भवेत् पुनः।
वृद्धा सायं भगवती चिन्त्यन्ते मुनिभिः सहः।
हंसस्था गरुड़ारूढ़ा तथा वृषभवाहिनी।
ऋगवेदाध्यायिनी भूमौ दृश्यते या तपस्विभिः।
यजुर्वेद पठन्ती च अन्तरिक्षे विराजते।
या सामगाऽपि सर्वेषु भ्राम्यमाणा तथा भुवि।
रुद्र लोकं गता त्वं हि विष्णु लोक निवासिनी।
त्वमेव ब्रह्मणो लोकेऽ मर्त्यानुग्रहकारिणी।

सप्तर्षि प्रीति जननी माया बहुवरप्रदा।
शिवयोः करनेत्रोत्थता ह्यश्रुस्वेद समुद्भवा।
आनन्द जननी दुर्गा दशधा परिपठ्यते।
वरेण्या वरदा चैव वरिष्ठा वरवाणिनी।
गरिष्ठा च वाराही च वरारोहा च सप्तमी।
नील गङ्गा तथा सन्ध्या सर्वदा भोग-मोक्षदा।
भागीरथी मर्त्यलोके पाताले भोगवत्यपि।
त्रैलोक्य वाहिनी देवी स्थानत्रय निवासिनी।
भूर्लोकस्था त्वमेवाऽसि धरित्री लोकधारिणी।
भुवर्लोके वायुशक्तिः स्वर्लोके तेजसां निधिः।
महर्लोके महासिद्धिर्जनर्लोके ऽजनेत्यपि।
तपस्विनी तपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक्।
कमला विष्णु लोके च गायत्री ब्रह्मलोकगा।
रुद्र लोके स्थिता गौरी हराऽर्धाङ्ग निवासिनी।
अहमो महतश्चैव प्रकृतिस्त्वं हि गीयसे।
साम्यावस्थात्मिका त्वं हि सवल ब्रह्मरूपिणी।
तत परा पराशक्तिः परमा त्वं हि गीयसे।
इच्छा शक्तिः क्रिया शक्तिर्ज्ञानशक्ति स्त्रिशक्तिदा।
गङ्गा च यमुना चैव विपाशा च सरस्वती।
सरयू रेविका सिन्धुर्नर्मदैरावती तथा।
गोदावरी शतद्रुश्च कावेरी देवलोकगा।
कौशिकी चन्द्रमा चैव वितस्ता व सरस्वती।
गण्डकी तापिनी तोया गोमती वेत्रवत्यपि।
इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्णा च तृतीयका।
गान्धारी हस्तजिह्वा च पूषाऽपूषा तथैव च।
अलम्बूषा कुहूश्चैव शंखिनी प्राणवाहिनी
नाडी च त्वं शरीरस्था गीयसे प्राक्तनैर्बुधैः

हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कण्ठस्था स्वप्ननायिका ।
तासुस्था त्वं सदाधारा बिन्दुस्था बिन्दु मालिनी ।
मूले तु कुण्डलीशक्ति र्व्यापिनी केशमूलगा ।
शिखा मध्यासना त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मनी ।
किमन्यद् बहुनोक्तेन यत्किञ्चिज्जगतीत्रये ।
तत्सर्वं त्वं महादेवि ! श्रिये ! सन्ध्ये ! नमोऽस्तुते ।
इतीदं कीर्तिदं स्तोत्रं सन्ध्यायां बहुपुण्यदम् ।
महापाप प्रशमनं महासिद्धि विधायकम् ।
य इदं कीर्तयेत् स्तोत्रं सन्ध्याकाले समाहितः ।
अपुत्रः प्राप्नुयात् पुत्रं धनार्थी धन माप्नुयात् ।
सर्व तीर्थं तपो दानं यज्ञ योगफलं लभेत् ।
भोगान् भुक्त्वा चिर कालमन्ते मोक्षमवाप्नुयात् ।
तपस्विभिः कृतं स्तोत्रं स्नान काले तु यः पठेत् ।
यत्र कुत्र जले मग्नः सन्ध्यामज्जनजं फलम् ।
लभते नाऽत्र सन्देहः सत्यं सत्यं तु नारदः ।
श्रृणुयाद्योऽपिद्भक्त्या स तु पापात् प्रमुच्यते ।
पीयूष सदृशं वाक्यं सन्ध्योक्तं नारदेरितम् ।

इति श्री भगवतोक्तं गायत्री स्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।

गायत्री पञ्जर स्तोत्रम्

हे भक्त जनो ! अब हम आप सबके पठनपाठनार्थ श्री गायत्री पञ्जर-स्तोत्र प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसके श्रद्धा सहित श्रवण मात्र से मनुष्य को नाना प्रकार के फल प्राप्त होते हैं तथा उसकी समस्त मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती हैं। श्री मद् देवी भागवत पुराण में वर्णित इस गायत्री पञ्जर स्तोत्र का भारी महात्म्य है तथा गायत्री साधकों के लिए ज्ञान, भोग और मोक्ष का देने वाला है, अस्तु दत्त चित्त हो पवित्र भाव से पाठ करें।

एक बार नारद जी ब्रह्मा जी के पास पहुंचे और उन्हें सादर प्रणाम कर विनयपूर्वक पूछने लगे—

नारद उवाच—

भगवन् ! देवदेवेश ? सर्वज्ञ ! करुणानिधे !
श्रोतुमिच्छामि प्रश्नेन भोग मोक्षैक साधनम् ।
ऐश्वर्यस्य समग्रस्य फलदं द्वन्द्ववर्जितम् ।
ब्रह्म हत्यादि पापघ्नं पापाद्यरि भयापहम् ।
यदेकं निष्फलं सूक्ष्मं निरञ्जनमनामयम् ।
यत्ते प्रियतमं लोके तन्मे ब्रूहि पितर्मम् ।

अर्थ—नारद जी बोले—हे भगवन् ! हे देव देवेश ! हे सर्वज्ञ ! हे करुणानिधे ! हम आप से यह पूछना चाहते हैं कि संसार में भोग तथा मोक्ष दोनों की प्राप्ति का साधन क्या है ? द्वन्द्वों से वर्जित समग्र ऐश्वर्य फल देने वाला, ब्रह्महत्यादि पापों का नाश करने वाला तथा समस्त पाप रूपी शत्रुओं का भय दूर करने वाला उपाय क्या है ? इस जगत् में निर्दोष अति सूक्ष्म तथा मायारहित आपका सर्वाधिकप्रिय कौन है, हे प्रभो ! आप मुझे कृपा कर बताइए ।

ब्रह्म उवाच—

श्रणु नारद ! वक्ष्यामि-ब्रह्म मूलं सनातनम् ।
सृष्टयादौ मन्मुखे क्षिप्तं देवदेवेन विष्णुना ।
प्रपञ्च बीज मित्याहुरुत्पत्ति-स्थिति हेतुकम् ।
पुरामया तु कथितं कश्यपाय सुधीमते ।

अर्थ—ब्रह्मा जी कहने लगे—हे नारद ! सुन ! जो सृष्टि का मूल परब्रह्म है तथा सृष्टि के आदि काल में देवाधि देव भगवान विष्णु ने जिसे मेरे मुख में प्रक्षिप्त किया था, जो प्रपञ्चभूत इस सृष्टि की उत्पत्ति का बीज तथा उसकी स्थिति का कारण है तथा जिसे मैंने पूर्वकाल में कश्यप ऋषि को बताया था ।

सावित्री पञ्जरं नामं रहस्यं निगमत्रये।
ऋष्यादिकं च दिग्वर्णं साङ्गावरणकं क्रमात।
वाहनाऽऽयुध मन्त्रास्त्रं मूर्ति-ध्यान-समन्वितम्।
स्तोत्रं श्रणु प्रवक्ष्यामि तव स्नेहाच्च नारदः।
ब्रह्म निष्ठाय देयं स्याददेयं यस्य कस्यचित्।
आचम्य नियतः पञ्चादात्म-ध्यान-पुरः सरम्।

अर्थ—वेदों में जो सावित्री पञ्जर नामक रहस्य है ऋषि, दिक्‌वर्ण, सांगावरण, वाहन, आयुध, मंत्रास्त्र, मूर्ति तथा ध्यान से युक्त है, उस स्तोत्र को सुनो। मैं पुत्रवत् तुम पर स्नेह करके कह रहा हूं। यह स्तोत्र ब्रह्म निष्ठ को ही वताना चाहिए, हर किसी को नहीं। स्तोत्र पाठ से पूर्व स्नानादि करके विधिपूर्वक आचमन करे, उपरान्त ब्रह्म स्वरूपा गायत्री का ध्यान करे।

ओमित्यादौ विचिन्तयार्थ व्योम-हेमाब्ज-संस्थितम्।
धर्मकन्द गतज्ञान मैश्वर्याष्ट दलान्वितम्।
वैराग्यं कर्णिकामीनां प्रणव-ग्रह-मध्यगाम्।
ब्रह्म वेदि समायुक्तां चैतन्यपुर मध्यगाम्।
तत्व-हंस-समाकीर्णां शब्द पीठे सुसंस्थिताम्।
नाद-बिन्दु-कलातीतां गोपुरै रूपशोभिताम्।
विद्याऽविद्यामृतत्त्वादि - प्रकारैरभि संवृताम्।
निगमार्गलसञ्छन्नां निर्गुणद्वार वाटिकाम्।

अर्थ—गायत्री का वह कैसा स्वरूप है?—कि जो प्रणव-स्वरूपा है, गगन सदृश सुवर्णमय कमल पर विराज रही है। उस कमल का धर्म रूप कन्द है, जिससे ज्ञान की उत्पत्ति होती है तथा जो ऐश्वर्यादि आठ कलाओं से युक्त है। जो वैराग्य रूपी कर्णिका पर आसीन है, प्रणव ही जिसका गृह है, जो ब्रह्मरूपी वेदी से युक्त है तथा चैतन्यपुर में निवास करती है। जो तत्व ज्ञान रूपी हंस से घिरी हुई हैं तथा शब्दपीठ पर स्थित है, नाद, विन्दु और कला से परे है। जो शब्द

ही चैतन्यपुर का गोपुर (प्रधानद्वार) है एवं विद्या-अविद्या अमृत-तत्वादि रूप प्राकार से वह चैतन्यपुर आवेष्टित है, जो वेद रूपी अर्गला से संछन्न है तथा जो निर्गुणद्वार वाली वाटिका रूप है।

चतुर्वर्गफलोपेतां महाकल्पवनैर्वृताम्।
सान्द्रानन्द सुधासिंध निगमद्वार वाटिकाम्।
ध्यान धारण योगादि तृण गुल्म लतावृत्ताम्।
सदसच्चित्स्वरूपाख्यं मृग-पक्षि समाकुलाम्।

अर्थात्—जो धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चारों वर्गों से युक्त है तथा मनुष्य को मनोवांछित फल देने वाले महाकल्प वृक्ष के वन से आवृत्त है। जो आनन्द रूपी अमृत का गहन सिन्धु, निर्गुण ब्रह्म रूपी जिसकी वाटिका का द्वार है ध्यान धारण तथा योग रूप जिसकी वाटिका के तृण गुल्म और लताएं हैं और सत्-असत् चित्तरूपी मृग और पक्षी जिसकी वाटिका में विचरण करते हैं।

विद्याऽविद्या विचारस्त्वाल्लोकाऽलोका चलावृताम्।
अविकारं-समाश्लिष्टं निज ध्यानं गुणावृत्ताम्।
पञ्चीकरणं पञ्चोत्थम् भूत-तत्वं निवेदिताम्।
वेदौपनिषदर्थाख्यं देवर्षि गण सेविताम्।
इतिहास ग्रहगणैः सदारैरभिवन्दिताम्।
गाथाप्सरोभिर्यक्षैश्च गणकिन्नर सेविताम्।
नाग सिंह पुराणाख्यैः पुरुषैः कल्प चारणैः।
कृत गानं विनोदादि कथालापनं तत्परम्।
तदित्यवाङ् मनोगम्यं तेजोरूप धरां पराम्।

अर्थात्—जो विकार रहित है, ध्यान गुणों से आवृत्त है, तथा पञ्चीकरण और पञ्चोत्थ (पंच ज्ञानेन्द्रियों से भासित होने वाला चित्त) और भूत तत्वों से ही जिसका बोध होता है। वेदोपनिषद् जिसका आख्यान करते हैं, देवर्षि गण जिसकी सेवा करते है, इतिहास, ग्रहगणै आदि जिसकी सदैव वन्दना करते हैं, अप्सराएं और यक्ष

जिसका गुणगान करते हैं, गण किन्नर जिसकी सेवा करते हैं, नाग सिह ग्रौर पुराण जिसका ग्राख्यान करते हैं, चारण रूपी कल्प पुरुष ग्रनेक प्रकार की विनोदमयी गाथाग्रों का गान करते हैं। जो वाणी ग्रौन मन से परे परम तेज स्वरूप है।

जगत प्रसवित्रीं तां सवितुः सृष्टिकारणीम्।
वरेण्यं मित्यन्नमयीं च पुरुषार्थ फलप्रदाम्।
ग्रविद्यात्वर्ण वर्ज्या च तेजोवद्गर्भ संज्ञिकाम्।
देवस्य सच्चिदानन्दः परब्रह्म रसात्मिकाम्।
धीमह्य हंस वै तद्वद ब्रह्म द्वैत स्वरूपिणीम्।
धियो यो नस्तु सविता प्रचोदयादुपासिताम्।

ग्रर्थात्—जो इस विश्व को जन्म देने वाली है तथा सूर्य की भी सृष्टि करने वाली है, जो संसार के भरणपोषण के लिए ग्रन्नमयी माता है तथा जो पुरुषार्थ का चारों प्रकार का फल प्रदान करने वाली है। जिसमें ग्रविद्या का लेशमात्र नहीं जिसका कोई रूप नहीं है, जो परम तेजोमय है, सच्चिदानन्द स्वरूप देव की जो परब्रह्म रसस्वरूपा है। इस हंसवाहिनी ब्रह्म की ग्रद्वैत स्वरूपिणी भगवती गायत्री का मैं ध्यान करता हूं। उस सविता देव की मैं उपासना करता हूं, वह हमारी बुद्धि को ग्रच्छे कार्यों में प्रेरित करें।

परोऽसौ सविता साक्षादेनो निर्हरणाय च।
परो रजस इत्यादि परं ब्रह्म सनातनम्।
ग्रापो ज्योतिरिति द्वाभ्यां पाञ्चभौतिक संज्ञकम्।
रसोऽमृतं ब्रह्म पदैस्तां नित्यां तपिनी पराम्।
भूर्भुवः सुवरित्यैतैर्निगमत्व प्रकाशिकाम्।
महर्जनस्तपः सत्यं लोकोपरि सुसंस्थिताम्।
तादृगस्या विराट् रूपं किरीटं वरराजिताम्।
व्योम केशालकाकाशं-रहस्यं प्रवदाम्यहम्।

अर्थात्—जो पापों के अन्धकार को मिटाने के लिए सविता (सूर्य) स्वरूपा है, जो रजोगुण से परे सनातन परब्रह्मरूप है, आपो ज्योति रूपों में इस जगत में पंचभूत शरीर में विद्यमान है, रसोऽमृत रूप से जो ब्रह्म में विराजमान है, जो नित्य सूर्यरूपा है, भूर्भुवः स्वः इन तीनों लोकों के समस्त पदार्थों को प्रकाशित करने वाली है तथा महः जनः तपः और सत्यलोक से भी ऊपर विराजमान है। सुन्दर किरीट से सुशोभित है जिसका विराट् स्वरूप इस संसार में दिखाई दे रहा है, उस व्योम केशा भगवती का रहस्य वर्णन करता हूँ।

मेघ भृकुटिकाक्रान्तं विधि विष्णु शिवार्चिताम्।
गुरु भार्गव कर्णान्तां सोम-सूर्याऽग्निलोचनाम्।
इडा पिङ्गल-सूक्ष्माभ्यां वायु नासा पुटान्विताम्।
सन्ध्या द्विरोष्ठ पुटितांलसद्-वाग्-भूप-जिह्विकाम्।
सन्ध्यांसौ द्यु मणे कण्ठलसद् वाहु समन्विताम्।
पर्जन्यं हृदयासक्तं वसु-सुस्तन-मण्डलाम्।
आकाशोदर वित्रस्त नाभ्यवान्तर देशकाम्।
प्राजापत्याख्य जघनां कटीन्द्रानीति संज्ञिकाम्।
उरु मलय मेरुभ्यां शोभमानाऽसुरद्विषम्।
जानुनी जह्नुकुशिक वैश्वदेव सदा भुजाम्।
अयनद्वय जंघाद्य खुराद्य पितृ संज्ञिकाम्।
पदांघ्रि नख रोमाद्य भूतल द्रुमलाञ्छिताम्।

अर्थात्—बादल जिसकी सुन्दर भौंहें हैं ब्रह्मा विष्णु और शिव भी जिसकी अर्चना करते हैं, गुरु और भार्गव जिसके कर्ण हैं, चन्द्र तथा सूर्य जिसके नेत्र हैं, सूक्ष्म इडा, पिङ्गला ही जिसकी नासिका के छिद्र हैं, दोनों सन्ध्याए जिसके ओष्ठ हैं, वाणी जिनकी जिह्वा के समान शोभित है, संध्याएं जिसके स्कन्ध प्रदेश हैं, द्यु मणि सूर्य जिसके कण्ठ हैं, पर्जन्य ही जिसका हृदय है, वसु ही जिसके मनोहर स्तन

मण्डल हैं। आकाश जिसका नाभि से अवान्तर प्रदेश तक व्याप्त उदर है, प्रजापति ही जिनके जघन हैं, इन्द्रियाँ ही जिसका कटि प्रदेश हैं, मलयव मेरु जिसके उरु हैं, जन्हु तथा कुशिक जिसके जानु हैं, तथा वैश्व देव ही जिसकी भुजाएं हैं। दोनों अयन ही जिसकी जंघाएं हैं, देवता और पितर ही जिसके दो चरण हैं, पृथ्वी के समस्त वृक्ष ही जिसके नख तथा रोम हैं।

ग्रह-राश्यृक्ष-देर्वापि मूर्ति च पर संज्ञिकाम्।
तिथि मासर्तु वर्षाख्यं सुकेतु निमिषात्मिकाम्।
अहोरात्रार्द्ध मासाख्यां सूर्याचन्द्रमसात्मिकाम्।
माया कल्पित वैचित्र्य सन्ध्याच्छादन संवृताम्।
ज्वलत्त् कालानल प्रख्यां तडित्कोटि समप्रभाम्।
कोटि सूर्य प्रतीकाशां चन्द्रकोटि सुशीतलाम्।
सुधामण्डल मध्यस्थां सादानन्दाऽमृतात्मिकाम्।
प्रागतीतां मनोरम्यां वरदां वेदमातरम्।
चराऽचरमयीं नित्यां ब्रह्माक्षर समन्विताम्।
ध्यात्वा स्वात्मनि भेदेन ब्रह्म पञ्जर मारभेत्।

अर्थात्—जिस संज्ञापरक देव की ग्रह, नक्षत्र, राशि, तथा दैवर्षि ही मूर्तियाँ है, तिथि, मास, ऋतु, वर्ष तथा निमिष ही जिसके सुन्दर केतु है, दिन रात तथा पक्ष जिसके नाम हैं, सूर्य और चन्द्र जिसकी आत्मा है, माया से कल्पित विचित्र संध्या हीजिसका आवरण है, जो प्रज्ज्वलित महा कालाग्नि के समान प्रचण्ड है, करोड़ों विद्युत के समान दैदीप्यमान जिसके शरीर की आभा है, करोड़ों सूर्यों के समान जो तेजस्वी है और करोड़ों चन्द्रमाओं के समान जो शीतल है, जो सुधा मण्डल के मध्य निवास करती है तथा गहन आनन्दामृत सागर के सदृश है, सृष्टि के आदि काल से ही जो विद्यमान है, अत्यन्त मनोरम छवि से युक्त है, मनोवांछित वर की देने वाली है

तथा वेदों की साक्षात् माता है। यह चराचर जगत ही जिसका स्वरूप है, जो नित्य तथा ब्रह्माक्षर स्वरूप है। इस प्रकार का भगवती का विराट् और कलात्मक स्वरूप ध्यान में धारण कर पश्चात् ब्रह्मपञ्जर स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

पञ्जरस्य ऋषिश्चाऽहं छन्दो विकृति रुच्यते।
देवता च परो हंसः परब्रह्माऽधि देवता।
प्रणवो बीज शक्तिः स्यादों कीलक मुदाहृतम्।
तत्तत्वं धीमहि क्षेत्रं धियोऽस्त्रं यः परं पदम्।
मन्मयापो ज्योतिरिरिति यो निर्हंसः सबन्धकम्।
विनियोगस्तु सिद्ध्यर्थं पुरुपार्थ चतुष्टये।
ततस्तैरङ्गषट्कं स्यात्तै देव व्यापकत्रयम्।
पूर्वोक्त देवतां ध्यायेत् साकार गुण संयुताम्।

अर्थात्—इस पञ्जर स्तोत्र का ऋषि मैं हूं, विकृति इसका छन्द है, परब्रह्म ही इसका अधिदेव है, हंस इसका देवता है। प्रणव बीज शक्ति है तथा 'ॐ' इसका कीलक है, 'तत्' इसका तत्व है, 'धीमहि' क्षेत्र है, 'धियः' इसका अस्त्र है, 'यः' इसका पद है, 'आपोज्योति' इसका मन्त्र है. हंस योनि है, पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि ही गायत्री पञ्जर स्तोत्र पाठ का विनियोग है। उपरान्त अंगन्यास व करन्यास करे, फिर व्यापकादि तीन मुद्राएं प्रदर्शित करे तथा गुण और आकार सहित पूर्वोक्त देवता का स्मरण करता हुआ भगवती गायत्री का ध्यान करे।

पञ्चवक्त्रां दशभुजां त्रिपञ्च नयनैर्युताम्।
मुक्ता विद्रुम सौवर्णा सितशुभ्र समाननम्।
वाणीं परां रमां मायां चामरैर्दपणैर्युताम्।
षडङ्गदेवतामंत्रै रूपा द्यवयवात्मिकाम्।
मृगेन्द्र वृषपक्षीन्द्र मृग हंसासने स्थिताम्।
अर्द्धेन्दुवद्ध मंकुटं किरीटं मणि कुण्डलाम्।

रत्नताटङ्क माङ्गल्यं परग्रैवेय नूपुराम् ।
अङ्गलीयक केयूर कङ्कणाद्यैरलङ्कृताम् ।
दिव्यस्त्रग्वस्त्र संछन्न रविमण्डल मध्यगाम् ।
वराऽभयाऽब्ज युगलां शंखचक्र गदाऽङ्कुशान् ।
शुभ्र कपालं दधतीं वहन्ती यक्ष मालिकाम् ।
गायत्रीं वरदां देवीं सावित्रीं वेदमातरम् ।

अर्थात्—जो भगवती गायत्री पांचमुखों वाली दशभुजाओं वाली, पन्द्रहनेत्रों वाली है, जिसके पांचों मुख मोती, मूंगा, सुवर्ण सित तथा शुभ्र हैं सरस्वती, रमा, माया, चामर और दर्पण से युक्त हैं, षडङ्ग देवता तथा मंत्रों से जिसके रूपादि अवयवों का बोध होता है, जो दुर्गा रूप में सिंह पर, महेश्वरी रूप में बैल पर, वैष्णवी रूप में गरुड पर तथा ब्रह्माणी रूप में हंस पर सवार है । अर्द्धचन्द्र से युक्त जिसका मुकुट एवम् किरीट है, तथा मणियों से जिसके कुण्डल शोभायमान हैं, जो रत्न जटितवाला अंगूठी और बाजूबन्द कङ्कण आदि अलङ्कारों से शोभित है, अनेक दिव्य मालाओं तथा वस्त्रों को धारण किए रविमण्डल में जो निवास कर रही है, वर, अभय, कमलयुगल, शंख, चक्र, गदा, अङ्कुश, शुभ्रकपाल, तथा बुद्धि को प्रेरणा देने वाली वेद माता देवी गायत्री का ध्यान करना चाहिए ।

आदित्य पथगामिन्यां स्मरेद् ब्रह्मस्वरूपिणीम् ।
विचित्र मंत्र-जननीं स्मरेद् विद्यां सरस्वतीम् ।

अर्थात्—सूर्य पथ गामिनी, विभिन्न मंत्रों की जननी, ब्रह्मा-स्वरूपिणी भगवती देवी सरस्वती का स्मरण करना चाहिए ।

त्रिपदा ऋङ्मयी पूर्वामुखी ब्रह्मास्त्र संज्ञिका ।
चतुर्विंशति तत्त्वाख्या पातु प्राचीं दिशं मम् ।
चतुष्पाद यजुर्ब्रह्मदण्डाख्या पातु दक्षिणाम् ।
षट्त्रिंशतत्त्व युक्ता सापातु मे दक्षिणां दिशम् ।

प्रत्यङ्मुखी पञ्चपदी पञ्चाशत्तत्त्वरूपिणी ।
पातु प्रतीचीमनिशं सामब्रह्म शिरोऽङ्किता ।
सौम्या ब्रह्म स्वरूपाख्या साथर्वाङ्गिरसात्मिकाम् ।
उदीचीं षट्पदा पात चतुष्षष्टि-कलात्मिका ।

अर्थात्—पुर्वामुखी त्रिपाद ऋचा संयुक्ता, ऋगवेद स्वरूपा चौबीस तत्वों से परिपूर्ण ब्रह्मरूप संज्ञिका भगवती पूर्व दिशा में हमारी रक्षा करें। चार पादवली दक्षिणाभिमुखी यजुर्वेद स्वरूपा छत्तीस तत्वों से युक्त ब्रह्मदण्ड संज्ञिका भगवती दक्षिणदिशा में हमारी रक्षा करें। पश्चिमाभिमुखी पंचपदा, पचास तत्वों से संयुक्ता, सामदेव स्वरूपा, ब्रह्मशीर्ष संज्ञिका भगवती पश्चिम दिशा में हमारी रक्षा करें। परम सौम्य रूपा, उत्तराभिमुखी, षट्पदा, चौंसठ कला संयुक्ता अथर्ववेद स्वरूपा, ब्रह्म स्वरूप संज्ञिका भगवती उत्तर दिशा में हमारी रक्षा करें।

पञ्चाशत्तत्त्वरचिता भवपादा शताक्षरी ।
व्योमाख्या पातु मे चोर्ध्वां दिशं वेदाङ्ग संस्थिता ।
विद्युन्निभा ब्रह्मसंज्ञा मृगारूढा चतुर्भुजा ।
चापेषुचर्माऽसिधरा पातु मे पावकीं दिशम् ।
ब्राह्मी कुमारी गायत्री रक्ताङ्गी हंसवाहिनी ।
बिभ्रत्कमण्डलाक्ष सक्स्रवान मे पातु नैऋतीम् ।
चतुर्भुजा वेदमाता शुक्लाङ्गी वृषवाहिनी ।
वराभय कपालाक्ष स्रग्विणी पातु वारुणीम् ।
श्यामा सरस्वती वद्धा वैष्णवी गरुडासना ।
शंखाराब्जा भयकरा पातु शैवी दिशं मम ।
चातुर्भुजा वेदमाता गौराङ्गी सिंहवाहनी ।
वराऽभयाऽब्ज युगलैर्भुजैः पात्वधरां दिशम् ।

अर्थात्—पचास तत्वों में संयुक्त, ग्यारह पद वाली, शताक्षरी, वेदाङ्गों में अवस्थित, व्योमविहारिणी भगवती हमारी ऊपर से रक्षा

करें। विद्युत आभा से दैदीप्यमान् चार भुजाओं वाली, मृग वाहिनी धनुषवाण ढाल तथा तलवार धारण करने वाली ब्रह्म संज्ञिका देवी भगवती आग्नेय कोण में हमारी रक्षा करें। रक्तवर्णा, हंसवाहिनी, कमण्डलु, अक्ष माला स्रक तथा स्रुवा धारिणी कौमार्या, ब्रह्मशक्ति रूपिणी भगवती गायत्री नैऋर्त्य कोण में हमारी रक्षा करें। चार-भुजाओं वाली शुभ्र वर्णाङ्गी, वृषभवाहिनी, वर, अभय, कपाल, अक्षमाला आदि धारण करनेवाली वेदमाता भगवती वायव्यं कोण में हमारी रक्षा करें। श्यामवर्ण प्रौढावस्था धार्या, गरुडवाहिनी, वर शंख, असि, अब्ज तथा अभय धारिणी, वैष्णवी स्वरूपिणी भगवती सरस्वती ईशान कोण में हमारी रक्षा करें। चारभुजा धारिणी गौर-वर्ण, सिंह वाहिनी वेदमाता, वर, अभय तथा कमलयुग्म हाथों में धारण किए देवी भगवती नीचे की ओर हमारी रक्षा करें।

तत्तत्पार्श्व स्थिताः स्व-स्ववाहनायुधभूषणः।
स्वः-स्वदिक्षु स्थिताः पान्तु ग्रहशम्त्यङ्ग देवताः।
मंत्राधि देवता रूपा मुद्राधिष्ठान देवताः।
व्यापकत्वेन पात्वस्यानापहत्तल मस्तकः।

अर्थात्——अपनी-अपनी दिशाओं की स्वामिनी अपने २ वाहन आयुध तथा भूषणों से सुसज्जित अपने २ ग्रहों देवताओं की शक्तियों सहित उन दिशाओं में हमारी रक्षा करें। मंत्रों के अधिदेवता स्वरूप मुद्राओं के अधिष्ठान देवता अपने २ व्यापक रूपों सहित पैर के तलुवे से लेकर मस्तक पर्यन्त हमारी रक्षा करें।

तत्पदं मे शिरः पातु भालं मे सवितुः पदम्।
वरेण्यं मे दृशौ पातु श्रुतौ भर्गः सदा ममं।
घ्राणं देवस्य मे पातु पातु धीमहि मे मुखम्।
जिह्वां मम धियः पान्तु कण्ठ मे पातु यः पदम्।

नः पदं पातु मे स्कन्धौ भुजौ पातु प्रचोदयात् ।
करौ मे च परः पातुः पादौ मे रजसेवतु। ।
असौ मे हृदयं पातुः मम मध्यमदाऽवतु ।
ॐ मे नाभि सदा पातु कटि मे पातु मे सदा ।
ओं मापः सम्धिनी पातु गुह्यं ज्योतिः सदा मम ।
उरू मम रसः पातु जानुनी अमृतं ममं ।
जंघे ब्रह्म पदं पातु गुल्फौ भूः पातु मे सदा ।
पादौ मम भुवः पातु स्वः पात्वखिलं वपुः ।
रोमाणि मे महः पातु रोमकं पातु मे जनः ।
प्राणांश्च धातुतत्त्वानि तदीशः पातु मे तपः ।
सत्यं पातु मयायूंषि हंसो बुद्धि च पातु मे ।
शुचिषत् पातु मे शुत्रं वसुः पातु श्रियं ममं ।
मति पात्वन्तरिक्षसद्धोता दन्तं च पातु मे ।
वेदिषत् पातु मे विद्यामतिथिः पातु मे गृहम् ।
घर्मं दुरोणसत्पातु नृषत्पातु मे सुतान मम ।
वरसत्पातु मे भार्यामृत सत्पातु मे सुतान् ।
व्योमसत्पातु मे बन्धू भ्रातृनब्जाश्च पातु मे ।
पशुन मे पातु गोजाश्चं ऋतजाः पातु मे भवम् ।
सर्व मे अद्रिजाः पातुः यानं मे पात्वृतं सदा ।
अनुक्त मथ यत् स्थानं शरीरेऽतर्वहिश्चयत् ।
सत्सर्व पातु मे नित्यं हंसः सौऽहमर्मनिशम् ।

अर्थात्– 'यत्' पद हमारे सिर की, 'सवितुः' पद हमारे मस्तक की, 'वरेण्य' पद नेत्रों की तथा 'भर्गः' पद हमारे कर्णों की रक्षा करें। 'देवस्य' हमारी नासिका की, 'धीमहि' हमारे मुख की 'धियः' जिह्वा की और 'य' पद हमारे कण्ठकी रक्षा करें। 'नः' पद कन्धों 'प्रचोदयात्' भुजाओं की 'परः' हाथों की तथा 'रज से' हमारे पैरों की रक्षा करें। 'असौ' हमारे हृदय की ॐ हमारी

नाभि की तथा 'मे' पद हमारी कटि की रक्षा करें। 'ॐ आपः घुटनों की, ज्योतिः' हमारे गुह्यङ्गों की 'रसः' हमारे उरूकी 'अमृत' हमारे जानु की ब्रह्मपद' हमारी जाँघों की, तथा 'भू'पद हमारे गुल्फ प्रदेश की, भुवः पैरों की तथा स्वः सम्पूर्ण शरीर की रक्षा करे। 'महः' हमारे रोम की, 'जनः' केशों की तपः' प्राण, मुख धातु, और जीव की तथा 'सत्य' हमारी आयु की व हंसः' हमारी बुद्धि की रक्षा करें। 'शुचिषत्' हमारे शुक्र की रक्षा करे, 'वसु' हमारे श्री की, 'अन्तरिक्ष' हमारी सुमति की तथा 'होता' हमारे दन्त-समूह की रक्षा करे। 'वे दिषत' हमारी विद्या की, 'अतिथि' हमारे घर की, दुरोणसंत्' हमारे धर्म की और 'नृषत' हमारे पुत्रों की रक्षा करे। 'वरसत्' हमारी धर्मपत्नी की 'ऋत सत' हमारी सन्तान की व्योम सत्' हमारे भाइयों की तथा 'अन्जा' हमारे समस्त वन्धुवान्धवादि की रक्षा करें। 'गोजा हमारे पशुओं की 'ऋतजा' हमारे जन्मकी, अद्रिजा हमारे सर्वस्व की तथा ऋत् हमारे वाहनादि की रक्षा करें। शरीर के बाह्य अथवा अभ्यन्तरीय स्थानों में से जिन २ स्थानों के लिए इस रक्षा कवच में निवेदन नहीं किया गया हो, उन २ स्थानों की 'हंस' तथा 'सोऽहं' रक्षा करें।

इदं तु कथितं सम्यङ् मया ते ब्रह्मपञ्जरम्।
सन्ध्ययो प्रत्यहं भक्त्या जपकाले विशेषतः।
धारयेद् द्विजवर्यो यः श्रावयेद् वा समाहिताः।
स विष्णुः स शिवः सोऽहं सोऽक्षरः स विराट्स्वराट्
शताक्षरात्मकं देव्या नामाऽष्टाविंशतिः शतम्।
शृणु, वक्ष्यामि तत्सर्वं मतिगुह्यं सनातनम्।

अर्थात्—ब्रह्माजी ने नारद से कहा—यह ब्रह्म पञ्जर नामक स्तोत्र मैंने तुम्हें सुनाया। जो द्विजवर भक्ति पूर्वक दोनों सन्ध्या-कालीन जप सहित इसका पाठ करते हैं, अथवा किसी को सुनाते हैं,

वे विष्णु शिव, पर ब्रह्म अक्षर तथा स्वयं विराट रूप बन जाते हैं, अर्थात् परम पद को प्राप्त होते हैं। अब हम भगवती का शताक्षर मन्त्र तथा एक सौ अट्ठाइस नाम जो कि अत्यन्त गुप्त और सनातन हैं, तुम से वर्णन करता हूँ, सो हे नारद ! तुम उसे ध्यान पूर्वक सुनो।

भूतिदा, भुवना, वाणी, वसुधा, सुमना, मही।
हरिणीं, जननी, नन्दा, सविसर्गा, तपस्विनी।

पयस्विनी, सती, त्यागा, चैन्दवी, सत्यवीरसा।
विश्वा, तुर्या, षरा, रेच्या, निर्घृणी, यमनी भवा।

गोवेद्या च जरिष्ठा च स्कन्दिनी, धीर्मतिर्हिमा।
भीषणा, योगिनी, पक्षी, नदी, प्रज्ञा च चोदिनी।

धनिनी, यामिनी, पद्मा, रोहिणी, रमणीं, ऋषिः।
सेनामुखी, सामयी च बकुला, दोष वर्जिता।

सर्व काम दुधा, सोमोद्भवाऽहंकार वर्जिता।
द्विपदा च चतुष्पादा त्रिपदा चैव षट्पदा।

अष्टापदी नवपदी सा सहस्राक्षरात्मिका।
इदं यः परमं गुह्यं सावित्री मंत्र पञ्जरम्।

नामाष्ट विंशति शतं श्रणु याच्छ्रवयेत् पठेत्।
मर्त्यानाममृतत्त्वाय भीतानाम भयाय च।

मोक्षाय च मुमुक्षूणाँ श्री कामनांश्रिये सदा।
विजयाय युयुत्सूनां व्याधि तानामरोग कृत्।

वश्याय वश्य कामनां विद्याये वेदकामिनाम्।
द्रविणाय दारिद्राणां पापिनां पाप शान्तये।

वादिनां वादिविजये कवीनां कविताप्रदम्।
अन्नाय क्षुधितानां च स्वर्गाय नाकमिच्छताम्।

पशुभ्यः पशुकामानां पुत्रेभ्याः पुत्रकांक्षिणाम् ।
क्लेशिनां शोक शान्त्यर्थं नृणा शत्रुभयाय च ।
राजवश्याय द्रष्टव्यं पञ्जर नृप से विनाम् ।
भक्त्यर्थं विष्णु भक्तानां विष्णौ सर्वान्तरात्मनि ।

अर्थात्—भूतिदा, भुवना, वाणी वमधा, सुमना मही, हरिणी, जननी नन्दा, सविसर्गा, तपस्विनी, पयस्विनी, सती, त्यागा, ऐन्दवी, सत्यवीं, रसा, विश्वा, तुर्या, परा, रेच्या, निर्घृणी, यामिनी, भवा, गोवेद्या जरिष्ठा, स्कन्दिनी धी, मति, हिमग, भीपणा, योगिनी, पक्षी, नदी, प्रज्ञा चोदिनी, धनिनी, यामिनी, पद्मा, रोहिनी, रमणी ऋषि सेना मुखी, सामयी, वकुला, दोषवर्जिता, सर्व कामदुधा, सोमोद्भवा, अहंकार वर्जिता, द्विपदा, चतुष्पदा, त्रिपदा, पट्पदा, अष्ट पदी, नवपदी, सहस्त्राक्षरात्मिका इत्यादि भगवती वे जो एक सौ अट्ठाइस नाम हैं इन नामों सहित सावित्री पञ्जर का पठन श्रावण व श्रवण मृत्योन्मुख को अमर करने वाला तथा भयभीतों को भयमुक्त करने वाला होता है। मुमुक्षुओं को मोक्ष प्राप्ति के लिए, लक्ष्मी के आकांक्षियों को धन प्राप्ति के लिए, वीरों की विजय के लिए, व्याधिग्रस्तों को व्याधि निवारण के लिए इसे पढ़ना अथवा सुनना सुनाना चाहिए वशीकरण की इच्छा रखने वालों को वशीकरण के लिए विद्यार्थियों को विद्याप्राप्ति के लिए, दीनों को द्रव्य प्राप्ति के हेतु तथा पापियों को पापनिवारण के लिए, शास्त्रार्थी को शास्त्रार्थ विजय के लिए, कवियों को कविता प्राप्ति के लिए भूखों को अन्न के हेतु तथा स्वर्गाकांक्षी को स्वर्ग प्राप्ति के हेतु पठन-पाठन तथा श्रवण-श्रावण करना चाहिए सावित्री पञ्जर स्तोत्र का पाठ पशुधन के अभिलाषियों को पशु देने वाला, पुत्र की आकांक्षा रखने वालों को पुत्र प्राप्त कराने वाला, दुखियों के सब दुख दूर करने वाला, भयभीतों का शत्रु भय दूर करने वाला, राज सेवकों को राजा की कृपा दिलाने वाला और विष्णु भक्तों को सर्वान्तर्यामी विष्णु में सतत् भक्ति उत्पन्न कराने वाला है।

नायकं विधि मृष्टानां शान्तये भवति ध्रुवम् ।
निस्पृहाणां नृणां मुक्तिः शाश्वति भवति ध्रुवम् ।
जप्यं त्रिवर्ग संयुक्तं गृहस्थेन विशेषतः ।
मुनीनां ज्ञानसिद्ध्यर्थं यतीनां मोक्षसिद्धये ।
उद्यन्तं चन्द्र किरणमुपस्थाय कृताञ्जलिः ।
कानने वा स्वभवने तिष्ठञ्छुद्धो जपेदिदम् ।
सर्वान् कामानवाप्नोति तथैव शिव सन्निधौ ।
मम प्रीति करं दिव्यं विष्णु भक्ति-विवर्द्धनम् ।
ज्वरार्तानां कुशाग्रेण मार्जयेत् कुष्ठरोगिणाम् ।
अङ्ग मङ्ग यथा लिङ्गं कवचेन तु साधकः ।

अर्थात्—गृहस्थों के लिए यह सावित्री पञ्जर स्तोत्र शान्ति देने वाला और काम क्रोधादि से निःस्पृह मुनियों को मुक्ति देने वाला है, यह ध्रुव की भांति शाश्वत है। विशेषकर गृहस्थों को त्रिवर्ग संयुक्त इसका पाठ करना चाहिए। इस स्तोत्र का पाठ करने से मुनियों को ज्ञान की सिद्धि होती है तथा यतियों को मोक्ष प्राप्त होता है।

चन्द्र किरण के उदय होने पर भगवती सावित्री का उपस्थान कर अपने घर, जंगल अथवा शिवमन्दिर में शुद्ध व पवित्र मन शरीर से हाथ जोड़कर इस सावित्री पञ्जर का पाठ करने से मनुष्य की समस्त मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती हैं तथा मेरी (ब्रह्मा) और भगवान विष्णु दोनों की कृपा प्राप्त होती है। इस कवच का साधक यदि कुशा द्वारा कोढ़ी अथवा ज्वरग्रस्त के अङ्ग प्रत्यङ्ग पर मार्जन करे, तो निश्चय ही रोगी रोगमुक्त हो जाता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

मण्डलेन विशुद्ध्येत सर्व रोगैर्न संशय !
मृत प्रजा च या नारी जन्मवन्ध्या तथैव च ।

कन्यादि वन्ध्या या नारी तासामङ्ग प्रमार्जयेत् ।
पुत्राः न रोगिणास्तास्तु लभन्ते दीर्घ जीविनः ।
तास्ताः संवत्सरादर्वाग् गर्भ तु दधिरे पुनः ।
पति विद्वेषिणी या स्त्री अङ्ग तस्याः प्रमार्जयेत् ।
तमेव भजते सा स्त्री पतिं कामवशं भवेत् ।
अश्वत्थे राजवश्यार्थं विल्वमूले स्वरूपभाक् ।
पालाश मूले विद्यार्थी तेजसाभि मुखो रवौ ।
कन्यार्थी चन्डिकागेहे जपेच्छत्रुभयाय च ।
श्री कामो विष्णु गेहे च उद्याने श्रीवंशी भवेत् ।
आरोग्यार्थे स्वगेहे च मोक्षार्थी शैलमस्तके ।
सर्व कामो विष्णु गेहे मोक्षार्थी यत्र कुत्र चित् ।
जपारम्भे तु हृदयं जपान्ते कवचं पठेत् ।
किमत्र बहुनोक्तेन शृणु नारद ! तत्त्वतः ।
यं यं चिन्तयते नित्यं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ।

अर्थात्—जिस स्त्री का पुत्र होकर मर जाता हो अथवा जो जन्म से ही बांझ हो अथवा जिसके कन्याएं ही उत्पन्न होती हों अथवा जिसकी सन्तान दीर्घजीवी न होती हो, उन्हें इस स्तोत्र द्वारा मार्जन करने पर दीर्घजीवी पुत्र प्राप्त होते हैं। काकवन्ध्यादि सभी प्रकार की स्त्रियां इस कवच का पाठ करने या मार्जन करने से एक वर्ष के भीतर ही गर्भवती हो जाती हैं। जिस स्त्री का पति उससे प्रेम न करता हो, उस स्त्री के अङ्ग प्रत्यङ्ग पर इस कवच से मार्जन करने से पति कामवश हो उस स्त्री से प्रेम करने लग जाता है।

राजा को वश में करने के लिए पीपल के वृक्ष के नीचे, रूप प्राप्ति के हेतु विल्व वृक्ष के नीचे, विद्या धन प्राप्त करने के लिए पलाश के नीचे, तेज प्राप्त करने के लिए सूर्य के सम्मुख, कन्या

प्राप्ति वा शत्रु को भयातुर करने के लिए काली देवी के मन्दिर में बैठकर इस कवच स्तोत्र का पाठ करना चाहिए धन प्राप्ति के लिए भगवान विष्णु के मन्दिर में, शोभा प्राप्ति के लिए उद्यान में, स्वास्थ्य लाभ के लिए घर में तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए पर्वत की चोटी पर इसका पाठ करना चाहिए। अन्य समस्त कामनाओं की सिद्धि के लिए विष्णु मन्दिर में तथा मोक्षाभिलाषी कहीं भी इसका पाठ कर सकता है। साधक को चाहिए कि गायत्री जप के पूर्व गायत्री हृदय का पाठ करे और जप के उपरान्त गायत्री कवच का पाठ करे।

हे नारद ! अधिक क्या कहूं, वस्तुत: मनुष्य जिन २ कामनाओं की इच्छा करता है, वह सब इस गायत्री पञ्जर स्तोत्र के पठनपाठन से प्राप्त होती हैं। इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

इति श्री वशिष्ठ संहितोक्त गायत्री पञ्जर स्तोत्रम सम्पूर्णम्

★ अथ गायत्री हृदयम् ★

विनियोग मन्त्र—

ॐ अस्य श्री गायत्री हृदयस्य नारायण ऋषिः गायत्रीच्छन्दः, परमेश्वरी गायत्री देवता, गायत्री हृदयम् जपे विनियोगः।

द्यौर्मूर्ध्नि दैवतम्। दन्तपंक्ता वश्विनौ। उभे सन्ध्ये चोष्ठौ। मुख मग्निः। जिह्वा सरस्वती। ग्रीवायां तु बृहस्पतिः। स्तनयोर्वसवोऽष्टौ। बाह्वोर्मरुतः। हृदये पर्जन्यः। आकाश मुदरम्। नाभावन्तरिक्षम्। कट्योरिन्द्राग्नी। जघने विज्ञानघनः प्रजापतिः। कैलाश मलये उरः। विश्वे देवा जान्वोः। जङ्घायां कौशिकः। गुह्यमयने। उरू पितरः। पादौ पृथ्वी। वनस्तपतयोऽङ्गुलिषु। ऋषयोरोमाणि। नखानि मुहूर्त्तानि। बस्थिषु ग्रहाः। असृङ् मांसम् ऋतवः संवत्सरा वै निमिषम्। अहो रात्रावादित्यश्चन्द्रमाः। प्रवरां दिव्यां गायत्रीं सहस्रनेत्रां शरणमहं प्रपद्ये।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्याय नमः । ॐ तत्पूर्वा जयाय नमः । तत्प्रातरा-
दित्याय नमः । तत्प्रातरादित्य प्रतिष्ठायै नमः ।

प्रातर धीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायमधीयानो दिवस
कृतं पापं नाशयति । सायंप्रातर धीयानोऽपापो भवति । सर्वतीर्थेषु
स्नातो भवति । अभक्ष्य-भक्षणात् पूतो भवति । अभोज्य भोजनात्
पूतो भवति । अचोष्य-चोषणात् पूतो भवति । असाध्य-साधनात पूतो
भवति । दुष्प्रति ग्रह–शत सहस्रात् पूतो भवति । सर्व प्रतिग्रहात् पूतो
भवति । पंक्ति दूषणात् पूतो भवति । अमृतवचनात् पूतो भवति ।
अथाऽब्रह्मचारी ब्रह्मचारो भवति । अनेन हृदयेनाऽधीतेन ऋतुसहस्रे-
णेष्टं भवति । षष्टि शत सहस्र गायत्र्या जप्यानि फलानि भवन्ति ।
अष्टौ ब्रह्मणान् सम्यग् ग्राहयेत् । तस्य सिद्धिर्भवति ।

य इदं नित्यमधीयानो ब्राह्मणः प्रातः शुचिः सर्व पापैः प्रमुच्यते,
इति ब्रह्मलोके महीयते । इत्याह भगवान श्री नारायणः ।

इति श्री देवी भागवत पुराणोक्तं गायत्री हृदयम् सम्पूर्ण

गायत्री अष्टोत्तर सहस्त्र नाम स्तोत्रम्

सुहृद पाठकगण ! अब हम आपकी सेवा में श्रीमद् देवी भागवत पुराण के बारहवें स्कन्ध में वर्णित सर्वफल प्रदायक भगवती गायत्री का सहस्राष्टक नाम-स्तोत्र वर्णन करते हैं, जिसका पाठ करने से उपासकों को समस्त भौतिक व आध्यात्मिक सुख प्राप्त होते हैं ।

कहते हैं, कि एक बार मुनियों में श्रेष्ठ श्री नारद जी भगवान विष्णु के पास पहुँचकर उनसे प्रार्थना करने लगे—

नारद उवाच—

भगवन् ! सर्वधर्मज्ञ ! सर्वशास्त्र विशारदः ।
श्रुति-स्मृति पुराणानां रहस्यं त्वन्मुखाच्छ्रुतम् ।
सर्व पापहरं देव ! येन विद्या प्रवर्तते ।
केन वा ब्रह्म विज्ञानं किं नु वा मोक्ष साधनम् ?
ब्राह्मणानां गतिः केनः केन वा मृत्युनाशनम् ?
ऐहिकाऽऽमुष्मिकं फलं केन वा पद्मलोचनम् !
वक्तुमर्हस्यशेषेण सर्वं निखिलमादितः

अर्थात्—हे भगवान ! हे समस्त धर्मों के ज्ञाता ! हे सब शास्त्रों के विशारद ! आपके श्री मुख से मैंने श्रुति स्मृति और पुराणों के तत्व को सुना । हे देव ! वह कौन सी विद्या है, जो सब पापों का नाश करती है? ब्रह्मज्ञान तथा मोक्ष का साधन क्या है । हे पद्मलोचन भगवन् ! ब्राह्मणों की उत्तम गति किस प्रकार से हो सकती है ? इहलोक और परलोक का फल किस प्रकार प्राप्त होता है । आप ही इस रहस्य पर प्रकाश डालने में सर्वथा सक्षम हैं, सो आप मुझे इस तत्व को बतलाइए ।

श्री नारायण उवाच—

साधु साधु महाप्राज्ञ सम्यक् पृष्ठं त्वयाऽनघ ।
शृणु वक्ष्यामि यत्नेनं गायत्र्याष्ट सहस्रकम् ।
नाम्नां शुभानां दिव्यानां सर्व पाप विनाशनम् ।
सृष्टयादौ यद् भगवता पूर्व प्रोक्तं ब्रवीमि ते ।
शष्टोत्तर सहस्त्रस्य ऋषिर्ब्रह्मा प्रकीर्तितः ।
छन्दोऽनुष्टुप तथा देवी गायत्री देवतास्मृता ।
हलो बीजानितस्यैव स्वराः शक्तयः ईरिताः ।
अङ्ग न्यास करन्यासाबुच्ये तै मातृकाक्षरैः ।
अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि साधकानां हिताय वै ।

अर्थात्—भगवान श्री नारायण बोले—हे नारद ! आपने मुझसे अत्यंत उत्तम प्रश्न किया है, सो मैं परम शुभ, दिव्य और समस्त पापों का विनाश करने वाला गायत्री के एक हज़ार आठ नामों वाला स्तोत्र वर्णन करता हूं, जिसे आप ध्यानपूर्वक सुनिए :—

सृष्टि के आदि काल में जैसा कि पहले भगवान ने कहा है, इस अष्टोत्तर सहस्र स्तोत्र के ऋषि ब्रह्मा हैं: अनुष्टुप छन्द है, गायत्री देवता है, हलन्त अक्षर ही बीज मंत्र है, इसमें सात स्वर शक्तिस्वरूप हैं, मातृका के छः अक्षर ही अंगन्यास व करन्यास के रूप में हैं ।

अब मैं साधकों के कल्याण के लिए भगवती गायत्री का ध्यान स्वरूप वर्णन करता हूं ।

ध्यान-स्वरूप—

रक्तश्वेत हिरण्य नील धवलैर्युक्तां त्रिनेत्रोज्ज्वलां ।
रक्तां रक्त नवस्रजां मणिगणैर्युक्तां कुमारीमिमाम् ।
गायत्रीं कमलासनां करतल व्यानद्ध कुण्डलाम्बुजां ।
पदमाक्षीं च वरस्रजं च दधतीं हंसाधिरूढ़ां भजे ।

अर्थात्–जो लाल, श्वेत, स्वर्णवर्ण, नीले तथा धवल वर्णों से युक्त है, दैदीप्यमान तीन नेत्रों वाली है, रक्तारक्त मणियों से युक्त नवीन माला धारण किए हुए है, कौमार्यावस्था वाली है, कमल के आसन पर विराजमान है, जिसके हाथों में कमल के फूल तथा कमण्डलु शोभायमान हैं कमल की श्रेष्ठ माला से विभूषित तथा हंस के वाहन पर जो सवार हैं, उस महाशक्ति गायत्री के स्वरूप का मैं ध्यान करता हूं।

उपरान्त भगवान श्री नारायण ने नारद जी को भगवती गायत्री के एक हज़ार आठ नामों वाला स्तोत्र इस प्रकार सुनाया :—

अचिन्त्यलक्षणा व्यक्तातयर्थ मातृ महेश्वरी।
अमृतार्णव मध्यस्थाप्यजिता च अपराजिता।
अणिमादि गुणाधाराप्यर्कमण्डल संस्थिता।
अजरा जपेनाराध्या अत्रसूत्रधरा धरा।

अकारादि क्षकारान्ताप्यरिपड् वर्ग भेदिनी।
अञ्जनाद्रि प्रतीकाशाप्यं जननाद्रि निवासिनी।
अदितिश्चा जयाविद्याप्यरविन्द निमेक्षणा।
अन्तर्वहि स्थिता विद्याध्वसिनी चान्तरात्मिका।

अजाचाजमुखावासाप्यरविन्द निभानना।
अर्द्धमात्रार्थ दानज्ञाप्यारि मण्डलमर्दिनी।
असुरघ्नी ह्यावामास्याप्य लक्ष्मीघ्नीत्यजार्चिता।
आदि लक्ष्मीश्चादिशक्तिराकृतिश्चायतानना।

आदित्य पदवी चाराप्यादिव्य परिसेविता।
आचार्य वर्त्तनाचापाप्यादि मूर्ति निवासिनी।
आग्नेयी चामरीचाया चाराध्या चासनस्थिता।
आधार निलयाधारा चाकाशांत निवासिनी।

आद्याक्षर समायुक्ता चांतराकाश रूपिणी।
आदित्य मण्डलगता चान्तर ध्वांत नाशिनी।
इन्दिरा चेष्टादा चेषु चेंदीवर निभेक्षणी।
इरावती चेन्द्रपदा चेन्द्राणी चेन्दुरूपिणी।

इक्षकोदण्ड संयुक्ता चेषु सन्धानकारिणी।
इन्द्रनील समाकारा चेडा पिङ्गल रूपिणी।
इन्द्राक्षी चेश्वरी देवी चेहात्रय त्रिवर्जिता।
उमा चोषा हि द्युतिभा ह्यर्वारुकफलानना।

उडुप्रभा चोडुमती ह्यडुपा ह्यडुमध्यगा।
ऊर्ध्वा चाप्यूर्ध्व केशी चाप्यूर्ध्वाधोगति भेदनी।
ऊर्ध्व बाहू प्रिया चोर्मिमाला वाग्ग्रन्थदायिनी।
ऋतं चर्षिर्ऋतुमती ऋषिर्देव नमस्कृता।

ऋग्वेदा ऋणहर्त्री च ऋषिमण्डलचारिणी।
ऋद्धिर्दा ऋजुमार्गस्था ऋजुधर्मा ऋतुप्रदा।
ऋग्वेदनिलया ऋज्वी ऋज्वी लुप्तधर्म प्रवर्तिनी।
लुप्तारिवर सम्भूता लूतादि विषतारिणी।

एकाक्षरा चैकमात्रा त्वैका चैकै कनिष्ठिता।
ऐन्द्रो ह्यैरावता रूढ़ा चैहिका मृष्मिक प्रदा।
ओङ्कारा ह्योषधी चाप्ता ह्योतप्रोतनिवासिनी।
औरवा ह्यौषधि सम्पन्ना औपासन फलप्रदा।

अण्ड मध्यस्थिता देवी चाकारत्यनुरूपिणी।
कात्यायनी कालरात्रिः कामाक्षी कामसुन्दरी।
कमला कामिनी कान्ता कामदा कलकंठिनी।
करिकुम्भस्तन भरा करवीर सुवासिनी।

कल्याणी कुण्डलवती कुरुक्षेत्र निवासिनी।
कुरुविन्ददलाकारा कुण्डली कुमुदालया।
कालजिह्वा करालात्मा कालिका कालरूपिणि।
कमनी गुणा कान्तिः कलाधारा कुमुद्वती।

कौशिकी कमलाकारा कामचारा प्रभंजनी।
कौमारी करूणापाङ्गी ककुद्वन्ती करिप्रिया।
केशरी केशवनुता कदम्ब कुसुमप्रिया।
कालिन्दी कालिका काँची कलशोद्भव संस्तुता।

काममाता क्रतुमती कामरूपा कृपावती।
कुमारी कुण्डनिलया किराती करवाहनी।
कैकेयी कोकिलालापा केतकी कुसुमप्रिया।
कमण्डलुधरा काली कर्म निर्मूल कारिणी।

कलहंस गतिः कक्षा कृति कौतुक मङ्गला।
कस्तूरी तिलका शुभ्र करीन्द्र गमना कुहूः।
कर्पूरलेपना कृष्णा कपिला कुहराश्रया।
कूटस्था कुधरा कम्रा कुक्षिस्याखिल विष्टपा।

खङ्ग खेटधरा खर्वा खेचरी खगवाहिनी
खट्वांगधारिणी ख्याता खगराजो परिस्थिता।
खलघ्नी खण्डितजरा खण्डाख्यान प्रदामिनी।
खंडेन्दु तिलका गंगा गणेश गुहपूयिता।

गायत्री गोमयी गीता गान्धारी गानलोलुपा।
गोमती गामिनी गाधा गन्धर्वाप्सरि सेविता।
गोविन्द चरणाक्रान्ता गुणत्रय विभाविता।
गन्धर्वी गह्वरी गोत्रा गिरीशा गहनागमा।

गुहावासा गुणवती गुरु पाप प्रणाशिनी।
गुर्वी गुणवती गुह्या गोप्तव्या गुणदायिनी।
गिरिजा गुणमातङ्गी गरुडध्वजबल्लभा।
गर्वापहारिणी गोदा गोकुलस्था गदाधरा।

गोकर्ण निलयासक्ता गुह्यमण्डल वर्त्तिनी।
धर्मदा घनदा घंटा घोरदानव मर्दिनी।
घृणिमंत्रमयी घोषा धनसम्पत्ति दायिनी।
घण्टारवप्रिया घ्राणा घृणि मन्तुष्टकारिणी।

घनारि मण्डला घूर्णा घृताची घनवेगिनी।
ज्ञानधातुमयी चं र्चचिता चारुहासिनी
चटुला चण्डिका चित्रा चित्रमाल्य विभूषिता।
चतुर्भुजा चारुदन्ता चातुरी चरितप्रदा।

चूलिका चित्रवस्त्रान्ता चन्द्रमा! कर्णकुण्डला।
चन्द्रहासा चारुदात्री चकोरी चन्द्रहासिनी।
चन्द्रिकां चन्द्रधारी च चौरी चौरा च चण्डिका।
चञ्चाद्वाग्वादिनी चन्द्रचूडा चौर विनाशिनी।

चारु चन्दन लिप्ताङ्गी चञ्चच्चामर वीजिता।
चारुमध्या चारुगतिश्चन्द्रिका चन्द्ररूपिणी।
चारु होमप्रिया चार्वा चरिता चक्रबाहुका।
चन्द्र मण्डल मध्यस्था चन्द्रमण्डल दर्पणा।

चक्रवाकस्तनी चेष्टा चित्रा चारु विलासिनी।
चित्स्वरुपा चन्द्रवदनी चन्द्रमाः चन्दन प्रिया।
चीदयित्री चिरप्रज्ञावालका चारुहेतकी।
छत्रपाता छत्रधरा छायाछन्द: परिच्छदा।

छायादेवी छिद्रनखा छिन्नेन्द्रिय विसर्पिनी।
छन्दोनुष्टुपष्प्रतिष्ठान्ता छिद्रोपद्रव भेदिनी।
छेदा छत्रेश्वरी छिन्ना छुरिका छेदन प्रिया।
जननी जन्म रहिता जातवेदा जगन्मयी।

जाह्नवी जटिला जैत्री जरा मरण वर्जिता।
जम्बू द्वीपवती ज्वाला जयन्तीं जलशालिनी।
जितेन्द्रिया जितक्रोधा जितामित्रा जगत्प्रिया।
जात रूपमयी जिह्वा जानकी जगताजरा।

जनित्रि जन्हुतनया जगत्रैय हितैषिणी।
ज्वालामुखीं जपवती ज्वरघ्नी जितविष्टिपा।
जिताक्रान्तमयी ज्वाला जागृती ज्वरदेवता।
ज्वलन्ती जलदा ज्येष्ठा ज्वालोषास्फोट दिङ् मुखी।

जम्भिनी जम्भा ज्वलन्माणिक्य कुण्डला।
झिझिका झण निर्घोषा झंझा मारुत वेगिनी।
झल्लकी वाद्यकुशला ञरुपा ञभुजा स्मृता।
कपाण वासमायुक्ता टंकिनी टङ्क भेदिनी।

टङ्कीगणकृता घोपा टङ्कनीय महोरमा।
ठङ्काकारिणी देवी ठठ शब्द निनादिनी।
डामरी माकिनी डिंभा डुडुमारैक निर्जिता।
डामरी तन्त्र मार्गस्था डम-डम डमरु नादिनी।

डिंडीर वसहा डिम्भल सत्क्रीड़ा परायणा।
ढूंढ विघ्नेशजननी ढक्का हस्ता ढिलव्रजा।
नित्य ज्ञाना निरुपमा निर्गुणा नर्वदा नदी।
त्रिगुणा त्रिपदा तंत्री तुलसी तरुणातरुः।

त्रिविक्रम पदाक्रान्ता तुरीयपद गामिनी ।
तरूणादित्य संकाशा तमसी तुहिनातुरा ।
त्रिकालज्ञान सम्पन्ना त्रिवली च त्रिलोचना ।
त्रिशक्ति स्त्रिपुरा तुङ्गा तुरङ्गावदना तथा ।

तिमिगलाँगला तीव्रा त्रिस्रोता तमसादिनी ।
तन्त्र-मन्त्र विशेषज्ञा तनुमध्या त्रिविष्टपा ।
त्रिसन्ध्या त्रिस्तनी तोषा सस्था ताल प्रतापिनी ।
ताडङ्किनी तुषाराभा तुहिनाचल वासिनी ।

तन्तुजाल समायुक्ता तारहारावलि प्रिया ।
तिलहोम प्रिया तीर्थातमाल कुसुमाकृति : ।
तारका त्रियुता तन्वी त्रिशङ्क परिवारिता ।
तलोदरा तिलोद् भासा ताटङ्का प्रियवादिनी ।

त्रिजटा तित्तरी तृष्णां त्रिविधा तरुणाकृतिः ।
तप्तकांचन संकाशा तप्त कांचन भूषणा ।
त्रैयम्बका त्रिवर्गा च त्रिकालज्ञानदायिनी ।
तर्पणा तृप्तिदा तृप्ता तामसी तुम्बरुस्तता ।

तार्क्ष्यस्था त्रिगुणाकारी त्रिभङ्गी तनुवल्लरि : ।
थात्कारी थाखा थाँति दोहनीं दीन वत्सला ।
दान्वान्तकारी दुर्गा दुर्गासुर निर्वहिणी ।
देवरीति दिवारात्रि द्रौपदी दुन्दुभिस्वरा : ।

देवयानी दुरावासा दारिद्रय भेदिनी दिवा ।
दामोदर प्रिया दीप्ता दिग्वासा दिग्विमोहिनी ।
दण्डकारण्य निलया दण्डिनी देवपूजिता ।
देववन्द्या दिविषदा द्वेपिणी दानवाकृतिः ।

दीननाथ स्तुता दीक्षा देवतादिस्वरूपिणी ।
धात्री धनुर्धरा धनुर्धारिणी धर्माचारिणी ।
धुरन्धरा धराधारा धनदा धान्य दोहिनी ।
धर्मशीला धनाध्यक्षा धनुर्वेद विशारदा ।

धृतिर्धन्या धृतपया धर्मराजप्रिया ध्रुवा ।
धूमावती धूमकेशी धर्मशास्त्रः प्रकाशिनी ।
नन्दा नन्दप्रिया निद्रानुनृतानन्दनात्मिका ।
नर्मदा नलिनी नीला नीलकण्ठ समाश्रया ।

नारायणप्रिया नित्त्या निर्मला निर्गुणा निधिः ।
निराधारा निरुपमा नित्यशुद्धा निरञ्जना ।
नाद विन्दु कलातीता नादबिन्दु कलात्मिका ।
नृसिंहनीं नगधरा नृपनाग विभूपिता ।

नर्कक्लेशशमनी नारायण पदोद्भवा ।
निरावद्या निराकारा नारदप्रिय कारणी ।
नाना ज्योति समाख्याता निधिदा निर्मलात्मिका ।
नवसूत्रधरा नीति निरुपद्रव कारिणी ।

नन्दजा नवरत्नाढ्या नैमापारण्यवासिनी ।
नवनीत प्रिया नारी नीलजीभूत निःस्वनी ।
निमेपिणी नदीरूपा नीवग्रीवा निशीश्वरी ।
नामावलि निशुम्भघ्नी नागलोक निवासिनी ।

नवजाम्बूनदप्रख्यः नागलोकाधि देवता ।
नूपुरा कांत चरणा नरचित्त प्रमोदिनी ।
निमग्ना रक्तनयना निर्घात सम निःस्वना ।
नन्दनोद्यानतिलया निर्व्यू हो परिचारिणी ।

पार्वती परमोदारा पर ब्रह्मात्मिका परा।
पञ्चकोश विनिर्मुक्ता पञ्चपातक नाशिनी।
परचित्त विधानज्ञा पंचिका पंचरुपिणी।
पूर्णिमा परमा प्रीतिः परातेजः प्रकाशिनी।

पुराणी पौरुषी पुण्या पुण्डरीक निभेक्षणा।
पातालतल निर्मग्ना प्रीता प्रीति विर्वधिनी।
पावनी पादसहिता पेशला पवनाशिनी।
प्रजापतिः परिश्रान्ता पर्वतस्तन मण्डला।

पद्मप्रिया पद्मसंस्था पद्माक्षी पद्मसम्भवा।
पद्मपत्रा पद्मपादा पद्मिनी प्रियभाषिणी।
पशुपाश विनिर्मुक्ता पुरन्ध्री पुर वासिनी।
पुष्यकला पुरुषा पर्वा पारिजातद्रुम प्रिया।

पतिव्रता पवित्राङ्गी पुष्प हास परायणा।
प्रज्ञावती सुता पौत्री पुत्र पूज्या पयस्विनी।
पट्टी पाशधरा पंक्ति! पितृलोक प्रदायिनी।
पराणी पुण्यशीला च प्रणतार्त्ति विनाशिनी।

प्रद्युम्न जननी पुष्टा पितामह परिग्रहा।
पुण्डरीक पुरावासा पुण्डरीक समानना।
पृथुजंघा पृथुभुजा पृथुपादा पृथुदरीं।
प्रचालशोभा पिंगाक्षी पीतवासा प्रचापला।

प्रसवा तुष्टिदा पुण्या प्रतिष्ठा प्रणवागतिः।
पंचवर्णा पंचवाणी पंचिका पंचरस्थिता।
परामाया पराज्योति : पराप्रीति : परागतिः।
पराकाष्ठा परेशानी पावनी पावकद्युतिः।

पुण्यभद्रा परिच्छेद्या पुष्पहासा : पृथूदरा ।
पीताङ्गी पीतवसना पीतशय्या पिशाचिनी ।
पीतक्रिया पिशाचघ्नी पाटलाक्षी पटक्रिया ।
पंचभक्षा प्रियाचारा पूतना प्राणघातिनी ।

पुन्नागवनमध्यस्था पुण्यतीर्थ निषेविता ।
पंचाङ्गी च पराशिक्तः परमाह्लाद कारिणी ।
पुष्पकांडस्थिता पूषा पोषिताखिल बिष्टपा ।
प्राणप्रिया पंचशिखा पन्नगोपरिशायनी ।

पंचमात्रात्मिका पृथ्वी पथिका पृथुदोह्नी ।
पुराणन्याय मीमांसा पाटली पुष्पगन्धिनी ।
पुण्यप्रजा पारदात्री परमार्गेक गोचरा ।
ग्रीवातिशोभा पर्णाशा प्रणवा पल्लवोदरी ।

फलिनी फलदा फल्गु : फूत्कारी फलकाकृति : ।
फणीन्द्र भोगशयना फणिमंडल मंडिता ।
बालाबला बहुमता बालातप निभांशुका ।
बलभद्रप्रिया बन्द्या वडवा बुद्धि संस्तुता ।

बन्दी देवी बिलवती वड़िशघ्नी वलिप्रिया ।
बान्धवी बोधिता बुद्धि बेन्धूक कुसुम प्रिया ।
बालभानु प्रभाकारा ब्राह्मी ब्राह्मण देवता ।
वृहस्पतिस्तुता बृन्दा वृन्दावन विहारिणी ।

बालर्किनी बिलाहारा बिलवासा बहूदका ।
बहुनेत्रा बहुपदा बहुकर्णावतंसिका ।
वहुबाहुयुता बीज रूपिणी बहुरूपिणी ।
बिन्दुनाद कलातीता बिन्दुनाद स्वरूपिणी ।

बद्धगोधांगुलित्राणा बदर्याश्रम वासिनी।
वृन्दारका वृहत्स्कन्धा बृहती वाणपातिनी।
वृन्दाध्यक्षा बहुनुता वनिता बहु विक्रमा।
बद्धपद्मासनासीना विल्व पयङ्क संस्थिता।

बोधिद्रुम निजावाथां बडिथ्सा विन्दुदर्पणा।
बाला वाणासनवती बड़वानल योगिनी।
ब्रह्माण्ड बहिरन्तस्था ब्रह्म कङ्कण सूत्रिणी।
भवानी भीषणवती भाविनी भय हारिणी।

भद्रकाली भुजङ्गाक्षी भारती भारताशया।
भैरवी भीषणाकारा भूतिदा भूतमालिनी।
भामिनी भोगविरता भद्रदा भूरिविक्रमा।
भूतवासा भृगुलता भार्गवी भूसुरार्चिता।

भागीरथी भोगवती भवनस्था भिषग्वरा।
भामिनी भोगिनी भाषा भवानी भूरिदक्षिणा।
भर्गात्मिका भीमवती भवबन्ध विमोचिनी।
भजनीया भूतधात्रीं भञ्जितां भुवनेश्वरी।

भुजङ्गवलया भीमा भेरूंडा भागधेयिनी।
माता माया मधुमती मधुजिह्वा मधुप्रिया।
महादेवी महाभागा मालिनी मीन लोचना।
मायातीता मधुमती मधुमासा मधुद्रवा।

मानवी मधुसम्भूता मिथिलापुर वासिनी।
मधुकैटभ संहत्री मेदिनी मेघमालिनी।
मन्दोदरी महामाया मैथिली मसृणाप्रिया।
महांलक्ष्मी महाकाली महाकन्या महेश्वरी।

माहेन्द्री मेरुतनया मन्दार कुसुमार्चिता।
मञ्जुमञ्जीरचरणा मोक्षदा मञ्जुभाषिणी।
मधुरद्राविणी मुद्रा मलया मलयान्विता।
मेधा मरकतश्यामा माधवी मेनकात्मजा।

महामारी महावीरा महाश्यामा मनुस्तुता।
मात्रका मिहिसभासा मुकुन्दपद विक्रमा।
मूलाधार स्थिता मुग्धा मणिपूरक वासिनी।
मृगाक्षी महिषारूढ़ा महिषासुर मर्दिनी।

योगासना योगगम्या योगा यौवनकाश्रया।
यौवनी युद्धमध्यस्था यमुना युगधारिणी।
यक्षिणी योनमुक्ता च यक्षराज प्रसूतिनी।
यात्रायान क्चियानज्ञा यदुवंश समुद्भवा।

यकारादि हकारान्ता याजुषी यज्ञरूपिणी।
यामिनी योग निरता यातुधानी भयङ्करी।
रुक्मिणी रमणी रामा रेवती रेणुका रति:।
रौद्रा रौद्र प्रियाकारा राम माता रति प्रिया।

रोहिणी राज्यदा रेवा रामा राजीव लोचना।
राकेशी रूप सम्पन्ना रत्न सिंहासन स्थिता।
रक्तामाल्यांबरधरा रक्त गन्धानुलेपना।
राजहंस समारूढ़ा रम्भा रक्तबलि प्रिया।
रमणीय युगाधारा राजताखिल भूतला।
रुरुचर्यपरीधाना रथिनी रत्नमालिका।
रोगेशी रोगशमनी राविणी रोम हर्षिणी।
रामचन्द्र पदाक्रान्ता रावणच्छेद कारिणी।

रत्नास्त्रा परिच्छन्ना रथस्था रूक्मिभूषणा ।
लज्जाधिदेवता लोला ललिता लिङ्गधारिणी ।
लक्ष्मीर्लोला लुप्तविद्या लोकिनी लोकविश्रुता ।
लज्जा लम्बोदरा देवी ललना लोक धारिणी ।

वरदा वन्दिता विद्या वैष्णवी विमलाकृतिः ।
वाराही विरजा वर्षा वरलक्ष्मी विलासिनी ।
वनिता व्योममध्यस्था: वारिजासन संस्थिता ।
वारूणी वेणु सम्भूता वीति होत्रा विरूपिणी ।

बायुमण्डल मध्यस्था विष्णुरूपा विधिक्रिया ।
विष्णुपत्नी विष्णुमती विशालाक्षी वसुन्धरा ।
वामदेवप्रिया वेला वज्रिणी वसुदोह्नी ।
वेदाक्षर परीताङ्गी वाजपेयी फलप्रदा ।

वासवी वामजननी वैकुण्ठ निलयावरा ।
ब्यासप्रिया वर्मधरा ब्राल्मीकि परिसेविता ।
शाकम्भरी शिवा शान्ता शारदा शरणागतिः ।
शातोदरी शुभाचारा शुभासुर विर्मादिनी ।

शोभावती शिवारामा शङ्कराधशरीरिणी ।
शोभा शुभाशया शुभ्रा नित्यासन्धानकारिणी ।
शरावती शरानन्दा शरज्ज्यौत्स्ना शुभानना ।
शरभा शूलिनीं शुद्धा शबरी शुकवाहिनी ।

श्रीमती श्रीधरानन्दा श्रवणानन्द दायिनी ।
शर्वाणी शर्वरीवन्द्या षड्भाषा षड् ऋतुप्रिया ।
षडाधारस्थिता देवी षण्मुख प्रियकारिणी ।
षड्ङ्ग रूपसुमति: सुरासुर नमस्कृता ।

सरस्वती सदाधारा सर्व मंगल कारिणी।
सामगान प्रिया सूक्ष्मा सावित्री सामसम्भवा।
सर्ववासा सदानन्दा सुस्तनी सागराम्बरा।
सर्वैश्वर्य्य प्रिया सिद्धि: साधुबन्धु पराक्रमा।

सप्तर्षि मण्डलगता सोममण्डल वासिनी।
सर्वज्ञा सान्द्र करुणा समानाधिक वर्जिता।
सर्वोत्तुङ्गा सङ्गदीना सद्‌गुणा सकलेष्टदा।
सरघा सूर्यंतनया सुकेशी सोम संहिता।

हिरण्य वर्णा हरिणी ह्रींकारी हंसवाहिनी।
क्षौमबस्त्रा परीताङ्गी क्षीराब्धि तनया क्षमा।
गायत्री चैव सावित्री पार्वती च सरस्वती।
वेदगर्भा वरारोहा श्रीगायत्री पराम्बिका।

इति अ्रष्टोत्तर सहस्त्र नाम सम्पूर्णम्–

महात्म्य–

इति साहस्त्रकं नाम्नां गायत्र्याश्चैव नारद।
पुण्यदं सर्वं पापघ्नं महासम्पत्ति दायकम्।
एवं नामानि गायत्र्यास्तोषोत्पत्तिकराणि हि।
अ्रष्टम्यां च विशेषेण पठितव्यं द्विजः सह।

अ्रर्थात्—हेनारद ! गायत्री का यह अ्रष्टोत्तर सहस्त्र नाम स्तोत्र महान पुण्य दायक, समस्त पापों को नष्ट करने वाला, तथा महान सम्पति का देने वाला हैं। ये शुभ नाम गायत्री को सन्तुष्ट करते हैं। इसका पाठ विशेष रूप से अ्रष्टमी तिथि को ब्राह्मणों के साथ करना चाहिए।

जपं कृत्वा होम पूजा ध्यानं कृत्वा विशेषतः।
यस्मै कस्मै न दातव्यं गायत्र्यास्तु विशेषतः।

सुभक्ताय सुशिष्याय वक्तव्यं भूसुराय वै।
भ्रष्टेभ्य : साधकेभ्यश्च बान्धवेभ्यो न दर्शयेत्।

अर्थात्—भली प्रकार से जप होम पूजन तथा मुख्यतः ध्यान करते हुए गायत्री की उपासना करनी चाहिए। गायत्री मंत्र का उपदेश प्रत्येक 'ऐरे गैरे नत्थू खैरे' को नहीं देना चाहिए। जो ईश्वर का उत्तम भक्त हो, उत्तम शिष्य हो, अथवा ब्राह्मण हो, उसी को इसका अधिकारी तथा उचित पात्र समझें। भ्रष्ट आचरणी, भ्रष्ट साधक चाहे वह भाई ही क्यों न हो, बिना पात्र-कुपात्र विचारे गायत्री मंत्र का उपदेश नहीं करना चाहिए।

यद्गृहे लिखितं शास्त्रं भयं तस्यन कस्यचित्।
चञ्चलाऽपि स्थिरा भूत्वा कमला तत्र तिष्ठति।

इदं रहस्यं परमं गुह्याद् गुह्यतरं महत्।
पुण्यप्रदं मनुष्याणां दरिद्राणां निधिप्रदम्।

मोक्षप्रदं मुमुक्षूणां कामिनां सर्वकामदम्।
रोगाद् वै मुच्यते रोगी बद्धो मुच्येत बन्धनात्।

अर्थात्—जिस धर में गायत्री सम्बन्धी शास्त्र का लिखित ग्रन्थ होता हैं, वहाँ किसी प्रकार का भय उत्पन्न नहीं हो सकता। तथा उस घर में चञ्चला लक्ष्मी भी स्थित होकर निवास करती है इसका रहस्य गूढ़ाति गूढ हैं। मनुष्य-मात्र के लिए यह परम पुण्य प्रद हैं दरिद्रों को यह विपुल धन प्रदान कराने वाला है, मुमुक्षजनों को मोक्ष प्राप्त करता है, कामाभिलाषियों को सब काम प्रदान करने वाला है। इसका ध्यान पाठ करने से रोगी मनुष्य नीरोग हो जाता है, तथा बन्धन में पड़ा हुआ कैदी बन्धन से छूट जाता है।

ब्रह्म हत्या सुरापानं सुवर्णस्तेयिनो नराः ।
गुरुतल्पगतो वाऽपि पातकाद् मुच्यते सुकृत् ।
असत्प्रति ग्राहाच्चैवाऽमक्ष्य-भक्षाद् विशेषतः ।
पाखण्डानृत मुख्येभ्य : पठनादेव मुच्यते ।
इदं रहस्य ममलं मयोक्त पदमजोद्भवम् ।
ब्रह्म सायुज्यदं नृणा सत्यं सत्यं न संशय : ।

अर्थात्—इसके द्वारा मनुष्य ब्रह्म हत्या, सुरापान स्वर्ण चोरी तथा गुरुपत्नी गमन जैसे जघन्य पापों से भी मुक्त हो जाता है। जो लोग अग्राह्य भोजन (माँसादि) सेवन करते हैं, पाखण्ड तथा ढोंग रचते हैं, असत्य बोलते हैं वे भी इस सहस्त्र नाम स्तोत्र का पाठ करने से दोष मुक्त हो जाते हैं। इस रहस्य का स्वयं ब्रह्माजी ने उद्घाटन किया है। जो इसका पाठ करते हैं, वे निश्चय ही ब्रह्म सायुज्य पद को प्राप्त करते हैं, यह नितान्त व असंदिग्ध सत्य है।

इति श्रीमद् देवी भागवत पुराणोक्त गायत्री सहस्त्र
नाम स्तोत्र सम्पूर्णम् ।

गायत्री तत्त्वम्

विनियोग—ॐ श्री गायत्री तत्त्व माला मंत्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, अनुष्टुप छन्दः, परमात्मा देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयाः, अव्यक्तं कीलकम्, मम समस्त पापक्षयार्थे गायत्री तत्त्व पाठे विनियोगः ।

चतुर्विंशति तत्त्वानां यदेकं तत्त्वमृत्तमम् ।
अनुपाधि परंब्रह्म तत्परं ज्योतिरोमिति ।
यो वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः ।
तस्य प्रकृति लीनस्य तत्परं ज्योतिरौमिति ।

तत्सदादि पदैर्वाच्यं परमं पदम व्ययम् ।
अभेदत्वं पदार्थस्य तत्परं ज्योतिरोमिति ।
यस्य मायांशुभागेन जगदुत्पद्यतेऽखिलम् ।
तस्य सर्वोत्तमं रूपम् रूपस्याभिधीमहि ।

यं न पश्यन्ति परमं पश्यन्तोऽपि दिवौकसः ।
तं भूतानिलदेवं तु सुपर्णमुषधावताम् ।
यदंशः प्रेरितो जन्तुः कर्म पाश नियंत्रितः ।
आजन्म कृत पापानामपिहन्तु दिबौकसः ।

इदं महामुनि प्रौक्तं गायत्री तत्त्व मुत्तमम् ।
यः पठेत् परया भक्त्या स याति परमां गतिम् ।
सर्व वेद पुराणेषु साङ्गोपाङ्गेषु यत्फलम् ।
सकृदस्य जपादेव तत्फलं प्राप्नुयान्नरः ।

अभक्ष्य भक्षणात पूतो भवति । अगम्यगमनात् पूतो भवति । सर्व पापेभ्यः पूतो भवति । प्रातरधीयानो रात्रि कृतं पापं नाशयति । सायमधीयानो दिवसंकृतं पापं नाशयति । मध्यन्दिनमुपयुञ्जानोऽसत्प्रति ग्रहादिना मुक्तो भवति । अनुप्लवं पुरुषाः पुरुषमभिवन्दन्ति । यं यं काममभिध्यायति तं तमेवाप्नोति पुत्र पोत्रान् कीर्ति सौभाग्यांश्चोप लभते । सर्व भूतात्म मित्रो देहान्ते तद्विशिष्टो गायत्री परमं पदमवाप्नोति ।

इति श्री वेदसारोक्त गायत्री तत्त्वम् सम्पूर्णम् ।

गायत्री स्तवराज स्तोत्रम्

(महर्षि विश्वामित्र कृतौ)

विनियोग :—

ॐ अस्य श्री गायत्री स्तवराज स्तोत्र मन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, अनुष्टुप छन्दः, परमात्मा देवता, सकलजननी चतुष्पदा गायत्री, सर्वोत्कृष्टं परंधामम् प्रथम पादो बीजम्, द्वितीयः शक्तिः, तृतीयः कीलकम्, दश प्रणव संयुक्ता सव्याहृतिका तूर्यपाद सहिता व्यापकम्, मम धर्माऽर्थ-काम-मोक्षार्थे जपे विनियोगः ।

न्यासं कृत्वा ध्यायेत् ।

ध्यानम्—

गायत्रीं वेदधात्रीं शतमखफलदां वेदशास्त्रैक वेद्यां ।
चिच्छक्ति ब्रह्म विद्यां परम शिवपदा श्रीपदं वैकरोति ।
सर्वोत्कृष्टं पदं तत्सवितुरनुपदान्ते वरेण्यं शरण्यं ।
भर्गो देवस्य धीमह्यभिदधति धियो योनः प्रचोदयादि

—त्यौर्वंतेजः

साम्राज्य बीजं प्रणव त्रिपादं सव्याऽपसव्यं प्रजपेत् सहस्त्रकम् ।
सम्पूर्ण कामं प्रणबं विभूति तथा भवेद्वाक्य विचित्र वाणी ।
शुभं शिवं शोभनमस्तु मह्यं सौभाग्य भोगोत्सवमस्तु नित्यम् ।
प्रकाश विद्यात्रय शास्त्र सर्वं ज़जेन्महामंत्र फलं प्रिये ! वै ।
ब्रह्मास्त्रं ब्रह्मदण्डं शिरसि शिखि महद् ब्रह्मशीर्षं नमोऽन्तं ।
सूक्तं पारायणोक्तं प्रणवमथ महावाक्य सिद्धान्त मूलम् ।

तूर्यं त्रीणि द्वितीयं प्रथम मनु महावेद वेदान्त सूक्तं।
नित्यं स्मृत्यानुसारं नियमित चरितं मूलमन्त्रम् नमोऽन्तं।

अस्त्रं शस्त्रहतं त्वघोरसहितं दण्डेत बाजीहतम्।
आदित्यदि हतं शिरोऽन्तसहितं पापक्षयार्थं परम्।
तुर्यान्त्यादि विलोम मंत्र पठनं बीजं शिखान्तोर्ध्वकं।
नित्यं काल नियम्य विप्र विदुषां किं दुष्कृतं भुसुराद्।

नित्यं मुक्तिप्रदं नियम्य पवनं निर्घोष शक्ति त्रयं।
सम्यक् ज्ञान गुरुपदेश विधिवद् देवीं शिखान्तामपि।
षष्टैक्योत्तर संख्ययाऽनुमतं सौषुम्णादि मार्गत्रयीं।
ध्यायेन्नित्य समस्त वेद जननीम् देवीं त्रिसन्ध्यामयीम्।

गायत्रीं सकलागमार्थ विदुषां सौरस्य बीजेश्वरीं।
सर्वाम्नाय-समस्त मंत्रजननीम् सर्वज्ञधामेश्वरीम्।
ब्रह्मादित्रय सम्पुटार्थ करणीं संसार पारायणीं।
सन्ध्यां सर्वं समान तंत्र परयाः ब्रह्मानु सन्ध्यायिनीम्।

एक-द्वि-त्रि-चतुः समान गणना वर्णाष्टकं पादयोः।
पापादौ प्रणवादि मंत्र पठने मंत्रत्रयी सम्पुटाम्।
सन्ध्यायां द्विपदं पठेत् परतरं सायं तुरीयं युतं।
नित्याऽनित्य मनन्त कोटि फलदं प्राप्तं नमस्कुर्महे।

ओजोऽसीति सहोऽस्य हो बलमसिभ्राजोऽसितेजस्विनी।
वर्चस्वी सवितागिनसोममममृतं रूपं परं धीमहि।
देवानां द्विजवर्यन्तां मुनिगणे मुक्त्यर्थिनां शान्तिना।
मोमित्येक मृचं पठन्ति यमिनो यं यं स्मरेत् प्राप्नुयात्।

ओमित्येकमजस्वरूपममलं तत्सप्तधा भाजितं।
तारं तंत्रसमन्वितं परतरे पादत्रयं गर्भितम्।

आपो ज्योति रसोऽमृतं जनमहः सत्यं तपः स्वर्भुवः ।
भूयोभूय नमामि भूर्भुवः स्वरोमेतैर्महामंत्रकम् ।
आदौ बिन्दु मनुस्मरन् परतरे बाला त्रिवर्णोच्चरन् ।
देवी मानस पङ्कजे त्रिनयना पञ्चानना पातु माम् ।
सर्वे ! सर्ववशे ! समस्तसमये ! सत्यात्मिके ! सात्विके ।
सावित्री सवितात्मके शशियुते ! सांख्यायनी गोत्रजे ।

सन्ध्यात्रीण्युपकल्प्य संग्रह विधिः सन्ध्याभिधानात्मके ।
गायत्रींप्रणवादि मंत्र गुरुणा सम्प्राप्यतस्मै नमः ।
क्षेमं दिव्य मनोरथः परतरे चेतः समाधीयतां ।
ज्ञानं नित्य वरेण्य मेतदमलं देवस्य भर्गोधियम् ।
मोक्ष श्री विजयार्थिनोऽथसवितुः श्रेष्ठं विधिस्तत्पदं ।
प्रज्ञा मेध प्रचोदयात् प्रतिदिनं योनः पदं पातुमाम् ।
सत्यं तत्सवितुर्वरेण्यविरलं विश्वादिमायात्मकं ।
सर्वाद्य प्रतिपादपादरमया तारं तथा मन्मथम् ।
तुर्यान्यस्त्रितयं द्वितीयम परं संयोग सव्याहृति ।
सर्वाम्नाय मनोमयीं मनसिजां ध्यायामि देवीं पराम् ।
आदौ गायत्रिमंत्र गुरुकृतनियमं धर्मकर्मानुकूलं ।
सर्वाध सारभूतं सकलमनुमयं देवता नाम गम्यम् ।
देवानां पूर्व देवं द्विजकुलमुनिभिः सिद्ध विद्या धराद्यै ।
को वा वक्तुं समर्थस्तवमनु महिमा बीजराजादि मूलम् ।
गायत्रीं त्रिपदां त्रिबीजसहितां दिव्याहृति त्रैपदां ।
त्रिब्रह्मा त्रिगुणां त्रिकालनियमां वेदत्रयीं तां पराम् ।
सांख्यादित्रयरूपिणीं त्रिनयनां मातृत्रयीं तत्परां ।
त्रैलोक्य त्रिदश त्रिकोटि सहितां संध्यांत्रयीं तां नुमः ।
ओमित्येतस्त्रिमात्रा त्रिभुवनकरणं त्रिस्वरं वह्निरूपं ।
त्रीणि त्रीणि त्रिपादं त्रिगुण गुणमयं त्रैपुरान्त्रं त्रिसूक्तम् ।

तत्त्वानां पूर्वशक्तिं द्वितयगुरुपदं पीठयंत्रात्मकं तं ।
तस्मादेतत् त्रिपादं त्रिपदमनुसरं त्राहि मां मो नमस्ते ।
स्वस्ति श्रद्धातिमेधा मधुमति मधुरः संशया प्रज्ञकान्ति ।
विधा बुद्धिबलं श्रीरतनुधनपतिः सौम्यवाक्यानुवृत्तिः ।

मेधा प्रज्ञा प्रतिष्ठा मृदुमति मधुरा पूर्ण विद्या प्रपूर्ण ।
प्राप्तं प्रत्यूषचिन्त्यं प्रणव परवशात् प्राणिनां नित्यकर्म ।
पञ्चाशद्वर्णमध्ये प्रणव पर युतं मंत्रमाद्यं नमोऽन्तं ।
सर्व सव्याऽपसव्यं शतगुणमभितो वर्ण मष्टोत्तरं ते ।

एवं नित्यं प्रजप्तं त्रिभुवन सहितं तूर्यमन्तं त्रिपादं ।
ज्ञानं विज्ञान गम्यं गगन सुसदृशं ध्यायते यः समुक्तः ।
आदिक्षान्त सयिन्दु युक्त सहितं मेरु क्षकारात्मकं ।
व्यस्ताऽव्यस्त समस्त वर्ग सहितं पर्णं शताष्टोत्तरं ।

गायत्रीं जपतां त्रिकाल सहितां नित्यं स नैमित्तिकम् ।
चैवं जाप्यफलं शिवेन कथितं सद्भोग्य मोक्षप्रदम् ।
सप्तव्याहृति सप्ततार विकृतिः सत्यं वरेण्यं धृतिः ।
सर्वं तत्सवितुश्च धीमहि महाभर्गस्य देवं भजे ।

धाम्नोधाम धमाधिधारण महान् धीमत्पदं ध्यायते ।
ॐ तत्सर्वमनुप्रपूर्ण दशकं पादत्रयं केवलम् ।
विज्ञाने विलस द्विवेक वचसः प्रज्ञानुसन्धारिणीम् ।
श्रद्धामेध्य यशः शिरः सुमनसः स्वस्तिश्रियं त्वां सदा ।

आयुष्यं धनधान्य लक्ष्मिमतुलां देवीं कटाक्षं परं ।
तत्काले सकलार्थ साधन महान् मुक्तिर्महत्वं पदम् ।
पृथ्वी गन्धोऽचनायां नमसि कुसुमता वायु धूप प्रकर्षो ।
वह्निर्दीप प्रकाशो जलममृतमयं नित्यसङ्कल्प पूजा ।

एतत्सर्वं निवेद्यं सुखबति हृदये सर्वदा दम्पतीनां ।
त्वं सर्वज्ञ कुरुष्व ममता नाऽहं त्वया ज्ञेयसि ।

सौम्यं सौभाग्य हेतुं सकल सुख करं सर्वं सौख्यं समस्तं ।
सत्यं सद्भोग नित्यं सुखजन सुहृदं सुन्दरं श्री समस्तं ।
सौमङ्गल्यं समग्रं सकल शुभकरं स्वस्तिवाचं समस्तं ।
सर्वाद्यं सद्विदेकं त्रिपद पद युगं प्राप्तु मध्या समस्तम् ।

गायत्रीं पद पञ्च पञ्च प्रणवं द्वन्द्वं द्विधा सम्पुटं ।
सृष्ट्यादि क्रम मंत्र जाप्य दशकं देवी पदं क्षुत्त्रयम् ।
मन्त्रादि स्थितिकेषु सम्पुट मिदं श्री मातृकावेष्टितं ।
वर्णान्त्यादि-विलोम-मंत्र जपनं संहार सम्मोहनम् ।

भूराद्यं भूर्भुवस्वस्त्रिपद पदयुतं त्र्यक्षराद्यन्तयोज्यं ।
सृष्टि-स्थित्यन्तकार्यक्रम शिखि सकलं सर्वमंत्रंप्रशस्तम् ।
सर्वाङ्ग मातृकाणां मनुमय वपुषं मन्त्र योगं प्रयुक्तं ।
संहारं क्षादि वर्णं वसुशतगणनं मंत्र राजं नमामि ।

विश्वामित्र मुदाहृतं हितकरं सर्वार्थ सिद्धि प्रदं ।
स्तोत्राणां परमं प्रभात समये पारायणं नित्यशः ।
वेदानां विधिवाद मंत्र सफलं सिद्धि प्रदं सम्पदां ।
स प्राप्नोत्यपरत्र सर्व सुखदमायुष्यमारोग्यताम् ।

। इति श्री विश्वामित्र कृतौ गायत्री स्तवराज सम्पूर्णम् ।

जगदम्बा गायत्री
की

आरती

जय जय जय गायत्री माता।
ॐ जै जै गायत्री माता।

सकल सृष्टि की जननी तुम हो, तुम ही भाग्य विधाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

परब्रह्म की पराशक्ति हो, अरु वेदों की माता।
जीवमात्र की तुम संरक्षक, घट घट की हो ज्ञाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

ब्रह्म - ज्ञान औ दिव्य - दृष्टि की, तुम ही मातु प्रदाता।
सुर नर मुनि जो तुमको ध्यावे, अष्ट सिद्धियाँ पाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

ब्रह्मा 'विष्णु महेश और, देवेश तेरा यश गाता।
सूर्य तुम्हारा दिव्य तेज ही, तिहूं लोक फैलाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

लक्ष्मी दुर्गा शिवा सरस्वति, विविध रूप में माता।
तू ही सब दुख हरने वाली, और सर्व सुख दाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

भक्ति प्रेम औ ज्ञान धर्म का, सागर सा लहराता।
जब यह पतित पुत्र हे जननी ! शरण तेरी पा जाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

काम क्रोध मद लोभ मोह, अरु अहंकार मिट जाता।
तेरा ध्यान चित्त में ऐसा, सद् प्रकाश फैलाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

श्रद्धा भक्ति सहित माँ की, यह स्तुति जो नर गाता।
आवागमन मुक्त होकर वह, परमधामपद पाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

जनम जनम का अम्बे तुझ संग, इस कुपुत्र का नाता।
'शुक्ल' सदा तेरे चरणों में, शान्ति और सुख पाता।
ॐ जय जय गायत्री माता।

बोलो—गायत्री माता की जय !

रचयिता—**अमोलचन्द्र शुक्ल**

गायत्री यज्ञ-विधान

★ यज्ञ का महत्व, नियम तथा शास्त्रीय विधान आदि।

★ संध्या षट्कर्म, पञ्चवेदी स्थापना, देव पूजन, यज्ञ भूमिका पञ्चभूत संस्कार आदि

★ आहुतियाँ, पूर्णाहुति, स्तुति यज्ञ भगवान की, विसर्जन आदि।

गायत्री यज्ञ-विधानम्

वेदों, शास्त्रों, पुराणों, उपनिषदों आदि उत्कृष्ट धार्मिक ग्रन्थों में हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने यज्ञ-हवन आदि का विशिष्ट महत्व बताया है। प्रत्येक साधना के अन्त में अथवा शुभ कार्य के प्रारम्भ में लघु-हवन करना नितान्त आवश्यक, शुभ फलदायक तथा सिद्धि प्राप्ति का साधन माना गया है। इस का आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से भी बड़ा महत्व स्वीकार किया जा चुका है। अनेक आधुनिक वैज्ञानिकों ने परीक्षण करके यह निष्कर्ष निकाला है कि भारतीय धार्मिक ग्रन्थों में यज्ञों में जिन २ द्रव्यों की आहुति देना बताया गया है, उन द्रव्यों का धुआँ वायु को शुद्ध तथा कीटाणु रहित करने में अत्यधिक सक्षम है। यज्ञादि करने से वायुमण्डल शुद्ध होता है तथा रोगों के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। हमारे ऋषियों के मतानुसार यज्ञों से न केवल भौतिक लाभ ही प्राप्त होते हैं, प्रत्युत इनसे आध्यात्मिक लाभ भी प्राप्त होते है। पाठकों के ज्ञान व विश्वास वर्धन हेतु यहाँ यज्ञ के महत्व से संम्बन्धित कुछ महान ग्रन्थों तथा ऋषि मुनियों आदि के कथन उद्धृत किए जा रहे हैं।

यज्ञ का महत्व व उपयोगिताएँ

यजुर्वेद में यज्ञ की महिमा वर्णन करते हुए लिखा है :—

त्वामग्ने यजमानाऽअनुद्यून विश्वावसु दधिरे
वार्याणित्दया सह द्रविणमिच्छमाना ब्रजं गोमतं मुशिजो विवब्रुः।

—यजुर्वेद १२।२८

अर्थात्—हे अग्नि देव ! जो सद्‌गृहस्थ सदैव यज्ञ करते रहते हैं, वे श्रेष्ठ सम्पत्तियों को प्राप्त करते हैं उन्हें सदैव ज्ञानियों का सत्सङ्ग तथा धन वैभवादि प्राप्त होता रहता है।

अयमग्नि पुरीष्यो रयिमान् पुष्टि वर्द्धनः।
अग्ने पुरीष्याभि द्युम्नमभि सहऽआयच्छस्व।

—युजुर्वेद ३।४०

अर्थात्—यह यज्ञ की अग्नि वर्षा कराने वाली. धन देने वाली, पुष्टि तथा शक्ति को बढ़ाने वाली है। हे पुरीष्य अग्नि ! तुम हमारे चारों ओर शक्ति तथा वैभव का विस्तार करो।

गीता में भगवान श्री कृष्ण यज्ञ का सूक्ष्माति सूक्ष्म रहस्यपूर्ण महत्व समझाते हुए कहते हैं :—

अन्नाद्‌भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्न सम्भवः।
यज्ञादभवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्‌भवः।
कर्म ब्रह्मोद्‌भवं विद्धि ब्रह्माक्षर समुद्‌भवम्।
तस्मात्सर्वं गतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्।

श्रीमद्‌भगवत् गीता ३।१४

अर्थात्—प्राणिमात्र अन्न से उत्पन्न होते हैं. तथा अन्न पर्जन्य (वृष्टि) से उत्पन्न होता है। वृष्टि यज्ञ से उत्पन्न होती है और यज्ञ की उत्पत्ति कर्म से है। कर्म ब्रह्म से उत्पन्न हुआ है और ब्रह्म अक्षर (अविनाशी तत्त्व) से उत्पन्न हुआ है, अस्तु सर्वव्यापी ब्रह्म नित्य ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है, ऐसा जानो।

सरस्वती उपनिषद् के १४वें मंत्र में 'यज्ञं वष्टु धिया वसु' अर्थात् यज्ञ से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। आगे १७ वें मंत्र में 'यज्ञ दधे सरस्घती' अर्थात् यज्ञ से ही सरस्वती प्रसन्न होती है, इत्यादि कथन यज्ञ की महिमा प्रकट करते हैं।

रामायण में गोस्वामी तुलसी दास ने भी यज्ञ की महिमा दर्शाते

हुए लिखा है, कि राजा दशरथ का सन्तान-हीनता का दुख दूर करने के लिए गुरु वशिष्ठ ने शृंगी ऋषि को बुलाकर पुत्रेष्ठ यज्ञ करवाया।

एक बार भूपति मन माँहीं। भई गलानि मोर सुत नाहीं।
गुरु गृह गयउ तुरत महिपाला। चरण लागि करि विनय विशाला
श्रङ्गी ऋषिहि वशिष्ठ बोलावा। पुत्र काम शुभ यज्ञ करावा।
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें। प्रगटे अग्नि चारु कर लीन्हें।
यह हवि बाँटि देहु नृप जाई। जथा जोग जेहि भाग बनाई।
तबहि राय प्रिय नारि बुलाई। कौशल्यादि तहाँ चलि आई।
अर्ध भाग कौशल्यहिं दीन्हा। उभय भाग आधे कर लीन्हा।
कैकेई कहँ नृप सो दयऊ। रह्यो सो उभय भाग पुनिभयऊ।
कौशल्या कैकेई हाथ धरि। दीन्ह सुमित्रहिं मन प्रसन्न करि।
एहि विधि गर्भ सहित सब रानी। भई हृदय हरषित सुख मानी।

एक अन्य स्थान पर गोस्वामी जी कहते हैं :—

करहिं विप्र होम मख सेवा,
तेहि प्रसङ्ग सहजेहि वश देवा।

विष्णु धर्मोत्तर पुराण के १३७ वें अध्याय में लिखा है :—

यज्ञेन लोकानाप्नोति पाप नाशं हुतेन च।
जप्येन कामनाप्नोति सत्येन च परां गतिम्।

अर्थात्—मनुष्य यज्ञ द्वारा विष्णु लोक को प्राप्त होता है। हवन करने से उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, जप करने से कामादि भोगों को प्राप्त करता है, तथा सत्य बोलने से परम पद की प्राप्ति होती है।

शिवपुराण में लिखा है :—

तस्मादीश प्रसादार्थ यूयं गत्वा भुवद्विजाः।
दीर्घ सत्र ममाकृध्वं यू यं वर्ष सहस्रकम्।

अर्थात्—यज्ञ शिव को प्रसन्न करने का श्रेष्ठ साधन है, इसलिए

हे ऋषियो ! आप सब पृथ्वी लोक में जाकर एक सहस्र वर्ष तक विशाल यज्ञ करो।

नारद पुराण के ३९ वें अध्याय में यज्ञ का महत्व प्रकट करते हुए कहा गया है :—

ये विष्णु भक्ता निष्कामा यंजंति परमेश्वरम्।
त्रिसप्ताकुलासंयुक्तास्ते यांति हरिमन्दिरम्।

अर्थात्—जो प्रभु भक्त निष्काम भाव से यज्ञ द्वारा परमेश्वर का पूजन करता है, वह अपनी इक्कीस पीढियों सहित हरिमन्दिर अर्थात् परमधाम को प्राप्त होता है।

अब देखिए मत्स्यपुराण में यज्ञ महिमा किन शब्द्रों में लिखी है—

अविमुक्ते यजन्ते तु मद्भक्ताः कृत निश्चयाः।
तेषां पुनरावृत्तिः कल्प कोटि शतैरपि।

मत्स्य पुराण १८३।१।२४

अर्थात्—दृढ़ निश्चय सहित मेरे भक्त यदि मुक्ति के हेतु यज्ञ से मेरा यजन करे तो सैकड़ों करोड़ों कल्पों तक उनकी संसार में पुनरावृत्ति नहीं हो।

मनुस्मृति में भगवान मनु कहते हैं :—

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीय क्रियते तनुः।

अर्थात्—महायज्ञ तथा यज्ञ करने से ही यह शरीर ब्राह्मी बनता है, अर्थात् ब्राह्मण बनता है।

इसी प्रकार अन्यान्य धार्मिक ग्रन्थों में भी यज्ञ की महिमा का गुणगान मिलता है। कहने का तात्पर्य यह है कि यज्ञ शारीरिक तथा बौद्धिक विकास में सहायक है, भौतिक तथा आध्यात्मिक सुख, वैभव, पराक्रम, तेज और ऐश्वर्य की वृद्धि करता है। समस्त सिद्धियों को देने वाला है, तथा सामूहिक रूप से समस्त विश्व का कल्याण करता है।

❋ गायत्री महायज्ञ-विधान ❋

गायत्री यज्ञ प्रायः किसी कर्मकाण्ड विशारद गुरु की अध्यक्षता में शुद्धाचरणी, निर्मल विचारों वाले, धार्मिक वृत्तिवाले विद्वान सात्विक ब्राह्मणों के सहयोग से किया जाता है। तथा इसमें जनता वर्ग के व्यक्ति भी सम्मिलित हो पुण्यधर्म के भागी बनते हैं। उन्हें आरोग्य, मनोबल, सदबुद्धि, समृद्धि, सफलता, सत्प्रेरणा आदि प्राप्त होते हैं। तथा रोग शोक दरिद्रता क्लेश चिन्ता वैमनस्य घृणा क्रोध आदि मानसिक विकार संताप नष्ट होते हैं।

महायज्ञ की व्यवस्था—

प्रथम पाँच सात अत्यन्त ईमानदार, धर्मनिष्ठ, तथा विवेकशील व्यक्तियों की एक समिति गठित कर लें, जिसमें कुछ अच्छे साधु महात्मा, विद्वान पंडित, समाज के प्रतिष्ठित तथा धनाढ्य व्यक्ति, सामान्य जनता का कोई ईमानदार व्यक्ति, एक दो धर्मनिष्ठ सरकारी अफसर, जज या वकील आदि २ अनेक वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्ति हों। इस समिति के कार्यकारी सदस्य क्षेत्र के सम्पन्न व्यक्तियों से व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क स्थापित करके, यज्ञ का महात्म्य बतलाकर उन्हें आर्थिक सहयोग के लिए प्रेरित करें, साथ ही सामान्य जन वर्ग में भी विविध प्रचार साधनों द्वारा यज्ञ का प्रचार करके अधिकाधिक दान देने व सामूहिक रूप से सम्मिलित होकर यज्ञ को सफल व प्रभावी बनाने के लिए पूर्ण व हार्दिक सहयोग प्रदान करने को प्रेरित करें। इस प्रकार से एकत्रित हुए धन द्वारा महायज्ञ की व्यवस्था करें। यज्ञ के लिए किसी नदी या तालाब का तट अथवा घनी बस्ती से दूर एकान्त स्थान में बने किसी मन्दिर या उद्यान में स्थल का चयन करें। और उस स्थान को पूरी तरह स्वच्छ

व पवित्र करके वहाँ यज्ञशाला का निर्माण कराएं, तथा सम्मिलित होने वाले व्यक्तियों के लिए शामियाने, प्रकाश, जल आदि की समुचित व्यवस्था करें। ये सब व्यवस्थाएं यज्ञ समिति के सदस्य मिल कर अथवा कार्य विभाजन करके करें। साथ ही दैनिक व्यवस्थाओं यथा ब्राह्मण भोजन स्त्रियों बच्चों तथा पुरुषों में प्रसाद वितरण, कुत्तों चील कौओं आदि से बचाव तथा अन्य कामों के लिए धर्मनिष्ठ सच्चरित्र व सदाचारी स्वय सेवकों की भी व्यवस्था करें। समिति का एक २ सर्वाधिक प्रभावशाली सदस्य प्रधान व कोषाध्यक्ष चुन लें, जो कि सारे व्यय का हिसाब किताब रखें। यज्ञ में जप तथा आहुतिओं के लिए यथोचित ब्राह्मणों को आमंत्रित करें, तथा उनका दैनिक व्यय भोजन आदि की व्यवस्था समिति करे। ब्राह्मण पूर्णतया सन्तुष्ट व प्रसन्नचित्त हो यज्ञ में अपने उत्तरदायित्व व कर्त्तव्य का पालन कर सकें, किसी को किसी प्रकार का असन्तोष या मानसिक उद्वेग न होने पाए, उन्हें यथोचित मान सम्मान प्राप्त हो, ऐसी उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए। गायत्री यज्ञ कितने दिन में पूर्ण हो, यह याज्ञिकों की संख्या, जप की संख्या आदि पर निर्भर है, किन्तु एक बात का ध्यान रहे, कि यज्ञ में आहुति या जप करने वाले ब्राह्मण ऐसे हों, जो कि गायत्री मंत्र का शुद्ध उच्चारण कर सकें।

यज्ञशाला का निर्माण —

यज्ञ को शास्त्रों पुराणों आदि में स्वयं भगवान का रूप माना गया है। यज्ञ के द्वारा ही ब्रह्माजी इस सृष्टि को धारण किए हुए हैं, अस्तु यज्ञशाला बहुत भव्य, पवित्र और आकर्षक होनी चाहिए। उसकी सजावट आदि भी बड़ी लगन व रुचि के साथ कराएं। यज्ञ शाला ऊपर से ढंकी हुई अवश्य होनी चाहिए, ताकि पक्षी आदि ऊपर से कोई अपवित्र वस्तु न डाल सकें। धूप, अग्नि की प्रचण्डता, लपटों व गर्मी, आकस्मिक वर्षा या अन्धड़ इत्यादि से बचाव की भी

पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए, ताकि यज्ञ में कोई आकस्मिक व्यवधान उत्पन्न न हो सके। यज्ञशाला में हवन कुण्डों की संख्या पर्याप्त होनी चाहिए, ताकि अधिक से अधिक याज्ञिकों द्वारा कम से कम समय में अधिक से अधिक आहुतियां दी जा सकें। हवन के कुण्ड २४-२४ अंगुल लम्बे चौड़े और गहरे चौकौर बनाए जाने की परम्परा रही है, किन्तु समय के अनुसार, हवन सामग्री की मंहगाई आदि को देखते हुए इन कुण्डों को ऊपर से तो २४-२४ अंगुल लम्बा चौड़ा ही रखें, गहराई भी २४ अंगुल ही करें, किन्तु उनकी दीवारों में तिरछापन देकर इस प्रकार बनवाए जा सकते हैं, कि नीचे तल में ६-६ अंगुल लम्बे चौड़े ही रह जायं।

गायत्री यज्ञ में प्रयोग होने वाली पूजन-सामग्री—

रोली, चन्दन, कलावा, यज्ञोपवीत, धूप तथा अगरबत्ती के पैकिट, दियासलाई, कुशाएं, चावल, बताशे या किशमिश आदि नैवेद्य, फूल, कलशों के मुख पर बांधने के लिए आम के पत्ते तथा दूब, साबत सुपाड़ियां, जल छोड़ने के लिए चौड़ी कटोरी, छोटा जल-कलश, शुद्ध गौ घृत, कपूर, तथा आरती के लिए शंख, घंटे, मंजीरे आदि। बैठने वाले सब याज्ञिक ब्राह्मणों के लिए १-१ पंचपात्र-आचमनी, १-१ थाली हवन सामग्री के लिए, १-१ घृत-पात्र प्रत्येक कुण्ड पर, शुद्ध गौ-घृत, स्रुवा, स्रुचि प्रणीता, प्रोक्षणी व स्पय ये पांचों लकड़ी के यज्ञ पात्र प्रत्येक कुण्ड पर, अग्नि प्रज्वलित करने के लिए १-१ पंखा, १-१ चिमटा, १-१ आसन ऊन या कुश का प्रत्येक याज्ञिक के बैठने के लिए, गायत्री माता का भव्य चित्र प्रधान वेदी पर स्थापना के लिए, पञ्चामृत के लिए गोदुग्ध, गोदधि, गो घृत, शहद, तुलसी पत्र व किशमिश, चिरोंजी, गोला, आदि मेवा, पाँचों वेदियों पर नैवेद्य भोग के लिए खीर, हलुआ, फल, मेवा, मिठाई ये पांच वस्तुएं, वितरण के लिए मिष्ठान का प्रसाद, आम, पीपल, गूलर, बरगद व छोंकर आदि की पवित्र, स्वच्छ व धुली हुई समिधाएं यथावश्यक

परिमाण में, पीला रंग याज्ञिकों के दुपट्टे व वस्त्रादि रंगने के लिए, इत्यादि-२ वस्तुओं की पूजन के लिए आवश्यकता होती है। साथ ही पान, सुगंधि, हार पुष्प, स्वच्छ रुई, चूना, आदि भी होनी चाहिए। पूजन के पश्चात् हवन में आहुति देने के लिए हवन सामग्री इकट्ठी करके पहले से ही तैयार रखी होनी चाहिए।

हवन सामग्री में प्रयुक्त होने वाली औषधियां—

छारछवीला, तालिसपत्र, देवदारु, कपूर कचरी, शीतल चीनी, अगर, तगर, गूगल, इन्द्र जौ, चन्दन चूरा, पुष्कर मूल, जायफल, मजीठ, दालचीनी, खस, चिरायता, तेजपत्र, बड़ा गोखुरू, नागर मोथा, शतावर, पृष्ठपर्णी, तालपर्णी, मोचरस, वायविडङ्ग, ब्राह्मी, गोरखमुण्डी, बच, शंख-पुष्पी, लौंग, तोमर के बीज, पदमाख, जटा-मांसी, नेत्रवाला, बड़ी इलायची, उन्नाब, नागकेशर, बालछड़, असगंध, गुलाब के फूल, तालमखाना, पित्तपापड़ा, चित्रक भारङ्गी, सौंफ, मुलहठी, लालचन्दन, काकड़ासिंगी, अतीस, दारू हल्दी, कौंच के बीज, आंवला, भोजपत्र, बहेड़ा, सोंठ, हरड़, सफेद मूसली, प्रियङ्ग तथा पटोलपत्र, जावित्री, केशर, कपूर के अतिरिक्त किश-मिश, छुहारा, बादाम, पिस्ता, चिरोंजी, अखरोट, गोलागिरी, आदि मेवाएं भी हवन सावग्री में मिलाई जा सकती हैं। साथ ही एक भाग जौ, दो भाग चावल, तीन भाग तिल, इन तीनों अन्नों को इस अनुपात में मिलाकर कुल हवन सामग्री का दशांश रखें। तथा हवन सामग्री का दशांश परिमाण में ही शक्कर भी मिलानी चाहिए। इस प्रकार हवन सामग्री तैयार करके रखें।

जलयात्रा का जुलूस—

यज्ञ आरम्भ होने से एक दिन पूर्व किसी नदी या तालाब से कलशों में जल भरकर लाया जाता है। इसके लिए सम्भ्रान्त परिवारों की तथा ब्राह्मण परिवारों की स्त्रियां आमंत्रित की जाती

हैं, जो कि दैनिक जीवनचर्या में भी भगवान् का ध्यान पूजन आदि करती रहती हों, इन स्त्रियों की संख्या जितनी ही अधिक होगी, उतना ही जलयात्रा का जुलूस भव्य होगा और उतना ही यज्ञ का प्रचार अधिक होगा। ये महिलाएं सब पीले वस्त्र धारण करके पंक्तिवद्ध होकर सिर पर जल के भरे कलश रखकर जब बैण्डबाजे तथा जनसमुदाय के जलूस सहित चलती हैं, तो वड़ा ही भव्य और प्रभावकारी दृश्य उपस्थित होता है। यह जुलूस जिस मार्ग से होकर निकले, उस बस्ती तथा मार्ग में मिलने वाले सब स्त्री पुरुषों को एक व्यक्ति पीले चावल देते हुए यज्ञ में सम्मिलित होने का निमंत्रण देता जाय, तो इस प्रकार अधिक से अधिक लोग आयेंगे। पहले भी कम से कम एक सप्ताह पर्यन्त समस्त स्वयं सेवक व कार्यकर्त्ता आसपास के क्षेत्रों में पीले चावल दे-देकर घर-२ जाकर लोगों को निमंत्रित करें, तो जनता का ऐसे धार्मिक अनुष्ठान में सदैव पूर्ण हार्दिक सहयोग प्राप्त होता है।

याज्ञिकों के लिए कुछ आवश्यक नियम—

(१) यज्ञ के आरम्भ से पूर्णाहुति पर्यन्त प्रत्येक याज्ञिक को पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए, तथा सांसारिक विषय-भोगों के विचार भी मस्तिष्क में नहीं फटकने देना चाहिए।

(२) यज्ञ के दिनों में याज्ञिकों को पवित्रता और स्वच्छता का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए। जब भी शौच या मूत्रत्याग आदि को जाए, तब ही स्नान करके उपरान्त यज्ञ कुण्ड के पास जाए।

(३) यज्ञ के दिनों में कम से कम मात्रा में और शुद्धसात्विक भोजन ही ग्रहण करना चाहिए यथा फल, दूध, हविष्यान्न आदि। बीच में १-२ दिन का उपवास रखना और भी श्रेष्ठ है।

(४) यज्ञ में सब याज्ञिकों को नए यज्ञोपवीत धारण करने चाहिए, तथा उनके शरीर पर कम से कम एक वस्त्र पीला अवश्य

रहना चाहिए। तथा प्रतिदिन कपड़े धोकर प्रयोग में लाए जाने चाहिए और प्रतिदिन प्रातः सायं स्नान करके यज्ञ में भाग लेना चाहिए।

(५) यज्ञ में पाजामा या मोजे पहनकर नहीं बैठना चाहिए।

(६) यज्ञ के दिनों में याज्ञिकों को अधिकाँश समय साधना; उपासना, धार्मिक साहित्य अध्ययन, भजन, कीर्तन, सत्संग और भगवत् चर्चा में ही व्यतीत करना चाहिए। इधर-उधर की सांसारिक बातों में समय नष्ट करना अथवा उनको सोचना याज्ञिको की मर्यादा के विरुद्ध है।

(७) याज्ञिकों को चाहिए कि मध्यमा और अनामिका उंगलियों पर हवन सामग्री लेकर तथा अंगूठे का सहारा देकर कुण्ड में आहुति देना चाहिए।

(८) आहुति इस प्रकार आगे को झुककर डालें कि वह सीधी कुण्ड में ही गिरे, कुण्ड से बाहर इधर-उधर न गिरे।

(९) याज्ञिकों को पालथी मारकर सीधे होकर बैठना चाहिए।

(१०) मंत्रोच्चारण सब लोग एक साथ परस्पर स्वर से स्वर मिलाकर करें। आगे पीछे बोलने से श्रोताओं को स्पष्ट रूप से कुछ सुनाई नहीं पड़ता।

(११) जब 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण हो, तभी सब याज्ञिक एक साथ सामग्री की कुण्ड में आहुति दें। आगे पीछे न दें।

(१२) जिस स्रुवा से घी की आहुति दी जाय, उसे घी से भर कर एक बार कटोरे के किनारे से तली को रगड़ते हुए आहुति के लिए कुण्ड तक ले जायें, ताकि घी मेखलाओं पर टपकता हुआ न जाय।

(१३) प्रत्येक याज्ञिक के कंधे पर यदि पीला दुपट्टा हो, तो अति उत्तम है।

(१४) घृत की आहुति के पश्चात् स्रुवा में बचे हुए घी की एक-एक बूंद प्रत्येक बार प्रणीता पात्र में टपका कर 'इदम्गायत्र्यै इदम् न मम्' इस मंत्र का उच्चारण करना चाहिए।

(१५) यज्ञशाला के भीतर इतने छोटे और नासमझ बच्चों को न जाने दें, जिन्हें टट्टी-मूत्र आदि के लिए सावधानी बरतने का ज्ञान न हो।

(१६) यज्ञ की पूर्णाहुति के समय अग्नि बहुत प्रचण्ड हो जाती है, अस्तु उस समय प्रत्येक वस्तु को आग की लपटों से बचाने के लिए पूरी-पूरी सतर्कता बरतनी चाहिए।

(१७) यज्ञ पूर्ण हो जाने के पश्चात् जब तक हवन कुण्ड की अग्नि पूर्णतया शान्त न हो जाय, उसकी देखभाल रखें।

(१८) यज्ञशाला में याज्ञिकों को चमड़े के जूते, चमड़े की घड़ी की स्ट्रैप अथवा तम्बाकू, गाँजा, चरस, भाँग, शराब आदि मादक वस्तुओं का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए।

(१९) जहाँ तक हो सके, पैरों में खड़ाऊं पहनें अथवा कपड़े के जूते या रबड़ की चप्पल आदि यज्ञशाला से बाहर निकलने पर प्रयोग कर सकते हैं। किन्तु यज्ञशाला के भीतर यदि खड़ाऊं न पहन सकें. तो नंगे पाव रहना ही अच्छा है।

(२०) यज्ञशाला के भीतर रजस्वला वाली स्त्री अथवा मूत्र-रोगादि से ग्रसित किसी स्त्री पुरुष को नहीं आना चाहिए, क्योंकि इससे यज्ञशाला की पवित्रता नष्ट होती है।

(२१) यज्ञ देखने वालों को भी नहा धोकर स्वच्छ वस्त्र पहन कर पवित्र मन, विचार और श्रद्धा भाव से ही आना चाहिए।

(२२) यदि यज्ञदर्शकों में कोई ऐसा धूर्त अज्ञानी व्यक्ति आ जाय, जो कि अवांछनीय चेष्टाएं अथवा अपवित्र विचारधारा प्रदर्शित कर रहा हो, तो उसे सामूहिक रूप से प्रताड़ित करके बाहर निकाल

देना चाहिए। स्वयं सेवकों को चाहिए कि ऐसे अवांछनीय तत्वों पर दृष्टि रखें, ताकि यज्ञ में सम्मिलित होने वाली मां बहिनों की मान-मर्यादा अक्षुण्य रहे। गायत्री यज्ञ एक महान ईश्वर आराधना है, उसे सामान्य मेले-मदार के रूप में समझकर किसी व्यक्ति को वहां नहीं जाना चाहिए।

(२३) जलयात्रा के कलश पीले रंग से पुते होने चाहिए तथा उन पर नारियल रखकर ढंकना चाहिए। नारियल के ऊपर लाल कपड़ा या कलावा आदि लपेटें।

(२४) यज्ञ कार्यों में इन कलशों को प्रयोग करने से पूर्व उनका अभिषिचन करके पवित्र कर लेना चाहिए।

(२५) कलशों की संख्या कम से कम पाँच या सात, अथवा ११, २१, ३१ या ५१ रखनी चाहिए।

इस प्रकार यज्ञ में भाग लेने वाले याज्ञिकों, प्रबन्धकों, आयोजकों, स्वयंसेवकों तथा दर्शकों सभी को परम पवित्रता के साथ, पवित्र भाव से अपना-अपना कर्त्तव्य श्रद्धापूर्वक पूरा करते हुए तथा उपरोक्त नियमों का ध्यान रखते हुए भाग लेना चाहिए। यज्ञ पूर्ण होने पर ब्राह्मण भोजन, कन्याभोज प्रसाद वितरण तथा विशाल भोज आदि का आयोजन यथा सामर्थ्य रूप में करना चाहिए।

अब यज्ञ का सम्पूर्ण विधि विधान. मंत्र, हवन पूजन आदि का विधान वर्णन किया जा रहा है। वैसे अनुभवी कर्मकाण्डी ब्राह्मण तथा विद्वान आचार्य प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर इसमें आवश्यक परिवर्तन या संशोधन भी कर लेते हैं।

कलश अभिषिचन मंत्र—

ॐ आपो हिष्ठा मयो भुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे। १। यो वः ञिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः। २। तस्मा अरंगमाम् वो यस्य क्षयाय जिन्वथ आपोजनयथा च नः। ३। ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृणवन्तु भेषजम्। ४।

उक्त मंत्रों सहित कलशों को पवित्र करने के पश्चात् स्त्रियाँ उन्हें सिर पर उठालें और नदी या सरोवर पर ले जाएँ। तब जिस स्थान पर घड़े उतार कर रखने हों, उस स्थान को पहिले अभिषिंचन करके निम्न मंत्रों द्वारा शुद्ध करें—

पृथ्वी अभिषिञ्चन मंत्र—

ॐ मही द्यौः पृथ्वी च न इमं यज्ञं मिमिक्षताम् पिपृतां नो भरीमभिः।
ॐ पृथिव्यै नमः। पृथ्यीमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि।

उपरान्त कलश उतार कर यात्रा में भाग ले रही स्त्रियों में से ही एक स्त्री सबको तिलक लगाकर हाथों की कलाई में कलावा (मंगल सूत्र) बाँधे तिलक लगा कर कलावा बांधने के समय पण्डित गण निम्न मंत्र उच्चारण करें—

तिलक करने का मंत्र—

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो बृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्वेदेवः। स्वस्ति नस्ताक्ष्र्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो वृहस्पतिर्दधातु।

कलावा बाँधने का मंत्र—

ॐ यदाबध्नन्दाक्षयाणा हिरण्य ॐ शतानीकाय सुमनस्य मानाः।
तस्यऽआवध्नामिशत शारदायायुष्मांजरदर्ष्टिर्यथासम्।

अब आचार्य सभी स्त्रियों को हाथ में फूल, चावल तथा जल देकर नीचे बाएं हाथ को लगाकर निम्न मंत्र द्वारा स्वस्ति वाचन कराएं और मंत्र पूरा होने के पश्चात् थाली लेकर प्रत्येक स्त्री के पास जाकर उसमें उनके हाथ से जल पुष्प व चावल छुड़वाते जाएं। ध्यान रहे कि स्वस्ति वाचन की ये वस्तुएं भूमि पर नहीं छुड़वानी चाहिए, क्योंकि वैसा करने से उनके पैरों तले आ जाने की सम्भावना रहती है और वे पैरों के नीचे कदापि नहीं आनी चाहिए।

स्वस्ति वाचन मंत्र—

ॐ गणानां त्वा गणपनि ॐ हवा महे प्रियाणां त्वा प्रियः पति ॐ हवा महे निधीनां त्वा निधिपतिः ॐ हवा महे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्।

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो बध्श्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्वेदेवा स्वस्ति नस्ताक्ष्योंऽ अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो वृहस्पति दधातु। २।

ॐ पयः पृथिव्यां पयःऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम्। ३।

ॐ विष्णो राटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यरसि विष्णोध्रु्वोऽसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा। ४।

ॐ अग्नि देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रो देवताऽदित्या देवता मरुतो देवताविश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवताः। ५।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ॐ शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः बनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ॐ शान्तिः शान्तिरेव शान्ति सा मा शान्तिरेधि। ६।

ॐ विश्वानि देव सवितु र्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्ना आ सुव। ७।

ॐ शान्ति! शान्ति! शान्तिः।

स्वस्ति वाचन के पश्चात् समस्त देवी देवताओं को सादर प्रणाम करते हुए आचार्य निम्न मंत्र उच्चारें—

ॐ सिद्धि बुद्धि सहितं श्री मन्महागणाधिपतये नमः।

ॐ लक्ष्मीनारायणभ्यान्नमः।

ॐ उमा महेश्वरायाभ्यान्नमः।

ॐ वाणी हिरण्य गर्भाभ्यान्नमः।

ॐ शची पुरन्दराभ्यान्नम्ः।

ॐ मातृ पितृ चरण कमलेभ्यो नमः।

ॐ कुलदेवताभ्यो नमः । ॐ इष्ट देवताभ्यो नमः ।
ॐ ग्राम देवताभ्यो नमः । ॐ स्थान देवाताभ्यो नमः ।
ॐ वास्तु देवताभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यस्तीर्थेभ्यो नमः ।
ॐ श्री गायत्री देव्यै नमः । ॐ पुण्यं पुण्याऽहं दीर्घमायुरस्तु ।

फिर कलशों में जल भरने से पूर्व वरुण देव का आवाहन तथा पञ्चोपचार पूजन भक्ति भाव से इस प्रकार कराएँ ।

पञ्चोपचार पूजनम्—

ॐ वरुण स्योत्तमम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भ सर्जनी स्वो वरुणास्य ऋत सदसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदन मासीद । वरुणाय नमः गन्धादिभिः सम्पूज्यः ।

उक्त मंत्रोच्चार के पश्चात् सभी उपस्थित लोग हाथ जोड़कर वरुण देवता को 'नमस्त्वन्ताय' कहते हुए प्रणाम करें । अब सब स्त्रियाँ अपने-२ कलश उठाकर उन्हें नदी या जलाशय के जलसे भरलें, तथा मङ्गल गीत गाती हुई यज्ञ शाला की ओर जुलूस के रूप में ले जाएँ । वहाँ पहुँचकर सब स्त्रियाँ सावधानी से अलग-२ कलश सिर पर से उतार कर यज्ञ मण्डप में रखें । उस समय आचार्य तथा अन्य पण्डित जन निम्न मंत्र बोलें—

कलश स्थापना मंत्र —

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाभद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ।

इस प्रकार १-१ कलश यज्ञशाला के चारों कोनों पर. एक कलश प्रधान वेदी पर तथा शेष कलश यज्ञ मण्डप में सजाकर रख दें । तथा जलयात्रा में भाग लेने वाली स्त्रियों को प्रसाद व आशीर्वाद देने के लिए 'श्रीवर्चस्व०' या 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' आदि मंत्र बोलें ।

उपरान्त यज्ञ में भाग लेने वाले सभी ब्राह्मणों आदि को हाथ पैर धुलाकर कुल्ला कराकर निम्न मंत्रोच्चार सहित यज्ञशाला में प्रवेश कराएं. तथा निर्दिष्ट स्थानों पर बिठाएं ।

यज्ञशाला प्रविष्टि मंत्र—

ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरंस्तुष्टुवा ᳪ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ।

संध्या षट्कर्म

इसके उपरान्त यज्ञ में भाग लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति का सन्ध्या षट्कर्म द्वारा शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार से पवित्रीकरण कराना नितान्त आवश्यक है, अस्तु सब लोग अपना २ स्थान ग्रहण कर निम्न मंत्रोच्चार के साथ सन्ध्या षट्कर्म पूर्ण करें :—

१—पवित्री करण—

मंत्र—ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाँ गतोऽपिवा ।
यः स्मरेत पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।

इस मंत्र के साथ प्रत्येक व्यक्ति हाथ में जल लेकर अपने समस्त शरीर पर छिड़क लें ।

आचमन—फिर सामने रखे पात्र में से जल की चम्मच भरकर निम्न मंत्रों के साथ क्रमशः तीन बार मुँह में डालकर आचमन करें । यदि चम्मच न हो, तो हाथ में ही जल लेकर आचमन करें, किन्तु झूठे हाथ को यज्ञशाला से बाहर जाकर धो आएँ, ताकि जूठा जल यज्ञशाला में न गिरे ।

मंत्र—ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा । (प्रथम आचमन)
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा । (द्वितीय आचमन)
ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा । (तृतीय)

शिखा बन्धन—अब सब यजमान निम्न मंत्र उच्चारण करके अपनी २ चोटी में गाँठ लगाएँ । यदि चोटी न हो, तो केवल चोटी के स्थान पर दांया हाथ रख लें ।

मंत्र—ॐ चिद् रूपिणि महामाये दिब्यतेजः समन्विते ।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये तेजो वृद्धि कुरुष्व मे ।

(४) **प्राणायाम**—आन्तरिक सूक्ष्म इन्द्रियों की पवित्रता के लिए प्राणायाम एक उत्तम यौगिक क्रिया है, अस्तु सभी याज्ञिक दाएं हाथ की कोहनी को बाएं हाथ की हथेली पर रखकर दाएं हाथ के अंगूठे से नाक का दायां स्वर बन्द कर लें और बाएं स्वर से पूर्ण श्वास खींच-कर अधिकाधिक समय तक रोके रखें, फिर मध्यमा और कनिष्ठा अंगुलियों से नाक का बायां स्वर बन्द कर दाएं स्वर द्वारा श्वास धीरे २ करके निकाल दें। यह एक प्राणायाम हुआ। इस प्रकार से प्राणायाम करने से पूर्व सभी याज्ञिक एक साथ निम्न मंत्र का उच्चा-रण करें, और तब उक्त विधि से प्राणायाम करें।

मंत्र—ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम तत्सवितुर्वरेण्य भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। आपो ज्योति रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वः।

(५) **अंग न्यास**—अब सब याज्ञिक बायीं हथेली में जल लेकर दाएं हाथ की अंगुलियों को सम्बद्ध कर निम्न मंत्रों का उच्चारण करते हुए क्रमशः विभिन्न अंगों को जल में भींगी अंगुलियों से स्पर्श करते हुए अंग न्यास करें, किन्तु पहले बाई ओर के अंग का न्यास करें, उपरान्त दायीं ओर के अंगों का।

मंत्र—मुख न्यास—'ॐ वाङ्मे आस्येऽस्तु'
नासिका न्यास—'ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु'
नेत्र न्यास—'ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरऽस्तु'
कर्ण न्यास—'ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु,
भुजा न्यास—'ॐ बाह्योर्मे वज्रमस्तु'
स्कन्ध न्यास—'ॐ ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु'
सम्पूर्ण शरीर न्यास—'ॐ अरिष्टानिमेऽङ्गनितनूस्तन्ता मे सह सन्तु'
इस मंत्र के साथ सम्पूर्ण शरीर पर जल छिड़कें।

(६) **पृथ्वी पूजनम्**—निम्न मंत्रोच्चार सहित सभी लोग पृथ्वी

पर जल, अक्षत, चन्दन, पुष्प आदि चढ़ाकर हाथ जोड़कर नमस्कार करें—

मंत्र—ॐ पृथ्वी त्वया घृता लोका देवि त्वं विष्णुना घृता त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ।

यज्ञोपवीत धारणम्—यज्ञ में भाग लेने वाले सभी याज्ञिकों के पुराने यज्ञोपवीत उतरवाकर नए यज्ञोपवीत धारण कराएं।

धारण मंत्र—ॐ यज्ञो पवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्रयं प्रति गुञ्ज शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।

पुराना यज्ञोपवीत इस मंत्रोच्चार से उतारें—

ॐ एतावद् दिन पर्यन्तं ब्रह्म त्वं धारितं मया ।
जीर्ण त्वान्ते परित्यागो गच्छ सूत्र यथा सुखम् ।

उपरान्त आचार्यवरण किया जाना चाहिए ।

आचार्य वरण व तिलक

आचार्य वरण के लिए याज्ञिकों में से कोई एक पंडित निम्न आचार्य वरण का मंत्र पढ़ते हुए उनके हाथ में कलावा बाँधे—

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणायाप्नोति श्रद्धां श्रद्धया सत्यमाप्यते ।

फिर निम्न मंत्र सहित आचार्य के भाल पर तिलक करे—

ॐ गन्धं द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणम् ।
ईश्वरीं सर्वं भूतानां तामिहोपवये श्रियम् ।

यजमान वरण व तिलक

इसके पश्चात् आचार्य द्वारा समस्त याज्ञिकों के हाथों में कलावा बाँधकर यजमान वरण किया जाता है, और फिर यजमान तिलक होता है दोनों कार्यो के लिए क्रमशः निम्न मंत्रों का उच्चारण किया जाता है—

वरण—ॐ यदाबध्नन्दायणां हिरण्य ॐ शतानीकाय सुमनस्थ माना:। तन्मऽआवघ्नामि शत शारदायाऽयुष्मांजरदष्टिर्यथासनम्।

तिलक—ॐ स्वस्तिन: इन्द्रौ वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा विश्ववेदा:। स्वस्तिनस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमि: स्वस्तिनौ वृहस्पतिर्दधातु।

संकल्प—यज्ञ कार्य में भाग लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति को निम्न मंत्रोच्चार के समय मास, पक्ष, तिथि वार तथा अपना नाम गोत्र आदि यथा स्थान ठीक २ बोलते हुए सङ्कल्प करना चाहिए। सङ्कल्प मंत्र इस प्रकार है :—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु: श्रीमद्‌भगवतो महा पुरुषस्य विष्णो राज्ञया प्रवर्त मानस्य अद्य श्री ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे, श्री श्वेत वाराह कल्पे, वैवस्वतमन्वन्तरे. अष्टा विंशति तमे कलौ, कलियुगे प्रथम चरणे, भू लोके भारत वर्षे, अस्मिन वर्तमाने....मासे...पक्षे....तिथौ...वासरे...गोत्रोत्पन्न: नामाहं, विश्व सुख शान्ति समृद्धयर्थ, सर्व प्राणिनां कल्याणाय, मानवोचित धर्म पालनार्थ, सुसंस्कृति रक्षणाय, समस्त राष्ट्रोद्धारार्थं हिंसासुरत्व नाशार्थ, सत्यव्रत साम्य भाव निर्वाहार्थं च इमं यज्ञमहं करिष्ये।

दीप पूजनम्

एक मिट्टी के नए दीवे या स्वच्छ कटोरी में शुद्ध गौ घृत भरकर उसमें नई रुई की बत्ती बनाकर डालें, और दीप को प्रज्वलित करके निम्न मंत्र से अक्षत पुष्प नैवेद्य आदि द्वारा विधिवत पूजा करें।

मंत्र—ॐ अग्नि र्ज्योति ज्योतिरग्नि: स्वाहा। सूर्य्योज्योति र्ज्योति: सूर्य्य: स्वाहा। अग्निर्वर्चो ज्योति र्वर्च्च: स्वाहा। सूर्य्योवर्चो ज्योतिर्वर्च्च: स्वाहा ज्योति: सूर्य्य: सूर्य्यो ज्योति: स्वाहा।

कलश पूजनम्

उपरान्त प्रधान वेदी पर रखे हुए कलश का विधिवत पूजन करते हुए निम्न मंत्र उच्चारण करें—

मंत्र—ॐ तत्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भि: अहेड़ मानो वरूणेहं वोध्युरुशं समानऽआयु: प्रमोषी:। इस मंत्र से आवाहन करने के

पश्चात निम्न स्तुति द्वारा कलश की हाथ जोड़कर प्रार्थना करें—

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः. समाश्रितः ।
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।

कुक्षो तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा बसुन्धरशः ।
ऋग्वेदौच यजुर्वेदौ सामवेदो ह्यथर्वणः ।

अंगेश्च सरिताः सर्वे कलशन्तु समाश्रिताः ।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति पुष्टि करी सदा ।

त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।
शिवः स्वयं त्वमेवासि धिष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ।

आदित्या बसवो रुद्रा विश्वे देवाः सपैतृकाः ।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः काम फलप्रदाः ।

त्वत्प्रसादादियं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भवः ।
सान्निध्यंकुरु मे देवा प्रसन्नो भव सर्वदा ।

पञ्चवेदी स्थापना

इसके पश्चात् पञ्चवेदी स्थापना की जाती है। चूंकि (क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा, पंच तत्व मिलि बनेहु शरीरा) सृष्टि मात्र, इस पाँच तत्वों से ही बनी है, इसलिए विभिन्न दिशाओं में इन पाँचों को देवता मानकर पाँच वेदियां स्थापित की जाती हैं। प्रमुख वेदी सर्वतोभद्रमण्डल पूर्व दिशा में, अग्नि देवता की वेदी पूर्व, दक्षिण के बीच आग्नेय कोण में, पृथ्वी देवता की वेदी नैर्ऋत्य कोण में अर्थात् दक्षिण व पश्चिम के मध्य में, वायु देवता की वेदी वायव्य कोण में अर्थात् पश्चिम व उत्तर के मध्य में, तथा वरुण देवता की वेदी उत्तर और पूर्व के मध्य ईशान कोण में स्थापित की जाती है। इन वेदियों पर उनके गुणानुसार विभिन्न रंग प्रयोग किए जाते हैं यथा—अग्नि

देव की वेदी पर लाल रंग, पृथ्वी देवता की वेदी पर हरा रंग, वायु देवता की वेदी पर पीला रंग, वरुण देवता की वेदी पर काला रंग तथा आकाश देवता की वेदी पर श्वेत रंग का प्रयोग होता है। उक्त प्रकार के रंगों में चावल रंग कर षटकोण वेदियाँ स्थापित कर उन पर कलश धरें।

सर्वतो भद्रमण्डल पूजनम्

प्रधान वेदी जो कि पूर्व दिशा में सर्वतो भद्रमण्डल की प्रतीक स्वरूप होती है, उस पर क्रमशः तैंतीस देवताओं का विधिवत् पूजन, आवाहन तथा श्रद्धा भक्ति पूर्वक प्रणाम करना चाहिए। ताकि उस एक वेदी पर ही उन समस्त देवताओं की शक्ति केन्द्रित हो, और उपासक परमात्मा की उन विविध शक्तियों की पूजा ध्यान तथा आवाहन कर सके।

तैंतीस देवताओं का पूजन

१ **श्री गणेश पूजनम्**—ॐ गणानां त्वा गणपति ँ हवा महे प्रियाणांत्वा प्रियपति ँ हवा महे निधीनां त्वा निधिपति ँ हवा महे बसो मम। आहम-जानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम। ॐ गणपतये नमः। गणपतिमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

२ **गौरी पूजन**—ॐ आयङ्गौः पृश्चिनरक्रमीदसदन् मातरं पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः। ॐ गौर्यै नमः। गौरी मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

३ **ब्रह्मा पूजन**— ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमितः सुरुचो वेनऽआवः। स बुघ्न्याऽउपमाऽस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विषः। ॐ ब्रह्मणे नमः ब्रह्मणामावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

४ **विष्णु पूजन**—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे मेधा निदधेपदम्। समूढ़मस्य पा ँ सुरे स्वाहा। ॐ विष्णवे नमः विष्णु मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

५ **रुद्र पूजनम्**—ॐ नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नमः बाहुभ्यामुत ते नमः। रुद्रमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

६ **गायत्री पूजन**—ॐ गायत्री त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पंक्त्या सह। वृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिः शक्यन्तु त्वा। ॐ गायत्र्यै नमः। गायत्री मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

७ **सरस्वती पूजन**—ॐ पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती यज्ञं वष्टु धियावसुः। सरस्वती मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

८ **लक्ष्मी पूजन**—ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहो रात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनो व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं मऽइषाण सर्वलोकमऽइषाण। ॐ लक्ष्म्यै नमः। लक्ष्मी मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

९ **दुर्गा पूजन**—ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरतात्यग्निः। ॐ दुर्गायै नमः। दुर्गा मावा हयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१० **अग्नि पूजन**—ॐ त्वं नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितम शोशुचानो विश्वा द्वेषाᳬसि प्रमुमुग्ध्यस्मत्। ॐ अग्नयेनमः। अग्निमावाहयामि स्थापयामि ध्यायामि।

११ **पृथ्वी पूजन**—ॐ महीद्यौः पृथिवी चनऽइमं यज्ञं मिमिक्षताम पिपृतां नो भरीमभिः। ॐ पृथिव्यैनमः। पृथ्वीमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१२ **वायु पूजन**—ॐ आनो नियुद्भिः शतनीभिरध्वरᳬ सहस्रिणीभिरूप याहि यज्ञम्। वायोऽस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः। ॐ वायवे नमः। वायुमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१३ **इन्द्र पूजन**—ॐ त्रातार मिन्द्र मवितार मिन्द्र ॐ हवे हवे सुहव ॐ शूरमिन्द्रम्। ह्वयामि शक्रं पुरुहूत मिन्द्र ॐ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः। ॐ इन्द्राय नमः। इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१४ **यमराज पूजन**—ॐ सुगन्नुषं थां प्रदिशन्नऽएहि ज्योतिष्मध्येह्य जरन्नऽआयुः। अपेतु मृत्युममृत मऽआगद्वैवस्वतो नो ऽ अभयं कृणोतु। ॐ यमाय नमः। यममावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१५ **कुबेर पूजन**—ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वय वैश्रवणाय कुर्वहे। मेस कामान्काममकामाय मह्य कामेश्वरो वै श्रवणी ददातु। कुबेराय वै श्रवणाय महाराजाय नमः। ॐ कुबेराय नमः। कुबेरमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१६ **अश्विनी कुमार पूजन**—ॐ अश्विना तेजसा चक्षुः प्राणेन सरस्वती वीर्यम्। वाचेन्द्रो बलेनेन्द्रायदधुरिन्द्रियम् ॐ अश्विनीकुमाराभ्यां नमः। अश्विनी कुमार मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१७ **सूर्य पूजन**—ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यंच। हिरण्येन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्। ॐ सूर्याय नमः सूर्यमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१८ **चन्द्रमा पूजन**—ॐ इमं देवाऽअसपन्न ँ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठयाय महते जानराज्यायेस्येन्द्रियाय इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्र मस्यै विशऽ एष वोऽमीराजा सो मोऽस्माकं ब्राह्मणाना ँ प्रजा। ॐ चन्द्रमसे नमः। चन्द्रमसमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

१९ **मंगल पूजन**—ॐ अग्निमूर्द्धा दिवः ककुत्पतिःपृथिव्या ऽअयम्। अपा ँ देना ँ नि जिन्वति। ॐ भौमाय नमः। भौम मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

२० **बुध पूजन**—ॐ उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते स ँ सजेथाममं च। अस्मिन् सधस्थेऽमध्युत्तरस्मिन विश्वे देवा यजमानश्च सीदत। ॐ बुधाय नमः। बुधमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

२१ **वृहस्पति पूजन**—ॐ वृहस्पतेऽअति द्‌दर्योऽअर्हाद्‌ द्यु मद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद् दीदयच्छ्वेवसऽम्यत प्रजात तदस्यासु द्रविणं धेहि चित्रम्। उपया

मग्रहीतोऽसि वृहस्पतये त्वैष ते योनिवृहस्पतये त्वा । ॐ वृहस्पतये मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२२ **शुक्र पूजन**—ॐ अन्नात्परिस्त्रु तो रसं ब्रह्मणा व्यपिवत् क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान ँ शुक्र-मन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु । ॐ शुक्रायनमः । शुक्रमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२३ **शनि पूजन**—ॐ शन्नो देवीरभिष्टमऽआपो भवन्तु पीतये । शंयोरभि-स्त्रवन्तु नः । ॐ शनैश्चराय नमः । शनिश्चर मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२४ **राहु पूजन**—ॐ कया नाश्चित्रयऽआ भुवइती सदा वृधः सखा । कया शचिष्ठयावृता । ॐ राहवे नमः । राहुमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२५ **केतु पूजन**—ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्याऽ अपेशसे । समुपद्-भिर जायथाः । ॐ केतवे नमः । केतुमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२६ **गंगा पूजन**—ॐ पञ्च नद्यः सरस्वती मपि यन्ति सस्त्रोतसः । सर-स्वती तु पञ्चासो देशेऽभवत्सरित् । ॐ गङ्गायै नमः गङ्गामावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२७ **पितृ पूजन**—ॐ पितृभ्यः स्वधायिम्यः स्वधा नमः पितामहेम्यः स्व-धायिम्यः स्वधानमः । प्रतितामहेम्यः स्वधायिम्यः स्वधा नमः । अक्षन्पितरोऽ-मीमदन्त पितरोतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् । ॐ पितृभ्यो नमः । पितृ-मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२८ **इन्द्राणी पूजन**—ॐ आदित्यै रास्नासीन्द्राण्याः उष्णीषः । पूषासि धर्माय दीष्वः । ॐ इन्द्राण्यै नमः । इन्द्राणीमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

२९ **रुद्राणी पूजन**—ॐ याते रुद्र शिवातनूर घोराः पापकाशिनी । तया नमस्तन्वा शन्त मया गिरिशन्ताभिचाकशीहि । ॐ रुद्राण्यै नमः । रुद्राणीमावा-हयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि ।

३० **ब्रह्माणी पूजन**—ॐ इन्द्रा याहि धियेषितो विप्रदूतः। सुतायतः उपब्रह्माणि बाघनाः ॐ ब्रह्माण्यै नमः ब्रह्माणी मावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

३१ **नाग पूजन**—ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। येऽन्तरिक्षे ये दिवितेभ्यः सर्पेभ्यो नमः। ॐ सर्पेभ्यो नमः। सर्पामावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

३२ **वास्तु पूजन**—ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यरम स्वान्तस्ववेशो अनमीवो भवा नः। यत्वेमेहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नोभव द्विपदे शं चतुष्पदे। ॐ वास्तुपुरुषाय नमः। वास्तु पुरुषमावाहयामि स्थापयामि पूजायामि ध्यायामि।

३३ **आकाश पूजन**—ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विनायूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षितम्। उपयामगृहीतोऽस्यशिवभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वौभ्यां त्वा। ॐ आकाशायनमः आकाशमावाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

षोडशोपचार पूजन

उपरोक्त मंत्रों द्वारा तैंतीस देवताओं का आवाहन करने के पश्चात् उनका सम्मिलित षोडशोपचार पूजन करें।

१ **आवाहन**—ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्ः।
स भूमि ँ सर्वत स्पृत्वात्यतिष्ठ द्दशांगुलम्।

२ **आसन समर्पण**—

ॐ पुरुषऽ एवेद ँ सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्ने का तिरोहति।

३ **पाद्य समर्पण**—

ॐ एतवागस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपाद स्थामृतंदिवि।

४ अर्घ्यदान—

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभिः।

५ आचमन—

ॐ ततो विराडजायते विराजो अधि पूरुषः।
स जातोऽअत्यरिच्यत् पश्चाद्भमिमथो पुरः।

६ स्नान—

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृष्दाज्यम्।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्याग्राम्याश्च ये।

७ वस्त्र समर्पण—

ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतःऽऋचः सामानिजज्ञिरे।
छंदा ँ सिजज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायते।

८ यज्ञोपवीत समर्पण—

ॐ तस्मादश्वा अजायत्तं ये के चोभयादतः।
गावोहजज्ञिरे तस्मात्तस्माताज्जत ऽअजावयः।

९ गन्ध समर्पण—

ॐ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवाऽअयजन्त साध्यांऽऋषयश्च ये।

१० पुष्पाणि समर्पण—

ॐ यत पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादाऽउच्येते।

११ धूप समर्पण—

ॐ ब्रह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्याः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पदभ्या ँ शूद्रोऽअजायत।

१२ दीप समर्पण—

ॐ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षौः सूर्योऽग्राजायत ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखदग्निरजायत ।

१३ नैवेद्य समर्पण—

ॐ नाभ्याऽ ग्रासीदन्तरिक्षँ शीर्ष्णोद्यौ समवर्त्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशिः श्रोत्रात्तथा लोकांऽग्रकल्पयन् ।

१४ ताम्बूल पुङ्गीफल समर्पण

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवायज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः ।

१५ प्रदक्षिणा—

ॐ सप्तास्यासन्परिधय स्त्रिः सप्तसमिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञं तन्वानाऽग्रवध्नन् पुरुषं पशुम् ।

१६ मन्त्रपुष्पाञ्जलि समर्पण—

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासनं
ते हनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्तिदेवाः

उक्त मंत्रों सहित षोडशोपचार पूजन करने के उपरान्त प्रधान वेदी से उठकर ग्राग्नेयकोण में स्थित अग्नि देवता की वेदी पर बैठ जाना चाहिए। तथा निम्न मंत्रों द्वारा उनका ग्रावाहन पूजन ध्यान ग्रादि करके हाथ जोड़कर नमस्कार करें।

अग्नि देव पूजन

ॐ अग्निदूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवां २ ऽ आ सादयादिह।
ॐ अग्नि ँ स्तोमेन बोधय समिधानोऽ अमर्त्यम् हव्या देवेषु नो दधत्।
ॐ अग्नि युनज्मि शवसा घृतेन दिव्य ँ सुपर्ण वयसा वृहन्तम्।
तेन वयं गमेम ब्रध्नस्यं विष्टप ँ स्वोरुहाणा ऽअधिनाकनुत्तमम्।
ॐ अग्नि तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनवः अस्तमर्वन्तऽआशीवोऽस्तंनित्यासो बांजिनऽइष ँ स्तोतृभ्य ऽ आ भर।

ॐ अग्नि ँ हृदयेनाशनि ॐ हृदयाग्रेय पशुपतिं कृतस्नहृदयेन भवं यक्ना।
सर्वं मतंस्नाभ्यामीशानं मन्युना महादेवमन्तः पर्श व्येनोग्रं देवं व निष्ठुना वसिष्ठहनुः शिंगीनि कोश्याम्याम्।

पृथ्वी देव पूजनम्

इसके पश्चात् नैॠत्यकोण में पृथ्वी देव की वेदी पर बैठकर निम्न मंत्रों सहित उनका विधिवत् आवाहन पूजन आदि करें।

ॐ पृथ्वी देवयजन्यो पध्यास्ते मूलं माहि ॐ सिषं व्रजं गच्छ गोष्ठानं धर्षंतु ते द्यौर्वंधान देव सवितः परंमस्यां पृथिव्या ॐ शतेन पाशेर्योऽस्यान्द्वेष्टि यंवयं द्विष्मस्तमतो मा मोक।

ॐ पृथिवी छन्दोऽन्तरिक्षं छन्दो द्मौश्छन्दः समाश्छन्दो नक्षत्राणि छन्दो वाक् छन्दो ममश्छन्दः कृषिश्छन्दो हिरण्य छन्दो गौश्छन्दोऽजाच्छंदोश्रश्वश्छन्दः।

ॐ पृथिव्याः सधस्थादग्नि पुरीष्य मंगिरस्वदा भाराग्नि पुरोष्यमंगिर स्वच्छेमोऽग्नि पुरोष्यमंगिर स्वद् भरिष्यामः।

ॐ पृथिव्या : पुरीषमस्यच्सो नामतांत्वा विश्वेऽ अभिगृणन्तु देवाः। स्तोमपृष्ठा घृतवदीह सीद प्रजावदस्मे द्रविणा यजस्वा शिवनाध्वर्यू सादयता मिहित्वा।

ॐ पृथिव्याऽग्रहमुन्दन्तरिक्ष मारुहमन्तरिक्षाद्दिव मारुहम् । दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्वज्योतिर्गामिहम् ।

वायु देव पूजनम्

अब पृथ्वी देव की वेदी से उठकर वायव्यकोण में स्थापित वायुदेव की वेदी पर आकर निम्न मंत्रों से उनका विधिवत् आवाहन पूजनादि करें :—

ॐ वाया: पूत: पवित्रेण प्रत्यङ्क्‌ सोमोऽग्रतिद्रुत: । इन्द्रस्य युज्य: सखा । वायो पूत: पवित्रेण प्रा ङ्‌ सोमोऽग्रतिद्रुत: । इन्द्रस्य युज्य: सखा ।

ॐ वायो शुक्रो अयामि ते मध्वोऽग्रर्ग्रदिविष्टषु । आ याहि सोमपीतये स्पार्हो देव नियुत्वता ।

ॐ वायुरग्रेणा यज्ञप्री: साकं गन्मनसा यज्ञम् । शिवो नियुद्भि: शिवाभि: ।

ॐ वायो ये ते सहस्त्रिणो रथा सस्तेभिरा गहि । नियुत्वान्त्सोम पीयते ।

ॐ वायु: पुनातु सविता पुनात्वग्ने भ्राजिसा सूर्य्यस्य वर्चसा । विमुच्यं-न्यानुस्त्रिया: ।

वरुण देव पूजनम्

अब ईशान कोण में स्थापित वरूण देव की वेदी पर आकर उनका आवाहन पूजनादि इस प्रकार करें :—

ॐ आपवस्व हिरण्यवदश्ववत्सोम वीटवत् । वाजं गोमन्तमामर स्वाहा । ॐ आपोहिष्ठा मयो भुवस्ता न: ऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ।

ॐ आपो देवी ! प्रतिगृम्णीत भस्मैतत्स्योने कृणुध्व ७ सुरभाऽउलोके । तस्मै नमन्तां जनय: सुपत्नी व्यतिव पुत्रं विभूताप्स्वेनत् ।

ॐ आपोह यद्बृहती विश्वमायन् गर्भदधाना जनयन्तीरग्निम् । ततो देवाना ॐ समवर्त्ततासुरेक: कस्मै देवात हविषा विधेम ।

ॐ आपश्चितिपप्यु स्तर्यो न गावो नक्षन्नृत जरितारस्तुऽइन्द्र। याहि वायुर्न नियुतो नी ऽअच्छात्व ॐ हि धीभिर्दय से विवाजान्।

ॐ आपः शिवाः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्त तमास्तास्ते कृण्वन्तु भेपजम।

उपरान्त सामूहिक रूप से सब लोग हाथ जोड़ कर अन्यान्य समस्त देवताओं का आवाहन पूजनादि करें।

सामान्य देव पूजनम्

गुरुर्ब्रह्मा गुर्रुविष्णु: गुरुर्देवा महेश्वर:।
गुरुरेव पर ब्रह्मः तस्मै श्री गुरुवे नमः।

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः।

आयातु वरदे देवि अक्षरे ब्रह्मवादिनी।
गायत्रि छन्दसां माता ब्रह्मयोनिर्नमोस्तु ते।

अभीप्सितार्थ सिद्धयर्थ पूजितो यः सुरासुरै:।
सर्व विघ्न हरस्तस्मै गणाधिपतये नमः।

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरी नारायणी नमोस्तु ते।

शुक्लाम्बर धरं देवं शशिवर्ण चतुर्भुजम्।
प्रसन्न वदनं ध्यायेत्सर्व विघ्नोपशान्तये।

सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाम मङ्गलमू।
येषां हृदिस्थो भगवता मङ्गलायतनो हरि:।

मङ्गलं भगवान विष्णुः मङ्गलं गरुड़ध्वजः ।
मङ्गलं पुंडरी काक्षौ मङ्गलायतनो हरि : ।

विनायकं गुरुं भानु ब्रह्मा विष्णु महेश्वराम ।
सरस्वतीं प्रणम्यादौ शान्ति कार्यार्थ सिद्धये ।

त्वं वै चतुर्मुखो ब्रह्मा सत्य लोक पितामहं ।
आगच्छ मण्डले चास्मिन्मम सर्वार्थ सिद्धये ।

शान्ता कारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं ।
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।

लक्ष्मी कान्तं कमल नयनं योगभिर्ध्या नगम्यहम् ।
वन्दै विष्णु भवभय हरणं सर्वलोकैकनाथम् ।

शुक्लां ब्रह्म विचार सार परमां माद्यां जगद्व्यापिणीम् ।
वीणा पुस्तक धारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ।
हस्तेस्फटिक मालिकां बिद्धतीं पद्मासने संस्थिताम् ।
वन्दे त्वां परमेश्वरीं भगवती बुद्धिप्रदां शारदाम् ।

आर्द्रा पुष्करिणीं पुष्टि सुवर्णा हेममालिनीम् ।
सूर्या हिरण्यमयीं लक्ष्मी जात वेदोम आवह ।
कालिकां तु कालातीतां कल्याणीं हृदयां शिवाम् ।
कल्याण जननीं नित्यं कल्याणी पूजयाम्यहम् ।

वन्दे देव उमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणम् ।
वन्दे पन्नग भूषणं मृगधरं वन्दे पशूनाम्पतिम् ।
वन्दे सूर्य शशांक वह्नि नयनं वन्दे मुकुन्द प्रियम् ।
वन्दे भक्त जनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम् ।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टि वर्धनम् ।
उर्वारुकमिय वन्धान्मृत्यो र्मुक्षीय माऽमृतात् ।

दुर्दे स्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो :।
स्यस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्रय दुःखभयहारिणि का त्वदन्या।
सर्वोपकार कारणाय सदार्द्र चिन्ताः।

विष्णु पादाब्ज सम्भूते गंगे त्रिपथगामिनी।
धर्म द्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि।

पुष्कराधानि तीर्थानि गंगाद्याः सरितस्तथा।
आगच्छन्तु पवित्राणि पूजाकाले सदामम।

गौरीपद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोक मातरः।

हृष्टिः पुष्टि स्तथा तुष्टिरात्मनः कुल देवता।
गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडशः।

कीर्ति लक्ष्मी धृतिर्मेधा सिद्धः प्रज्ञा सरस्वती।
मांगल्येषु प्रपूज्यांश्च सप्तैता दिव्यमातरः।

ब्रह्मामुरारी स्त्रिपुरान्त कारी भानु शशी भूमिसुतो बुधश्चः
गुढश्च शुक्रः शनि राहुकेतवः सर्वेग्रहा : शांतिकरा भवन्तु।

नाग पृष्ठ समारूढं शूलहस्तं महाबलम्।
पाताल नायकं देवं वास्तु देवं नमाम्यहम्।

क्षेत्रशालान्नमस्यामि सर्वारिष्ट निवारकान्।
अस्य मागस्य सिद्धयर्थं पूजयाराधितान्म या।
ॐ सिद्धि बुद्धि सहित श्रीयन्महागणाधिपतयेनमः।
ॐ लक्ष्मी नारायणाभ्यान्नमः।
ॐ उमा महेश्वराभ्यान्नमः।
ॐ वाणी हिरण्य गर्भाभ्यान्नमः।

ॐ शची पुरन्दराभ्यान्नमः ।

ॐ मातृ पितृ चरण कमलेभ्यो नमः

ॐ कुल देवताभ्यो नमः

ॐ इष्ट देवताभ्यो नमः

ॐ ग्राम देवताभ्यो नमः

ॐ वास्तु देवताभ्योनमः ।

ॐ सर्वेभ्यो देवताभ्यो नमः ।

ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः ।

ॐ सर्वेभ्यस्तीर्थेभ्यो नमः ।

ॐ श्री गायत्री दैव्यैः नमः ।

ॐ पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ।

षोडशोपचार पूजन

ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः । आवाहयामि स्थापयामि ।
आसनं समर्पयामि । पाद्यं समर्पयामि । अर्ध्य समर्पयामि ।
आचमनम् समर्पयामि । स्नानम् समर्पयामि । वस्त्रं समर्पयामि ।
यज्ञोपवीतं समर्पयामि । गन्धं समर्पयामि । पुष्पाणि समर्पयामि ।
धूपम् समर्पयामि । दीपम् समर्पयामि । नैवेद्यम् समर्पयामि ।
अक्षतान् समर्पयामि । ताम्बूल पुङ्गीफलानि समर्पयामि ।
दक्षिणां समर्पयामि । सर्वाभावे अक्षतान् समर्पयामि ।
नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्र मूर्तये सहस्त्र पादाक्षिशिरोरुवाहवे ।
सहस्त्र नाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्रकोटि युग धारिणे नमः

स्वस्ति वाचन

प्रत्येक व्यक्ति हाथ में अक्षत् जल, पुष्प, आदि लेकर निम्न मंत्रों से स्वस्ति वाचन करे और फिर एक थाली आदि में सब लोग हाथ की वस्तुएँ छोड़ दें। इन वस्तुओं को नीचे नहीं गिराना चाहिए, क्योंकि इनका पैरों के नीचे आना उचित नहीं।

मंत्र - ॐ गणानां त्वा गणपति ँ हवांवहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ हवामहे निधीनां त्वा निधिपति ँ हवामहे बसोमम आहमजानि गर्मधमा त्वम जासि गर्भधम। १॥

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदा: स्वस्ति नस्ताक्ष्योंऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो वृहस्पतिर्दधातु। २॥

ॐ पयः पृथिव्यां पय: ऽओषधीषु दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्। ३॥

ॐ विष्णो रराटऽमसि विष्णो: श्नप्त्रेस्थो विष्णो: स्यूरसि विष्णो ध्रुवोऽसि वैष्णवमसि वैष्णवे त्वा। ४॥

ॐ अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता बसवो देवता रुद्रो देवता ऽदित्यां देवता मरुतो देवता विश्वे देवा देवता वृहस्पति र्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवताः। ५॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्ति र्ब्रह्म शान्तिः सर्वं ॐ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि। ६॥

ॐ विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परा सुव यद्भद्रं तन्न आ सुव। ७॥
ॐ शांतिः! शांतिः!! शान्तिः!!!

रक्षा विधान

अब आचार्य हाथ में अक्षत लेकर निम्न मंत्रोच्चार के साथ दसों दिशाओं में उन्हें फेंकते जायं, और मन ही मन इस भावना सहित

परमात्मा से प्रार्थना करें कि वह इस शुभ यज्ञ में आसुरी शक्तियों द्वारा उपस्थित किए जाने वाले विघ्नों से रक्षा करें।

रक्षामंत्र—ॐ पूर्वे रक्षतु वाराहं आग्नेयां गरुड़ध्वजः।
दक्षिणे पद्मनाभस्तु नैऋत्यां मधुसूदनः।
पश्चिमे चैव गोविन्दो वायव्यां तुजनार्दनः।
उत्तरे श्रीपती रक्षे दैशान्यां हि महेश्वरः।
ऊर्ध्वं रक्षतु धाता वो ह्यधोनन्तश्च रक्षतु।
अनुक्तमपि यत् स्थानं रक्षत्वीशो ममा द्रिधृक्।
अप सर्पन्तु ये भूतः भूताये भुवि संस्थिताः।
ये भूता विघ्न कर्तारस्ते गच्छन्तु शिवाज्ञया।
अपकामन्तु भूतानि पिशाचा : सर्वतो दिशम्।
सर्वेषाम विरोधेन यज्ञकर्म समारंभे।

यज्ञ भूमि का पञ्चभू-संस्कार

हवन करने से पूर्व भूमि का परिसमूहन, उपलेपन, उल्लेखन, उद्धारण तथा अभ्युक्षण इव पाँच संस्कारों द्वारा पवित्री करण, करने का विधान है, अस्तु भूमि का पंचभू संस्कार निम्न मंत्रों सहित क्रमशः इस प्रकार करें—

१. **परिसमूहन**—आचार्य अथवा कोई याज्ञिक हाथ में कुशाएँ लेकर हवन कुण्ड के आस पास की भूमि को निम्न मंत्र के साथ पूर्व से दक्षिण, दक्षिण से पश्चिम, पश्चिम से उत्तर और उत्तर से पूर्व इस क्रम से झाड़कर कुशाओं को यज्ञशाला से बाहर पूर्व या ईशान कोण दिशा में फेंक दें।

मंत्र—ॐ दर्भैःपरिसमूह्य परिसमूह्य ।

२. **उपलेपन**—अब गाय के गोबर से उसी दिशा क्रम से हवन कुण्ड के चारों ओर लीपें और इस मंत्र का उच्चारण करें।

मंत्र—ॐ गोमयेन उपलिप्य उपलिप्य उपलिप्य।

पश्चात् यज्ञशाला से बाहर जाकर हाथ धोकर भूमि में अधिदैविक तथा आध्यात्मिक तत्वों की जागृति के लिए उपलेखन करने का विधान है।

३. **उपलेखन**—दाएँ हाथ से स्रुवा द्वारा यज्ञ कुण्ड के चारों ओर पूर्वोक्त दिशाक्रम से तीन तीन रेखाएँ खींचें तथा निम्न मंत्र का भी तीन-तीन बार उच्चारण करें। उपरान्त स्रुवा को धोकर रख दें।

मंत्र—ॐ स्रूवमूलेन उल्लिख्य उल्लिख्य उल्लिख्य।

४. **उद्धारण**—अब ऊपर की मिट्टी को अनामिका उंगली व अंगूठे से उठाकर पूर्व दिशा में रखें तथा तीन बार निम्न मंत्र उच्चारें।

मंत्र—ॐ अनामिकांगुष्ठेन उद्धृत्य उद्धृत्य उद्धृत्य।

५. **अभ्युक्षण**—अंत में दाएँ हाथ से हवन कुण्ड के चारो ओर जल छिड़कते हुए निम्न मंत्र का उच्चारण करें :—

मंत्र—ॐ उदकेन अभ्युक्ष्य अभ्युक्ष्य अभ्युक्ष्य।

मेखला पूजन

अब कुण्ड का मेखला पूजन करने का विधान है। पहिली मेखला के देवता ब्रह्मा हैं, यह श्वेत रंग की ऊपर वाली मेखला है। दूसरी मध्य की लाल रंग की मेखला के देवता विष्णु हैं, और सब से नीचे वाली अंतिम मेखला के देवता रुद्र हैं, यह काले रंग की होती है। इन तीनों मेखलाओं का पूजन करके उक्त तीनों देवताओं तथा उनकी शक्तियों का आवाहन किया जाता है।

१- प्रथम मेखला पूजन मंत्र—(श्वेत)

ॐ ब्रह्मजज्ञानं प्रथम पुरस्याद्वि सीमतः सुरुचो वेनऽआवः स बुध्न्या ऽउपमाऽअस्य विष्ठा : सतश्च योनिमतश्च विव :। ॐ ब्रह्मणो नमः आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

२-मध्य मेखला पूजन मंत्र—(लाल)

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पद्म। समूढ़-मस्य पा ॐ सुरे स्वाहा ॐ विष्णवे नमः। आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

३ अन्तिम मेखला पूजन मंत्र—(काली)

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव ऽउतो तऽइषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः। ॐ रुद्राय नमः। आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि ध्यायामि।

कुश-काण्डिका स्थापनम्

अब इस मंत्र को पढ़कर यज्ञकुण्ड का चतुर्दिक वातावरण पवित्र रखने के लिए क्रमशः निम्न मंत्रोच्चार सहित पूर्व दक्षिण पश्चिम व उत्तर दिशाओं में कुश बिखेरने का विधान है।

१- इस मंत्र से पूर्व दिशा में कुश रखें—

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ता-क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो वृहस्पतिर्दधातु।

२- अब इस मंत्र को पढ़कर दक्षिण दिशा में कुश फेंकें—

ॐ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातर : शुभं यावानो विदथेषु जग्मय :। अग्नि जिह्वामनवः सूरचक्षसा विश्वे नो देवाऽअवसागमन्निह।

३- फिर निम्न मंत्र को पढ़कर पश्चिम दिशा में कुश फेंके—

ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रम्पश्येमाक्षभियजत्राः। स्थिरै रङ्गै स्तुष्टुवा ॐ सतनू भिर्व्य शेहि देवहितंयदभ्यः।

४- अन्त में इस मंत्र द्वारा उत्तर दिशा में कुश फेकें—

ॐ शत मिन्नु शरदोऽअन्ति देवायत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्यारोपिता युर्गान्तौ।

प्रोक्षण

अब यज्ञ में प्रयुक्त होने वाली समस्त वस्तुओं को पवित्र करने के लिए निम्न मंत्र पढ़कर उन पर जल छिड़कें। जल हाथ से

न छिड़क कर कुशाग्रों अथवा आम के पत्तों से छिड़कना चाहिए।

आपो हिष्ठा मयो भुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे। यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेहनः। उशतीरिव मातरः। तस्या अरंगमाम वो यस्यक्षयाय जिन्वथ। आपोजन यथा च नः। ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ता शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्।

अग्नि-स्थापन

हवन कुण्ड में छोटी छोटी समिधाएँ चिनकर उनके मध्य घी में तर की रुई या कपूर रखकर फिर निम्न मंत्रोच्चार सहित अग्नि देव का आवाहन करते हुए अग्नि प्रज्वलित करें—

ॐ भूर्भुवः स्व द्यौंखि भूम्ना पृथिवींवर्वरिम्ण। तस्यास्ते पृथिवि देव यजनिपृष्ठेऽग्रिमन्नादम न्नाद्यायादधे। अग्नि इतं पुरोदधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवांऽआ सादयादिह।

ॐ अग्नियें नमः। आवाहयामि स्थापयामि। इहागच्छ इह तिष्ठा। इत्या वाह्य पञ्चोपचारैः पूजयेत।

गायत्री स्तुति

सब उपस्थित जन हाथ जोड़ कर खड़े हों, और प्रेम विभोर हो गायत्री की इस प्रकार स्तुति गाएँ—

यन्मण्डल दीप्ति करं विशाल, रत्न प्रभम् तीव्रमनादि रूपम् ।
द्रारिद्रय दुःखक्षयकारणं च पुनातुमांतत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितम् विप्रैः स्तुतः मानव मुक्ति कोबिदम् ।
तं देवदेवं प्रणमामि भर्गः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मण्डलं गूढ़ यति प्रबोधम् धर्मस्य बुद्धि कुरुते जनानाम् ।
यत् सर्वं पापक्षय कारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मण्डलं व्याधि विनाश् दक्षम् यदृग् यजुः साम सुसम्प्र गीतम् ।
प्रकाशितं येन च भूर्भुवः स्वः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारण सिद्ध संघा : ।
सद्योगिनो योगजुषां च संघा पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मडलं सर्वजनेषु पूजितम् ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्य लोके ।
यत्यकाल कालादिमनादि रूपम् पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मडलं विष्णु वतुर्मुखास्यम् यदक्षरं पाप हरं जनानाम् ।
यत्काल कल्पक्षय कारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्धम् उत्पत्तिरक्षा प्रलयं प्रगल्भम ।
यस्मित् जगत् संहारते ऽखिलञ्च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यं ।

यन्मण्डलं सर्व मतस्य विष्णोः ह्यात्मा परं धाम विशुद्धतत्वम् ।
सूक्ष्मातिगैर्योगपथानुगम्यम्, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मण्डलं ब्रह्मविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारण सिद्धसंघाः ।
यन्मण्डलं वेदविदः स्मरन्ति पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

यन्मण्डलं वेदविदोपगीतम् यद्योगिनां योग पथानुगम्यम् ।
तत्सर्वं वेदं प्रणमामि दिव्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।

अग्नि प्रदीपन—गायत्री स्तुति के पश्चात् पंखा आदि झलकर तथा घी कपूर आदि डालकर अग्नि को निम्न मंत्र के साथ प्रदीप्त करें।

ॐ उद् बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते स ँ सृजेयामयं च। अस्मिन् सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत।

समिधास्थापनम्

पलाश आदि को चार समिधाएं जो कि लगभग आठ २ अङ्गुल की हों, घी में डुबो २ कर हवन कुण्ड में निम्न मंत्रों को पढ़ते हुए रखें—

ॐ अयंत इध्म आत्मा जात वेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व। चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशु भिर्ब्रह्मवर्चसे नाम्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेद से इदं न मम्।

(२) ॐ समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयता तिथिम्। अस्मिन हव्या जुहोतन स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम।

(३) ॐ सुमभिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्र जुहोतन। अग्नेय जातवेदसे स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेद इदं न मम।

(४) ॐ तत्वा समिद्भिरंगिरो घृतेन वर्धयामसि। वृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा। इदमग्नयेऽगिर से इदं न मम।

जल प्रसेचन

अब लकड़ी के पात्र में पवित्र जल भरकर आचमनी द्वारा हवन कुण्ड के चारों ओर विभिन्न दिशाओं में जल छोड़ने का विधान है। जल प्रसेचन के समय निम्न मन्त्रों का उच्चारण करें—

ॐ अदितेऽनुमन्येस्व। इति पूर्वे।

ॐ अनुमतेऽनुमन्यस्व। इति पश्चिमे।

ॐ सरस्वत्यनु मन्यस्व। इति उत्तरे।

ॐ देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केत नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदन्तु स्वाहा । इस मंत्र के साथ साथ यज्ञ कुण्ड के चारों ओर जल छोड़ें ।

आहुतियाँ

आज्याहुति होम के पश्चात् अब जितनी आहुतियाँ देने का संकल्प हो, उतनी आहुतियाँ गायत्री मंत्र के साथ दें । मंत्रोच्चारण इस प्रकार होना चाहिए—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा ।। इदं गायत्र्यै इदं न मम ।

स्विष्टकृत भोग

आहुति होम के पश्चात् समस्त देवी देवताओं की संतुष्टि के लिए पाँच पत्तलों में नैवेद्य, मिठाई, हलुवा, खीर, फल, तथा एक २ पत्तल में पाँच २ घी के दिए जलाकर क्रमशः पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश पाँचों देवताओं की वेदियों पर एक २ पत्तल रखकर आदर और भक्ति भाव से भोग लगावें, और निम्न मंत्रों का उच्चारण करें:—

१ पृथ्वी देवता की वेदी पर—

ॐ महीद्यौः ँ पृथिवी च न ऽ इमं यज्ञं मिमिक्षताम् ।
पिपृतां नो भरीमभिः । ॐ पृथिव्यै नमः ।

२ जल देवता की वेदी पर—

ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ।
अहेऽमानो वरुणेह बोध्युरुशं ँ स मा न ऽ आयुः प्रमोषीः ।

३ अग्नि देवता की वेदी पर—

ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान देवस्य हेडोऽअव यासिसीष्ठाः यजिष्ठो वह्नितमः शो शुचानो विश्वा द्वेषा ँ सि प्रमुमुग्ध्यस्मत् । ॐ अग्नये नमः ।

४ वायु देवता की वेदी पर—

ॐ आ नो नियुद्‌भिः शतनी भिरध्वरँ सहस्त्रिणी भिरूपः सदा नः। ॐ वायवे नमः।

५ आकाश देवता की वेदी पर—

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षतम्। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां तेषतेयोनिर्माध्वीभ्यां त्वा। ॐ आकाशाय नमः।

बलिदान संकल्प

यज्ञ के अन्त में बलिदान का विधान बताया गया है, किन्तु अनेक विद्वानों के मतानुसार यज्ञ जैसे पवित्र और कल्याणकारी कार्य में पशु वलि का अर्थ केवल पाशविक वृत्तियों का बलिदान है, जीवित पशुओं की बलि देकर जीव हिंसा जैसे जघन्य कृत्य से वेदोक्त बलिदान का अभिप्राय कदापि नहीं हो सकता। अस्तु समस्त याज्ञिकों को बुराइयों तथा पाशविक वृत्तियों का बलिदान और अच्छाइयों सद्‌गुणों को ग्रहण करने का व्रत सङ्कल्प लेना चाहिए। इसमें याज्ञिकों के साथ उपस्थित श्रद्धालुजन समुदाय को भी सम्मिलित करलें, तो सर्वोत्तम है।

स्विष्टकृत होम

हवन सामग्री से किए गए हवन के पश्चात् अन्त में यज्ञ व अग्नि देवता को प्रसन्न करने के लिए स्विष्टकृत होम का विधान बताया गया है। इसके लिए किसी चौड़े पात्र में खीर, हलुआ, मेवा, फल, मिष्ठान तथा घृत आदि भरकर निम्न मंत्र के साथ आहुति दें :—

ॐ यदस्य कर्मणोत्यरीरिचं यद्वान्यनमिहाकरम्। अग्निष्टत् स्विकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान्न कामान् समर्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते इदम मम।

पूर्णाहुति

यज्ञ की निर्विघ्न व सानन्द समाप्ति पर पूर्णाहुति देने का विधान है, जो कि यज्ञ सम्पन्न होने की परिचायक है। इसके लिए नारियल में छेद करके उसमें घी भरकर लाल कपड़ा कलावा आदि लपेटा जाता है तथा फूलों से सजाकर निम्न मंत्रोच्चारण सहित हवन कुण्ड में आहुति दी जाती है। साथ ही अन्य उपस्थित लोग भी नारियल अथवा सुपाड़ी अथवा हवन सामग्री हाथ में लेकर पूर्णाहुति के साथ २ आहुति देते हैं।

मंत्र—ॐ पूर्णं मदः पूर्णं मिदं पूर्णात् पूर्ण मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णं मादाय पूर्ण मेवा वशिष्यते।
पूर्णादर्वि परा यत सुपूर्णा पुनरापतः।
वस्नेव विक्रीणावहा इस मूर्ज ँशत क्रतो स्वाहा।
ॐ सर्वं वै पूर्णं ँ स्वाहा।
इदमग्नये वैश्वानराय। वसुरुद्रादित्येभ्यः
शतक्रतवे सप्तवते अग्नये इदं न मम।

वसोधारा

सबसे अन्त में घृत पात्र में बचे हुए समस्त घृत को हवन कुण्ड में निम्न मंत्र के साथ छोड़ दिया जाता है, इसी को वसोधारा कहते हैं।

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्त्र धारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु नमोः शवित्रेण शतधारेण सुखा कामधुक्षः स्वाहा।

स्तुति श्री यज्ञ भगवान की

हे यज्ञ रूप कृपालु भगवन् ज्ञान हमको दीजिए।
सत् धर्म औ सत् कर्म में मन बुद्धि प्रेरित कीजिए।
छल दम्भ काम विकार औ अज्ञान को हरिए प्रभो।
कल्याण सारे प्राणियों का विश्व में करिए प्रभो।
मिट जायं सब संताप भौतिक, शांति का विस्तार हो।
हर जीव हरि का भक्त हो चहुं ओर धर्म 'प्रसार हो।
रोग शोक दरिद्रता का नाम भी न रहे कहीं।
जब जब करें आह्वान हम, प्रभु आप तब प्रकटें वहीं।
प्रभु आप जन-जन के हृदय को प्रेम से भर दीजिए।
दुर्बुद्धि और दुष्कर्म सारे विश्व के हर लीजिए।
त्रुटियाँ हमारी हे दयामय सब क्षमा कर दीजिए।
इस पतित सेवक 'शुक्ल' को, स्वामी यही वर दीजिए।
जब तक जिएँ संसार में, प्रभु चरण में ही ध्यान हो।
सब पर कृपा हो आपकी, हर जीव का कल्याण हो।

बोलो—यज्ञ भगवान् की जय।

ॐ यं ब्रह्मवेदान्त विदो वदन्ति,
परमं प्रधानं पुरुषस्तथान्ये।
विश्वोद्गते कारण मीश्वरं वा,
तस्मै नमो विघ्न विनाशनाये।

ॐ यं ब्रह्मा वरुणेन्द्र रुद्रमरुत: स्तुन्वन्ति दिव्यै : स्तवै।
वेदै: सांगपदक्रमोमपनिषदैर्गायन्ति यं सामगा:।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो।
यस्यान्तं न विदु: सुरासुर गणा देवाय तस्मै नम:।

क्षमा प्रार्थना

आवाहनं न जानामि नैव पूजनम्,
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वरं ।
मंत्र हीनं भक्ति हीनं सुरेस्वरं,
यत्पूजितं मयादेवं परिपूर्णं तदस्तु मे ।
यदक्षर पद भ्रष्टं मात्रा हीनं च यद् भवेत्,
तत्सर्वं क्षम्यतां देवां प्रसीदं परमेश्वरम् ।
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञ-क्रिया दिषु,
न्यूनं सम्पूर्णतां यातिसद्योवन्देतमच्युतम् ।
प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत,
स्मरणादेव यद्विष्णोः सम्पूर्णः स्यादिति श्रुतिः ।

साष्टांग नमस्कार

नमोस्वान्ताय सहस्त्र्यमूर्तये सहस्त्र पादाक्षि शिरो रुवाहवे ।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शास्वते सहस्त्र कोटियुग धारिणे नमः ।
नमो ब्रह्मण्य देवाये गो ब्राह्मणा हिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ।

शुभ कामना

सब लोग मिलकर हाथ जोड़ कर समस्त विश्व के कल्याण की कामना करते हुए भगवान से याचना करें—

स्वस्ति प्रेजाभ्यः परिपालयन्तां न्यायेनमार्गेण मही महीशां । गोब्राह्मणेभ्यो शुभमस्तु नित्यं, लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ।१ ।। सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः । सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुखमाप्नुयात् ।

अपुत्राः पुत्रिणाः सन्तु पुत्रिणाः सन्तु पौत्रिणाः ।
निर्धनाः सधनः सन्तु जीवन्तु शरदां शतम् ।

श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टि श्रियम् बलम् ।
तेज मायुष्य मारोग्यं देहिमे हव्यवाहनम् ।

पुष्पाञ्जलि

सब श्रद्धा पूर्वक अञ्जुलि में पुष्प रखकर निम्न मंत्र के साथ भगवान को पुष्पाञ्जलि भेंट करें।

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रणमान्यासन् । ते ह नाकं महिमानः सचन्तयत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः । मन्त्र पुष्पाञ्जलि समर्पयामि ।

अभिषिञ्चन

आचार्य जी एक पात्र में जल लेकर कुश या आम के पत्ते से उपस्थित जन समुदाय पर निम्न मंत्र सहित जल छिड़कें। अभिषिञ्चन के समय सभी लोग मिलकर निम्न मंत्र का उच्चारण करें—

ॐ द्यौः शान्तिरण्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।

ॐ शान्तिः शान्ति शान्तिः सर्वारिष्ट सुशांतिर्भवतु ।

सूर्य अर्घ्य दान

उपरान्त आचार्य जी निम्न मंत्र के साथ सूर्य को अर्घ्य दान करें—

ॐ सूर्य देव सहस्त्र्यांशो तेजोराशे जगत्पते ।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्य दिवाकरः ।

प्रदक्षिणा

अन्त में सब लोग निम्न मंत्र के सहित अपने २ स्थान पर ही एक बार परिक्रमा करके पुनः अपनी २ पूर्व स्थिति में आजाएँ ।

यानिकानि च पापानि ज्ञाताज्ञात कृतानि च
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणा यां पदे पदे ।

विसर्जनम्

उपरान्त सब उपस्थित याज्ञिक श्रद्धा पूर्वक हाथ जोड़कर खड़े हों और निम्न मंत्रों का उच्चारण करते हुए हवन कुण्ड तथा वेदियों पर अक्षत छोड़कर समस्त देवी देवताओं का विसर्जन करें।

गच्छ त्वं भगवन्नग्ने स्वस्थाने कुण्ड-मध्यतः।
हुतमादाय देवेभ्यः शीघ्रं देहि प्रसीद मे।

गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठे स्वस्थाने परमेश्वरः।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशनः।

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्ट काम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च।

जय घोष

सब मिलकर ऊँचे स्वर से जय २ कार करें—

गायत्री माता की—जय हो, यज्ञ भगवान की—जय हो, वेद भगवान की—जय हो, धर्म की—जय हो, सत्य की—जय हो, विश्व का कल्याण हो, हर हर महादेव।

चमत्कारी कुण्डलिनी शक्ति

जय कमल प्रकाश

अग्रवाल

0081 W